अनुवाद सिद्धान्त

रूपरेखा एवं प्रयोगात्मक समस्याएँ

(Translation Theory: Framework and Experimental Problems)

अभिमन्यु सिंह

अनुवाद सिद्धांत : रूपरेखा एवं प्रयोगात्मक समस्याएँ

अनुवाद सिद्धांत : रूपरेखा एवं प्रयोगात्मक समस्याएँ

(Translation Theory: Framework and Experimental Problems)

अभिमन्यु सिंह

भाषा प्रकाशन
नई दिल्ली - 110002

© प्रकाशक

I.S.B.N. : 978-81-323-5591-5

प्रथम संस्करण : 2021

भाषा प्रकाशन

22, प्रकाशदीप बिल्डिंग, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - 110002

द्वारा वर्ल्ड टेक्नोलॉजीज नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित

प्रस्तावना

किसी भाषा में अभिव्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में यथावत् प्रस्तुत करना अनुवाद है। इस विशेष अर्थ में ही 'अनुवाद' शब्द का अभिप्राय सुनिश्चित है। जिस भाषा से अनुवाद किया जाता है, वह मूलभाषा या स्रोतभाषा है। उससे जिस नई भाषा में अनुवाद करना है, वह 'प्रस्तुत भाषा' या 'लक्ष्य भाषा' है। इस तरह, स्रोत भाषा में प्रस्तुत भाव या विचार को बिना किसी परिवर्तन के लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत करना ही अनुवाद है।

अनुवाद के विषय में सैद्धान्तिक चर्चा का सूत्रपात आधुनिक युग में ही हुआ, ऐसा समझना तथ्य और तर्क दोनों के ही विपरीत माना जाने लगा। अनुवाद कार्य की लम्बी परम्परा को देखते हुए यह मानना तर्कसंगत बन गया कि अनुवाद कार्य के विषय में सैद्धान्तिक चर्चा की परम्परा भी पुरानी है। ईसा पूर्व पहली शताब्दी में सिसरो के लेखन में अनुवाद चिन्तन के बीज प्राप्त होते हैं और तत्पश्चात् भी इस विषय पर विद्वान् अपने विचार प्रकट करते रहे हैं। इस चिन्तन की पृष्ठभूमि भी अवश्य रही है, यद्यपि उसे स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया गया। यह अवश्य माना गया कि जिस प्रकार अनुवाद कार्य का संगठित रूप में होना आधुनिक युग की देन है, उसी प्रकार अनुवाद सिद्धान्त की अपेक्षाकृत सुपरिभाषित पृष्ठभूमि का विकसित होना भी आधुनिक युग की देन है।

अनुवाद सिद्धान्त के आधुनिक सन्दर्भ की मूल विशेषता है इसकी बहुपक्षीयता। यह किसी एकान्वित पृष्ठभूमि पर आधारित न होकर अनेक परन्तु

परस्पर सम्बद्ध शास्त्रों की समन्वित पृष्ठभूमि पर आधारित है, जिनके प्रसंगोचित अंशों से वह पृष्ठभूमि निर्मित है। मुख्य शास्त्र हैं – पाठ संकेत विज्ञान, सम्प्रेषण सिद्धान्त, भाषा प्रयोग सिद्धान्त, और तुलनात्मक अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान। यह स्पष्ट करना भी उचित होगा कि एक ओर मानव अनुवाद तथा यान्त्रिक अनुवाद, तथा दूसरी ओर लिखित अनुवाद और मौखिक अनुवाद के व्यावहारिक महत्त्व के कारण इनके सैद्धान्तिक पक्ष के विषय में भी चिन्तन आरम्भ होने लगा है। तथापि मानवकृत लिखित माध्यम के अनुवाद की ही परिमाणगत तथा गुणात्मक प्रधानता मानी जाती रही है तथा इनसे सम्बन्धित सैद्धान्तिक चिन्तन के मुद्दे विशेष रूप से प्रासगिक हैं।

यद्यपि प्राचीन भारतीय परम्परा में अनुवाद चिन्तन की परम्परा उतने व्यवस्थित तथा लेखबद्ध रूप में प्राप्त नहीं होती, जिस प्रकार पश्चिम में, तथापि अनुवाद चिन्तन के बीज अवश्य उपलब्ध हैं। तदनुसार, अनुवाद पुनरुक्ति है – एक भाषा में व्यंजित सन्देश को दूसरी भाषा में पुनः कहना। अनुवाद के प्रति यह दृष्टि पश्चिमी परम्परा में स्वीकृत धारणा से बाह्य स्तर पर ही भिन्न प्रतीत होती है। परन्तु इस दृष्टि को अपनाने से अनुवाद सम्बन्धी अनेक सैद्धान्तिक बिन्दुओं की अधिक विशद् तथा संगत व्याख्या की गई है। इसी सम्बन्ध में दूसरी दृष्टि द्वन्द्वात्मकता की है जो आधुनिक है तथा मुख्य रूप से संरचनावाद की देन है।

पुस्तक लेखन में कई लिखित व अलिखित स्रोतों से मदद ली गई है; मैं उन सभी विज्ञ लेखकों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ। आशा करता हूँ कि पुस्तक पाठकों के लिए उपयोगी होगी।

–लेखक

अनुक्रम

	प्रस्तावना	*v*
1.	**अनुवाद**	**1**
	इतिहास	2
	पृष्ठभूमि	3
	सामयिक सन्दर्भ	4
	आधुनिक परम्परा	8
	अनुवाद की परिभाषा	9
	अनुवाद	13
	अनुवाद की समस्याएँ और समाधान	15
	पाश्चात्य चिन्तन	16
	प्रवृत्तिमूलक अर्थ	25
	सामाजिक एवं व्यावहारिक महत्त्व	29
	शैक्षणिक एवं ज्ञानात्मक महत्त्व	30
	विविध शास्त्रों का ज्ञान	36
	व्याख्यानुवाद	39
	अनुवाद सिद्धान्त का विकास	42
	अनुवाद की प्रक्रिया	45
	सामान्य सन्दर्भ	48

नाइडा का चिन्तन 49
न्यूमार्क का चिन्तन 55
बाथगेट का चिन्तन 57
अनुवाद प्रक्रिया की प्रकृति 60
अनुवाद परिवृत्ति 64
अनुवाद–परिवृत्ति की संकल्पना 65
निष्कर्ष 72
2. अनुवाद के प्रकार और प्रकृति 83
अनुवाद के प्रकार 83
साहित्य विधा पर आधारित प्रभेद 84
अनुवाद की प्रकृति 88
3. अनुवाद की महत्ता एवं आवश्यकता 93
अनुवाद की आवश्यकता 96
व्यवसाय के रूप में अनुवाद की आवश्यकता 99
4. अनुवाद की प्रक्रिया, स्वरूप एवं सीमाएँ 101
अनुवाद के स्वरूप 101
अनुवाद का सीमित स्वरूप 101
अनुवाद की सीमाएँ 107
अनुवाद की भाषापरक सीमाएँ 108
5. अनुवाद एवं भाषाविज्ञान 111
भाषा का अनुवाद और अनुवाद की भाषा 112
अनुवाद और अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान 113
भाषाविज्ञान एवं अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान 116
अनुवाद एवं व्यतिरेकी भाषाविज्ञान 117
अनुवाद एवं ध्वनिविज्ञान 117
अनुवाद की उपादेयता 127
अनुवाद और भाषाविज्ञान का अंत:संबंध 130
अनुवाद और ध्वनि विज्ञान 133
6. साहित्य तथा साहित्येतर अनुवाद की समस्याएँ 145
साहित्य अनुवाद व उससे जुड़ी समस्याएं 145

7. अनुवाद की चुनौतियां **154**
भाषाई चुनौतियां 155
तकनीकी चुनौतियां 158
8. अनुवाद का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य **161**

1

अनुवाद

किसी भाषा में कही या लिखी गयी बात का किसी दूसरी भाषा में सार्थक परिवर्तन अनुवाद (Translation) कहलाता है। अनुवाद का कार्य बहुत पुराने समय से होता आया है।

संस्कृत में 'अनुवाद' ' शब्द का उपयोग शिष्य द्वारा गुरु की बात के दुहराए जाने, पुनः कथन, समर्थन के लिए प्रयुक्त कथन, आवृत्ति जैसे–कई संदर्भों में किया गया है। संस्कृत के 'वद्' धातु से 'अनुवाद' शब्द का निर्माण हुआ है। 'वद्' का अर्थ है बोलना। 'वद्' धातु में 'अ' प्रत्यय जोड़ देने पर भाववाचक संज्ञा में इसका परिवर्तित रूप है 'वाद' जिसका अर्थ है- 'कहने की क्रिया' या 'कही हुई बात'। 'वाद' में 'अनु' उपसर्ग जोड़कर 'अनुवाद' शब्द बना है, जिसका अर्थ है, प्राप्त कथन को पुनः कहना। इसका प्रयोग पहली बार मोनियर विलियम्स ने अँग्रेजी शब्द ट्रांसलेशन (translation) के पर्याय के रूप में किया। इसके बाद ही 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग एक भाषा में किसी के द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री की दूसरी भाषा में पुनः प्रस्तुति के संदर्भ में किया गया।

वास्तव में अनुवाद भाषा के इन्द्रधनुषी रूप की पहचान का समर्थतम मार्ग है। अनुवाद की अनिवार्यता को किसी भाषा की समृद्धि का शोर मचा कर टाला नहीं जा सकता और न अनुवाद की बहुकोणीय उपयोगिता से इन्कार किया जा सकता है। TRANSLATION के पर्यायस्वरूप 'अनुवाद' शब्द का स्वीकृत अर्थ है, एक भाषा की विचार सामग्री को दूसरी भाषा में पहुँचना। अनुवाद के

लिए हिंदी में 'उल्था' का प्रचलन भी है।अँग्रेजी में TRANSLATION के साथ ही TRANSCRIPTION का प्रचलन भी है, जिसे हिंदी में 'लिप्यन्तरण' कहा जाता है। अनुवाद और लिप्यंतरण का अंतर इस उदाहरण से स्पष्ट है–

उसके सपने सच हुए।

HIS DREAMS BECAME TRUE – TRANSLATION

USKEY SAPNE SACH HUEY & TRANSCRIPTION

इससे स्पष्ट है कि 'अनुवाद' में हिंदी वाक्य को अँग्रेजी में प्रस्तुत किया गया है जबकि लिप्यंतरण में नागरी लिपि में लिखी गयी बात को मात्र रोमन लिपि में रख दिया गया है।

अनुवाद के लिए 'भाषांतर' और 'रूपांतर' का प्रयोग भी किया जाता रहा है। लेकिन अब इन दोनों ही शब्दों के नए अर्थ और उपयोग प्रचलित हैं। 'भाषांतर' और 'रूपांतर' का प्रयोग अँग्रेजी के INTERPRETATION शब्द के पर्याय-स्वरूप होता है, जिसका अर्थ है दो व्यक्तियों के बीच भाषिक संपर्क स्थापित करना। कन्नड़भाषी व्यक्ति और असमियाभाषी व्यक्ति के बीच की भाषिक दूरी को भाषांतरण के द्वारा ही दूर किया जाता है। 'रूपांतर' शब्द इन दिनों प्राय: किसी एक विधा की रचना की अन्य विधा में प्रस्तुति के लिए प्रयुक्त है। जैस, प्रेमचन्द के उपन्यास 'गोदान' का रूपांतरण 'होरी' नाटक के रूप में किया गया है।

किसी भाषा में अभिव्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में यथावत् प्रस्तुत करना अनुवाद है। इस विशेष अर्थ में ही 'अनुवाद' शब्द का अभिप्राय सुनिश्चित है। जिस भाषा से अनुवाद किया जाता है, वह मूलभाषा या स्रोतभाषा है। उससे जिस नई भाषा में अनुवाद करना है, वह 'प्रस्तुत भाषा' या 'लक्ष्य भाषा' है। इस तरह, स्रोत भाषा में प्रस्तुत भाव या विचार को बिना किसी परिवर्तन के लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत करना ही अनुवाद है।

इतिहास

अनुवाद असाधारण रूप से कठिन और आद्ववाहनात्मक कार्य माना जाता है। यह एक जटिल, कृत्रिम, आवश्यकता-जनित, और एक दृष्टि से सर्जनात्मक प्रक्रिया है जिसमें असाधारण और विशिष्ट कोटि की प्रतिभा की आवश्यकता होती है। यह इसकी अपनी प्रकृति है। परन्तु माना जाता है कि मौलिक लेखन न होने के कारण अनुवाद को सम्मान का स्थान नहीं मिलता है। क्योंकि इस बात

की अवगणना होती है कि अनुवाद इसीलिए कठिन है कि वह मौलिक लेखन नहीं–पहले कही गई बात को ही दुबारा कहना होता है, जिसमें अनेक नियन्त्राणों और बन्धनों का पालन करना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार अमौलिक होने के कारण अनुवाद का महत्त्व तो कम हो गया, परन्तु इसी कारण इसके लिए अपेक्षित नियन्त्रणों और बन्धनों को महत्त्वपूर्ण नहीं समझा गया। इस सम्बन्ध में सृजनशील लेखकों के विचारों की प्रायः चर्चा होती रही है। कुछ विचार इस प्रकार हैं–

(क) सम्पूर्ण अनुवाद कार्य केवल एक असमाधेय समस्या का समाधान खोजने के लिए किया गया प्रयास मात्र है। (हुम्बोल्त)

(ख) किसी कृति का अनुवाद उसके दोषों को बढ़ा देता है और उसके गुणों को विद्रूप कर देता है। (वाल्तेयर)

(ग) कला की एक विधा के रूप में अनुवाद कभी सफल नहीं हो सकते। (चक्रवर्ती राजगोपालाचारी)

(घ) अनुवादक वंचक होते हैं। (एक इतालवी कहावत)।

ऐसे विचारों के उद्‌भव के पीछे तत्कालीन परिस्थितियाँ तथा उनसे प्रेरित धारणाएँ मानी जाती हैं। पहले अनुवाद सामग्री का बहुलांश साहित्यिक रचनाएँ होती थीं, जिनका अनुवाद रचनाओं की साहित्यिक प्रकृति की सीमाओं के कारण पाठक की आशा के अनुरूप नहीं हो पाता था। साथ ही यह भी धारणा थी कि रचना की भाषा के प्रत्येक अंश का अनुवाद अपेक्षित है, जिससे मूल संवेदना का कोई अंश छट न पाए, और क्योंकि यह सम्भव नहीं, अतः अनुवाद को प्रवचन की कोटि में रख दिया गया था।

पृष्ठभूमि

यह स्थिति स्थूल रूप से उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक रही जिसमें अनुवाद मुख्य रूप से व्यक्तिगत रुचि से प्रेरित अधिक था, सामाजिक आवश्यकता से प्रेरित कम। इसके अतिरिक्त मौलिक लेखन की परिमाणगत प्रचुरता के कारण भी इस प्रकार की राय बनी। दूसरे विश्वयुद्ध के पश्चात् साम्राज्यवाद के खण्डित होने के फलस्वरूप अनेक छोटे–बड़े राष्ट्र स्वतन्त्र हुए तथा उनकी अस्मिता का प्रश्न महत्त्वपूर्ण हो गया। संघीय गणराज्यों के घटक भी अपनी अस्मिता के विषय में सचेत होने लगे। इस सम्पर्क–स्थापना तथा अस्मिता–विकास की स्थिति में भाषा का केन्द्रीय स्थान है, जो बहुभाषिकता की

स्थिति के रूप में दिखाई पड़ता है। इसमें अनुवाद की सत्ता अवश्यम्भावी है। इसके फलस्वरूप अनुवाद प्रधान रूप से एक सामाजिक आवश्यकता बन गया है। विविध प्रकार के लेखनों के अनुवाद होने लगे। अनुवाद कार्य एक व्यवसाय हो गया। अनुवादकों को प्रशिक्षित करने के अभिकरण स्थापित हो गए, जिनमें अल्पकालीन और पूर्णसत्रीय पाठ्यक्रमों और कार्यशालाओं आदि का आयोजन किया जाने लगा। इसका यह भी परिणाम हुआ कि एक ओर तो अनुवाद के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण बदला तथा दूसरी ओर ज्ञानात्मक दृष्टि से अनुवाद सिद्धान्त के विकास को विशेष बल मिला तथा अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के लिए अनुवाद सिद्धान्त की आवश्यकता को स्वीकार किया गया। फलस्वरूप, अनुवाद सिद्धान्त एक अपेक्षाकृत स्वतन्त्र ज्ञानशाखा बन गया, जिसकी जानकारी अनुवादक, अनुवाद शिक्षक, और अनुवाद समीक्षक, तीनों के लिए उपादेय हुआ।

सामयिक सन्दर्भ

अनुवाद के विषय में सैद्धान्तिक चर्चा का सूत्रपात आधुनिक युग में ही हुआ, ऐसा समझना तथ्य और तर्क दोनों के ही विपरीत माना जाने लगा। अनुवाद कार्य की लम्बी परम्परा को देखते हुए यह मानना तर्कसंगत बन गया कि अनुवाद कार्य के विषय में सैद्धान्तिक चर्चा की परम्परा भी पुरानी है। ईसा पूर्व पहली शताब्दी में सिसरो के लेखन में अनुवाद चिन्तन के बीज प्राप्त होते हैं और तत्पश्चात् भी इस विषय पर विद्वान् अपने विचार प्रकट करते रहे हैं। इस चिन्तन की पृष्ठभूमि भी अवश्य रही है, यद्यपि उसे स्पष्ट रूप से पारिभाषित नहीं किया गया। यह अवश्य माना गया कि जिस प्रकार अनुवाद कार्य का संगठित रूप में होना आधुनिक युग की देन है, उसी प्रकार अनुवाद सिद्धान्त की अपेक्षाकृत सुपरिभाषित पृष्ठभूमि का विकसित होना भी आधुनिक युग की देन है।

अनुवाद सिद्धान्त के आधुनिक सन्दर्भ की मूल विशेषता है इसकी बहुपक्षीयता। यह किसी एकान्वित पृष्ठभूमि पर आधारित न होकर अनेक परन्तु परस्पर सम्बद्ध शास्त्रों की समन्वित पृष्ठभूमि पर आधारित है, जिनके प्रसंगोचित अंशों से वह पृष्ठभूमि निर्मित है। मुख्य शास्त्र हैं – पाठ संकेत विज्ञान, सम्प्रेषण सिद्धान्त, भाषा प्रयोग सिद्धान्त, और तुलनात्मक अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान। यह स्पष्ट करना भी उचित होगा कि एक ओर मानव अनुवाद तथा यान्त्रिक अनुवाद, तथा दूसरी ओर लिखित अनुवाद और मौखिक अनुवाद के व्यावहारिक महत्त्व के कारण इनके सैद्धान्तिक पक्ष के विषय में भी चिन्तन आरम्भ होने लगा है। तथापि

मानवकृत लिखित माध्यम के अनुवाद की ही परिमाणगत तथा गुणात्मक प्रधानता मानी जाती रही है तथा इनसे सम्बन्धित सैद्धान्तिक चिन्तन के मुद्दे विशेष रूप से प्रासगिक हैं।

यद्यपि प्राचीन भारतीय परम्परा में अनुवाद चिन्तन की परम्परा उतने व्यवस्थित तथा लेखबद्ध रूप में प्राप्त नहीं होती, जिस प्रकार पश्चिम में, तथापि अनुवाद चिन्तन के बीज अवश्य उपलब्ध हैं। तदनुसार, अनुवाद पुनरुक्ति है – एक भाषा में व्यंजित सन्देश को दूसरी भाषा में पुनः कहना। अनुवाद के प्रति यह दृष्टि पश्चिमी परम्परा में स्वीकृत धारणा से बाह्य स्तर पर ही भिन्न प्रतीत होती है। परन्तु इस दृष्टि को अपनाने से अनुवाद सम्बन्धी अनेक सैद्धान्तिक बिन्दुओं की अधिक विशद तथा संगत व्याख्या की गई है। इसी सम्बन्ध में दूसरी दृष्टि द्वन्द्वात्मकता की है। जो आधुनिक है तथा मुख्य रूप से संरचनावाद की देन है।

अनुवाद कार्य की परम्परा को देखने से यह स्पष्ट है कि अनवाद सिद्धान्त सम्बन्धी चिन्तन साहित्यिक कृतियों को लेकर ही अधिक हुआ है। यह स्थिति संगत भी है। विगत युग में साहित्यिक कृतियों को ही अनुवाद के लिए चुना जाता था। अब भी साहित्यिक कृतियों के ही अनुवाद अधिक परिमाण में होते हैं। तथापि, परिस्थितियों के अनुरोध से अब साहित्येतर लेखन का अनुवाद भी अधिक मात्रा में होने लगा है। विशेष बात यह है कि दोनों कोटियों के लेखनों में एक मूलभूत अन्तर है। जिसे लेखक की व्यक्तिनिष्ठता तथा निर्वैयक्तिकता की शब्दावली में अधिक स्पष्ट रीति से प्रकट कर सकते हैं। व्यक्तिनिष्ठ लेखन का, अपनी प्रकृति की विशेषता से, कुछ अपना ही सन्दर्भ है। यह कहकर हम दोनों की उभयनिष्ठ पृष्ठभूमि का निषेध नहीं कर रहे, परन्तु प्रस्तुत सन्दर्भ में हम दोनों की दूरी और आपेक्षिक स्वायत्तता को विशेष रूप से उभारना चाहते हैं। यह उचित ही है कि भाषाप्रयोग के पक्ष से निर्वैयक्तिक लेखन के अनुवाद के सैद्धान्तिक सन्दर्भ को भी विशेष रूप से उभारा जाए।

विस्तार

अनुवाद सिद्धान्त का एक विकासमान आयाम है अनुसन्धान की प्रवृत्ति। अनुवाद सिद्धान्त की बहुविद्यापरक प्रकृति के कारण विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ–भाषाविज्ञानी, समाजशास्त्री, मनोविज्ञानी, शिक्षाविद्, नृतत्त्वविज्ञानी, सूचना सिद्धान्त विशेषज्ञ–परस्पर सहयोग के साथ अनुवाद के सैद्धान्तिक अंशो पर

शोधकार्य में रुचि लेने लगे। अनुवाद कार्य का क्षेत्र बढ़ता गया। अलग-अलग संस्कृतियों के लोगों में सम्पर्क बढ़ा - लोग विदेशों में शिक्षा के लिए जाते, व्यापारिक-औद्योगिक संगठन विभिन्न देशों में काम करते, विभिन्न भाषा भाषी लोग सम्मेलनों में एक साथ बैठकर विमर्श करते, राष्ट्रों के मध्य राजनयिक अनुबन्ध होने लगे। इन सभी में अनुवाद की अनिवार्य रूप से आवश्यकता प्रतीत हुई और अनुवाद की विशिष्ट समस्याएँ उभरने लगी। इन समस्याओं का अध्ययन अनुवाद सम्बन्धी अनुसन्धान का उर्वर क्षेत्र बना। एक ओर भाषा और संस्कृति तथा दूसरी ओर भाषा और विचार के मध्य सम्बन्ध पर अनुवाद द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर नया चिन्तन सामने आया।

मशीन अनुवाद तथा मौखिक अनुवाद के क्षेत्रों में नई-नई सम्भावनाएँ सामने आने लगी, जिसने इन क्षेत्रों में अनुवाद अनुसन्धान को गति प्रदान की। मानव अनुवाद तथा लिखित अनुवाद के परम्परागत क्षेत्रों पर भी भाषा अध्ययन की नई दृष्टियों ने विशेषज्ञों को नूतन पद्धति से विचार करने के लिए प्रेरित किया। इन सब प्रवृत्तियों से अनवाद सिद्धान्त को प्रतिष्ठा का पद मिलने लगा और इसे सैद्धान्तिक शोध के एक उपयुक्त क्षेत्र के रूप में स्वीकृति प्राप्त होने लगी।

अनुवाद दशा में पहला सार्थक प्रयास एच. एच. विल्सन ने 155 में 'ग्लोरी ऑफ ज्यूडिशियल एंड रेवेन्यू टर्म्स' के द्वारा किया। सन् 1961 में राजभाषा विधायी आयोग की स्थापना हुई। इसका काम अखिल भारतीय मानक विधि शब्दावली तैयार करना था। 1970 में विधि शब्दावली का प्रकाशन हुआ। इसका परिवर्धन होता आ रहा हे। इसका नवीन संस्करण 1984 में निकला। इस आयोग ने कानून संबंधी अनेक ग्रंथो का अनुवाद किया हे। कई न्यायालयों में न्यायाधीश हिंदी में भी निर्णय देने लगे है।

अनुवादक

अनुवादक (translator) का कार्य स्रोतभाषा के पाठ को अर्थपूर्ण रूप से लक्ष्यभाषा में अनूदित करता है। अनुवाद का कार्य अन्ततोगत्वा एक ही व्यक्ति करता है। एकाकी अनुवाद में तो अनुवादक अकेला होता ही है, सहयोगात्मक अनुवाद में भी, अन्तिम भाग में, सम्पादन का काम अनुवादक को अकेले करना होता है। अतः अनुवादक के साथ अनेक दायित्व जुड़ जाते हैं और कार्य के सफल निष्पादन में उससे अनेक अपेक्षाएं रहती हैं। भाषा ज्ञान, विषय ज्ञान,

अभिव्यक्ति कौशल, व्यक्तिगत गुण आदि की दृष्टि से अनुवादक से होने वाली अपेक्षाओं पर विचार करना होता हैं।

एक अच्छा अनुवादक वह है, जो–

स्रोत भाषा (जिससे अनुवाद करना है) के लिखित एवं वाचिक दोनों रूपों का अच्छा ज्ञाता हो।

लक्ष्य भाषा (जिसमें अनुवाद करना है) के लिखित रूप का अच्छा ज्ञाता हो,

पाठ जिस विषय या टॉपिक का है, उसकी जानकारी रखता हो।

अनुवाद की परम्परा

अनुवाद की परम्परा बहुत पुरानी है। बेबल के मीनार (Tower of Babel) की कथा प्रसिद्ध ही है, जो इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि, मानव समाज में अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। यह तर्कसंगत रूप से अनुमान किया जा सकता है कि पारस्परिक सम्पर्क की सामाजिक अनिवार्यता के कारण अनुवाद व्यवहार का जन्म भी बहुत पहले हो गया होगा। परन्तु जहाँ तक लिखित प्रमाणों का सम्बन्ध है, अनुवाद परम्परा के आरम्भिक बिन्दु का प्रमाण ईसा से तीन सहस्र वर्ष पहले प्राचीन मिस्र के राज्य में, द्विभाषिक शिलालेखों के रूप में मिलता है।

तत्पश्चात् ईसा से तीन सौ वर्ष पूर्व रोमन लोगों के ग्रीक लोगों के सम्पर्क में आने पर ग्रीक से लैटिन में अनुवाद हुए।

बारहवीं शताब्दी में स्पेन में इस्लाम के साथ सम्पर्क होने पर यूरोपीय भाषाओं में अरबी से अनुवाद हुए।

बृहत् स्तर पर अनुवाद तभी होता है, जब दो भिन्न भाषाभाषी समुदायों में दीर्घकाल पर्यन्त सम्पर्क बना रहे तथा उसे सन्तुलित करने के प्रयास के अन्तर्गत अल्प विकसित संस्कृति के लोग सुविकसित संस्कृति के लोगों के साहित्य का अनुवाद कर अपने साहित्य को समृद्ध करें। ग्रीक से लैटिन में और अरबी से यूरोपीय भाषाओं में प्रचर अनुवाद इसी प्रवृत्ति के परिणाम माने जाते हैं। अनुवाद कार्य को इतिहास की प्रवृत्तियों की दृष्टि से दो भागों में विभाजित किया जाता है – प्राचीन और आधुनिक।

प्राचीन परम्परा

प्राचीन युग में मुख्यत: तीन प्रकार की रचनाओँ के अनुवाद प्राप्त होते हैं। क्योंकि इन तीन क्षेत्रों में ही प्राय: ग्रन्थों की रचना होती थी। वें क्षेत्र हैं – साहित्य, दर्शन और धर्म। साहित्यिक रचनाओं में ग्रीक के इलियड और ओडेसी, संस्कृत के रामायण और महाभारत ऐसे ग्रन्थ हैं, जिनका व्यापक स्तर अनुवाद हुआ। दार्शनिक रचनाओं में प्लेटो के संवाद, अनुवाद की दृष्टि से लोकप्रिय हुए। धार्मिक रचनाओं में बाइबिल के सबसे अधिक अनुवाद पाए जाते हैं।

आधुनिक परम्परा

आधुनिक युग में अनुवाद के माध्यम से प्राचीन युग के ये महान ग्रन्थ अब विभिन्न भाषा भाषियों को उपलब्ध होने लगे हैं। अनुवाद तकनीक की दृष्टि से इन अनुवादों की विशेषता यह है कि, प्राचीन युग में ये अनुवाद विशेष रूप से एकपक्षीय रूप में होते थे अर्थात् जिस भाषा में अनुवाद किए जाते थे (= लक्ष्यभाषा) उनसे उनकी किसी रचना का मूल ग्रन्थ भाषा (= मूलभाषा या स्रोत भाषा) में अनुवाद नहीं होता था। इसका कारण यह कि मूल ग्रन्थों की तुलना में लक्ष्यभाषा के ग्रन्थ प्राय: उतने उत्कृष्ट नहीं होते थे, दूसरी बात यह कि मूल ग्रथों की भाषा के प्रति अत्यन्त आदर भावना के कारण लक्ष्य भाषा के रूप में प्रयोग में लाना सम्भवत: अनुचित समझा जाता था।

आधुनिक युग में अनुवाद का क्षेत्र विस्तृत हो गया है। उपर्युक्त तीन के अतिरि विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्साशास्त्रा, प्रशासन, कूटनीति, विधि, जनसम्पर्क (समाचार पत्र इत्यादि) तथा अन्य अनेक क्षेत्रों के ग्रन्थों और रचनाओं का अनवाद भी होने लगा है। प्राचीन युग के अनुवादों की तुलना में आधुनिक युग के अनुवाद द्विपक्षीय (बहुपक्षीय) रूप में होते हैं। आधुनिक युग में अनुवाद का आर्थिक और राजनीतिक महत्त्व भी प्रतिष्ठित हो गया है। विभिन्न राष्ट्रों के मध्य राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अनुबन्धों के प्रपत्र के द्विभाषिक पाठ तैयार किए जाते हैं। बहुराष्ट्रीय संस्थाओं को एक से अधिक भाषाओं का प्रयोग करना पड़ता है। संयुक्त राष्ट्र में प्रत्येक कार्य पाँच या छ: भाषाओं में किया जाता है। इन सब में अनिवार्य रूप से अनुवाद की आवश्यकता होती है।

इस स्थिति का औचित्य भी है। आधुनिक युग में हुई औद्योगिक, प्रौद्योगिक, आर्थिक और राजनीतिक क्रान्ति के फलस्वरूप विश्व के राष्ट्रों में एक-दूसरे के निकट सम्पर्क की आवश्यकता की चेतना का अतीव शीघ्र

विकास हुआ, उसके कारण अनुवाद को यह महत्त्व मिलना स्वाभाविक माना जाता है। यही कारण है कि यदि प्राचीन युग की प्रेरक शक्ति अनुवादक की व्यक्तिगत रुचि अधिक थी, तो आधुनिक युग में अनुवाद की सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक आवश्यकता एक प्रबल प्रेरक शक्ति बनकर सामने आई है। इस स्थिति के अनेक उदाहरण मिलते हैं। भाषायी अल्पसंख्यक वर्ग के लेखकों की रचनाएँ दूसरी भाषाओं में अनूदित होकर अधिक पढ़ी जाती हैं। अपेक्षाकृत छोटे तथा बहुभाषी राष्ट्रों को अपने देश के भीतर ही विभिन्न भाषाभाषी समुदायों के मध्य सम्पर्क स्थापित करने की समस्या का सामना करना पड़ता है।

सामाजिक आवश्यकता के अनुरूप अनुवाद के इस महत्त्व के कारण अनुवाद कार्य अब संगठित रूप से होता देखा जाता है। राजनीतिक-आर्थिक कारणों से उत्पन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनुवाद अब एक व्यवसाय बन चुका है तथा व्यक्तिगत होने के साथ-साथ उसका संगठनात्मक रूप भी प्रतिष्ठित होता दिखता है। अनुवाद कौशल को सिखाने के लिए शिक्षा संस्थाओं में प्रबन्ध किए जाते हैं तथा स्वतन्त्र रूप से भी प्रशिक्षण संस्थान काम करते हैं।

व्याख्याएँ

ज्ञातस्य कथनमनुवाद–ज्ञात का (पुनः) कथन अनुवाद है। (जैमिनिन्यायमाला)

प्राप्तस्य पुनः कथने*नुवादः–पूर्वकथित का पुनः कथन अनुवाद है। (शब्दार्थचिन्तामणिः)

आवृत्तिनुवादो वा - पुनरावर्तन ही अनुवाद है। (भर्तृहरि)

लेखक होना सरल है, किन्तु अनुवादक होना अत्यन्त कठिन है। - मामा वरेरकर

प्रत्येक कृति अनुवाद योग्य है, परन्तु प्रत्येक कृति का अच्छा अनुवाद नहीं किया जा सकता। -खुशवन्त सिंह

अनुवाद, प्रकाश के आने के लिए वातायन खोल देता है, वह छिलके को छोड़ देता है जिससे हम गूदे का स्वाद ले सकें। - बाइबिल

अनुवाद की परिभाषा

एक विशिष्ट प्रकार के भाषिक व्यापार के रूप में अनुवाद, भारतीय परम्परा की दृष्टि से, कोई नई बात नहीं। वस्तुतः 'अनुवाद' शब्द और उससे

उपलक्षित भाषिक व्यापार भारतीय परम्परा में बहुत पहले से चले आए हैं। अत: 'अनुवाद' शब्द और इसके अंग्रेजी पर्याय 'ट्रांसलेशन' के व्युत्पत्तिमूलक और प्रवृत्तिमूलक अर्थों की सहायता से अनुवाद की परिभाषा और उसके स्वरूप को श्रेष्ठतर रूप से जाना जा सकता है।

भारत में अनुवाद की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। कहते हैं अनुवाद उतना ही प्राचीन जितनी कि भाषा। आज 'अनुवाद' शब्द हमारे लिए कोई नया शब्द नहीं है। विभिन्नभाषायी मंच पर, साहित्यिक पत्रिकाओं में, अखबारों में तथा रोजमर्रा के जीवन में हमें अक्सर 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग देखने-सुनने को मिलता है। साधारणत: एक भाषा-पाठ में निहित अर्थ या संदेश को दूसरे भाषा-पाठ में यथावत् व्यक्त करना अर्थात् एक भाषा में कही गई बात को दूसरी भाषा में कहना अनुवाद है। परंतु यह कार्य उतना आसान नहीं, जितना कहने या सुनने में जान पड़ रहा है। दूसरा, अनुवाद सिद्धांत की चर्चा करना और व्यावहारिक अनुवाद करना-दो भिन्न प्रदेशों से गुजरने जैसा है, फिर भी इसमेंकोई दो राय नहीं कि अनुवाद के सिद्धांत हमें अनुवाद कर्म की जटिलताओं से परिचित कराते हैं। फिर, किसी भी भाषा के साहित्य में और ज्ञान-विज्ञानके क्षेत्र में जितना महत्त्व मूल लेखन का है, उससे कम महत्त्व अनुवाद का नहीं है। लेकिन सहज और संप्रेषणीय अनुवाद मूल लेखन से भी कठिन कामहै। भारत जैसे–बहुभाषी देश के लिए अनुवाद की समस्या और भी महत्त्वपूर्ण है। इसकी जटिलता को समझना अपने आप में बहुत बड़ी समस्या है।

अनुवाद का अर्थ

अनुवाद एक भाषिक क्रिया है। भारत जैसे–बहुभाषा-भाषी देश में अनुवाद का महत्त्व प्राचीन काल से ही स्वीकृत है। आधुनिक युग में जैसे-जैसे–स्थान और समय की दूरियाँ कम होती गईं वैसे-वैसे द्विभाषिकता की स्थितियों और मात्रा में वृद्धि होती गई और इसके साथ-साथ अनुवाद कामहत्त्व भी बढ़ता गया। अन्यान्य भाषा-शिक्षण में अनुवाद विधि का प्रयोग नकेवल पश्चिमी देशों में वरन् पूर्वी देशों में भी निरन्तर किया जाता रहा है। बीसवीं शताब्दी में देशों के बीच दूरियाँ कम होने के परिणामस्वरूप विभिन्नवैचारिक धरातलों और आर्थिक, औद्योगिक स्तरों पर पारस्परिक भाषिक विनिमय बढ़ा है और इस विनिमय के साथ-साथ अनुवाद का प्रयोग और अधिक किया जाने लगा है। बहरहाल, अनुवाद की प्रक्रिया, प्रकृति एवं पद्धति को समझने के लिए 'अनुवाद क्या है

?' जानना बहुत जरूरी है। चर्चा की शुरुआत 'अनुवाद' के अर्थ एवं परिभाषा' से करते हैं।

'अनुवाद' का अर्थ- अंग्रेजी में एक कथन है–'Terms are to be identified before we enter into the argument' इसलिए अनुवाद की चर्चा करने से पहले 'अनुवाद' शब्द में निहित अर्थ और मूल अवधारणा से परिचित होना आवश्यक है। 'अनुवाद' शब्द संस्कृत का यौगिक शब्द है, जो 'अनु' उपसर्ग तथा 'वाद' के संयोग से बना है। संस्कृत के 'वद्' धातु में 'घ' प्रत्यय जोड़देने पर भाववाचक संज्ञा में इसका परिवर्तित रूप है 'वाद'। 'वद्' धातु का अर्थ है 'बोलना या कहना' और 'वाद' का अर्थ हुआ 'कहने की क्रिया ' या' कही हुई बात'। 'अनु' उपसर्ग अनुवर्तिता के अर्थ में व्यवहृत होता है। 'वाद' में यह 'अनु' उपसर्ग् जुड़कर बनने वाला शब्द 'अनुवाद' का अर्थ हुआ- 'प्राप्त कथन को पुनः कहना'। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि 'पुनः कथन' में अर्थ की पुनरावृत्ति होती है, शब्दों की नहीं। हिन्दी में अनुवाद के स्थान पर प्रयुक्त होने वाले अन्य शब्द हैं–छाया, टीका, उल्था, भाषान्तर आदि। अन्य भारतीय भाषाओं में 'अनुवाद' के समानान्तर प्रयोग होने वाले शब्द हैं–भाषान्त(संस्कृत, कन्नड़, मराठी), तर्जुमा (कश्मीरी, सिंधी, उर्दू), विवर्तन, तर्ज्जुमा(मलयालम), मोषिये चर्ण्यु (तमिल), अनुवादम् (तेलुगु), अनुवाद (संस्कृत, हिन्दी, असमिया, बांग्ला, कन्नड़, ओड़िआ, गुजराती, पंजाबी, सिंधी)।

प्राचीन गुरु-शिष्य परम्परा के समय से 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में भारतीय वाङ्मय में होता आ रहा है। गुरुकुल शिक्षा पद्धति में गुरु द्वारा उच्चरित मंत्रों को शिष्यों द्वारा दोहराये जाने को 'अनुवचन' या 'अनुवाक' कहा जाता था, जो 'अनुवाद' के ही पर्याय हैं। महान् वैयाकरण पाणिनी ने अपने 'अष्टाध्यायी' के एक सूत्र में अनुवाद शब्द का प्रयोग किया है–'अनुवादे चरणानाम्'। 'अष्टाध्यायी' को 'सिद्धान्त कौमुदी' के रूप में प्रस्तुत करने वाले दीक्षित ने पाणिनी के सूत्र में प्रयुक्त 'अनुवाद' शब्द का अर्थ 'अवगतार्थस्य प्रतिपादनम्' अर्थात् 'ज्ञात तथ्य की प्रस्तुति' किया है। 'वात्स्यायन भाष्य' में 'प्रयोजनवान् पुनःकथन' अर्थात् पहले कही गई बात को उद्देश्यपूर्ण ढंग से पुनः कहना ही अनुवाद माना गया है। इस प्रकार भर्तृहरि ने भी अनुवाद शब्द का प्रयोग दुहराने या पुनर्कथन के अर्थ में किया है–'आवृत्तिरनुवादो वा'। 'शब्दार्थ चिन्तामणि' में अनुवाद शब्द की दो व्युत्पत्तियाँ दी गई हैं–'प्राप्तस्य पुनः कथनम्' व 'ज्ञातार्थस्य प्रतिपादनम्'। प्रथम व्युत्पत्ति के अनुसार 'पहले कहे गये अर्थ ग्रहण

कर उसको पुनः कहना अनुवाद है' और द्वितीय व्युत्पत्ति के अनुसार 'किसी के द्वारा कहे गये को भली-भाँति समझ कर उसका विन्यास करना अनुवाद है। दोनों व्युत्पत्तियों को मिलाकर अगर कहा जाए 'ज्ञातार्थस्य पुनः कथनम्', तो स्थिति अधिक स्पष्ट हो जाती है। इस परिभाषा के अनुसार किसी के कथन के अर्थ को भलीभाँति समझ लेने के उपरान्त उसे फिर से प्रस्तुत करने का नाम अनुवाद है।

संस्कृत में 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग बहुत प्राचीन होते हुए भी हिन्दी में इसका प्रयोग बहुत बाद में हुआ। हिन्दी में आज अनुवाद शब्द का अर्थ उपर्युक्त अर्थों से भिन्न होकर केवल मूल-भाषा के अवतरण में निहित अर्थया सन्देश की रक्षा करते हुए दूसरी भाषा में प्रतिस्थापन तक सीमित हो गया है। अंग्रेजी विद्वान मोनियर विलियम्स ने सर्वप्रथम अंग्रेजी में 'शब्द का प्रयोग किया था। 'अनुवाद' के पर्याय के रूप में स्वीकृत अंग्रेजी शब्द, संस्कृत के 'अनुवाद' शब्द की भाँति, लैटिन के 'जतंदे' तथा के संयोग से बना है, जिसका अर्थ है 'पार ले जाना'-यानी एकस्थान बिन्दु से दूसरे स्थान बिन्दु पर ले जाना। यहाँ एक स्थान बिन्दु 'स्रोत-भाषा' या Source Language' है तो दूसरा स्थान बिन्दु 'लक्ष्य-भाषा' या 'Target Language' है और ले जाने वाली वस्तु 'मूल या स्रोत-भाषा में निहित अर्थ या संदेश होती है।

बहरहाल, अनुवाद का मूल अर्थ होता है-पूर्व में कथित बात को दोहराना, पुनरुक्ति या अनुवचन जो बाद में पूर्वोक्त निर्देश की व्याख्या, टीका-टिप्पणी करने के लिए प्रयुक्त हुआ। परंतु आज 'अनुवाद' शब्द का अर्थ विस्तार होकर एक भाषा-पाठ (स्रोत-भाषा) के निहितार्थ, संदेशों, उसके सामाजिक-सांस्कृतिक तत्त्वों को यथावत् दूसरी भाषा (लक्ष्य-भाषा) में अंतरण करने का पर्याय बन चुका है। चूँकि दो भिन्न-भिन्न भाषाओं की अलग-अलग प्रकृति, संरचना, संस्कृति, समाज, रीति-रिवाज, रहन-सहन, वेशभूषा होती हैं, अतः एक भाषा में कही गई बात को दूसरी भाषा में यथावत् रूपांतरित करते समय समतुल्य अभिव्यक्ति खोजने में कभी-कभी बहुत कठिनाई होती है। इस दृष्टि से अनुवाद एक चुनौती भरा कार्य प्रतीत होता है जिसके लिए न केवल लक्ष्य-भाषा और स्रोत-भाषा पर अधिकार होना जरूरी है बल्कि अनुद्य सामग्री के विषय और संदर्भ का गहरा ज्ञान भी आवश्यक है। अतः अनुवाद दो भाषाओं के बीच एक सांस्कृतिक सेतु जैसा ही है, जिस पर चलकर दो भिन्न भाषाओं के मध्य स्थित समय तथा दूरी के अंतराल को पार कर भावात्मक एकता स्थापित की जा सकती

है। अनुवाद के इस दोहरी क्रिया को निम्नलिखित आरेख से आसानी से समझा जा सकता है –

अनुवाद

अनुवाद की परिभाषा और स्वरूप

अनुवाद (Translation) शब्द संस्कृत का है जिसके मूल में 'वद्' धातु है। 'वद' शब्द में पिछे, बाद में अनुवर्तिता आदि अर्थो में प्रयुक्त होने वाले 'अनु' उपसर्ग लगने से 'अनुवाद' शब्द बना है। अनुवाद का मूल अर्थ है 'किसी के कहने के पश्चात कहना' अथवा पुनः कथन। कोश के अनुसार अनुवाद का अर्थ है ' पहले कहे गये अर्थ को फिर से कहना।' अंग्रेजी में अनुवाद के लिए (Translation) शब्द का प्रयोग होता है। 'Translation' शब्द लैटिन शब्द 'Trans'(पार) तथा 'Lation'(ले जाना) शब्दों के योग से बना है, जिसका अर्थ एक भाषा के पार दूसरी भाषा में ले जाना। या एक भाषा से दूसरी भाषा में बदलना।

(अ) ए.एच. स्मिथ के अनुसार- 'अर्थ को बनाये रखते हुए अन्य भाषा में अंतरण कहना अनुवाद है।'

(आ) डॉ भोलानाथ तिवारी के अनुसार- 'एक भाषा में व्यक्त विचारों को, यथासम्भव समान और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास अनुवाद है।'

प्रारम्भ में अनुवादक को साहित्य की दुनिया में बड़ी दीन-हीन दृष्टि से देखा जाता था। उसे पढ़े-लिखे बेकार व्यक्ति के लिए नोन तेल लकड़ी का एक छोटा-मोटा जुगाड़ अनुवाद मानते थे परन्तु ज्यों-ज्यों ज्ञान का क्षितिज विस्तृत होता गया। लोग जीने और जीवित रहने का संबंध एक प्रान्त, राष्ट्र के बजाय समस्त विश्व प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ गया। भारत में तो प्रयोजनमूलक हिन्दी की संरचना का आधारभूत तत्त्व परिभाषिक शब्दावली के बाद दूसरा अनुवाद ही है। विश्व के विभिन्न भागों, वर्गों, व्यवसायों के लोगों के भीतर एक दूसरे को जानने-समझने की ईच्छा बलवती होने लगी जिसके लिए पश्चिम देशों की भाषाओं अंग्रेजी, फ्रेंच, रूसी, जर्मन, जपानी आदि तथा तकनीकी, औधोगिक, चिकित्सा, विधि, वाणिज्य से लेकर सांस्कृतिक और आदान-प्रदान जीवन का मूल हिस्सा बन गया अब विश्व के विभिन्न भूखण्डों में बसने वाले लोग एक

परिवार जैसा महसूस करने लगे लोगों की दर्द, बेचैनी, आँसुओं, उल्लासों के बीच एक अजीब-सा सामान अहसास होने लगा। व्यक्ति या राष्ट्र संकट वैश्विक रूप में माना जाने लगा तथा इसका अंतर्राष्ट्रीय समाधान खोजे जाने लगा, दूसरी ओर दूरदर्शन, आकाशवाणी, दृश्य-श्रव्य कैसेट, फिल्म, दूरभाष आदि जोड़ने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् जब चहुदिशाओं में विकास की योजनाएँ बनने लगीं, हिन्दी के राजभाषा के पद पर आसीन होने से प्रशासनिक कार्यों तथा शिक्षा, विधि आदि विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय भाषाओं, विशेष रूप से हिन्दी दबाव तब यह आवश्यक हो गया कि भारतीय भाषाओं की साहित्यिक के साथ विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए अखिल भारतीय परिभाषिक शब्दावली का निर्माण किया जाए। वस्तुत: किसी भी देश की सांस्कृतिक परम्पराओं, मान्यताओं, वैज्ञानिक शोधों, औधोगिक विकास, चिकित्सा के लिए अनुवाद एक अनिवार्य माध्यम है। अनुवाद की सहायता से प्रतिभाशाली विधार्थी किसी विषय अथवा ज्ञान शाखा का अध्ययन अपनी मातृभाषा में सरलता समझ सकता है। वही अन्य भाषा में करना पड़े तो शक्ति और समय दोनों का व्यय होता है। अनुवाद अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान(Applied Linguistics) के अन्तर्गत आता है। किन्तु अनुवाद के प्रकृति के बारे में विद्वानों में काफी मतभेद हैं। विद्वानों का एक वर्ग अनुवाद को कला मानता है। प्रसिद्ध कवि एजरा पाउण्ड ने अनुवाद को 'साहित्यिक पुनर्जीवन' माना है। वही विद्वानों का दूसरा वर्ग विज्ञान मानता है। आधुनिक युग में जहाँ ज्ञान-विज्ञान के नए-नए क्षेत्र खुल रहे हैं, कम्प्यूटर-तकनालाजी के जाने से वहाँ अनुवाद विज्ञान माना जाने लगा है। अत: अनुवाद केवल रूपांतरण का माध्यम ही नहीं प्रत्युत एक अर्जित कला है।

आधुनिक युग में अनुवाद मनुष्य की सामाजिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक जरूरत के साथ ही कार्यालयी, कामकाज की अत्यावश्यक शर्त भी बन गया है। देश-विदेश के विभिन्न क्षेत्रों में फैले मनुष्य के साथ जीवन के अनेकविध धरातल पर वह एक दूसरे से सतत सम्पर्क बनाकर व्यक्तिगत तथा सामूहिक सम्बन्धों की कड़ी को मजबूती से जोड़ना चाहता है। अत: भाषाई स्तर पर सम्प्रेषण व्यापार हेतु अनुवाद का प्रयोजन संकुलित कठोर से हटकर इस वैज्ञानिक युग में बहुआगमी परिप्रेक्ष्य में उजागर हो रहा है। विश्व-पटल पर अवस्थित संस्कृतियों से सम्पर्क तथा सम्प्रेषण व्यवस्था के बिच में अनुवाद मध्यस्थता का महत्त्वपूण कार्य करता है।

अनुवाद की समस्याएँ और समाधान

एक भाषा में अभिव्यक्त विषयों, भावनाओं तथा संवेदनाओं को जहाँ तक संभव हो उसी की प्रयुक्त भाषा-शैली में दूसरी भाषा में रूपांतरित करना अनुवाद कहलाता है। मगर यह कार्य जितना सरल दिखाई देता है उतना है नहीं। मराठी के प्रसिद्ध नाटककार मामा वरेरकर ने कहा भी है- 'लेखक होना आसान है, किन्तु अनुवादक होना अत्यन्त कठिन। तथा स्वतन्त्र भारत के प्रथम राष्ट्र्पति राजेन्द्र प्रसाद जी ने भी कहा है- 'एक प्रकार से मौलिक लेख लिखना आसान है, पर किसी दूसरी भाषा से अनुवाद करना बहुत कठिन होता है। मेरा निजी अनुभव है कि मैं अंग्रेजी से हिन्दी में और हिन्दी से उतनी आसानी से अनुवाद नहीं कर सकता, जितनी आसानी से इन दोनों भाषाओं में लिख या बोल सकता हूँ।' क्योंकि दो अलग-अलग भाषाओं की अपनी-अपनी प्रकृति होती है। अपनी शब्द-संपदा होती है। अपनी विशिष्ट भाषिक संरचना, शैली-भंगिमा होती है।

समस्याएँ

(1) 'शब्द प्रयोग की समस्या:- कभी-कभी एक ही भाषाओं के दो शब्द मिल जाते है जिसका अर्थ अलग-अलग होता है। जैसे-मराठी में 'नवरा' का अर्थ पति है जबकि गुजराती में निठल्ले को 'नवरा' कहते है।

(2) मुहावरे-कहावते की समस्या:—यधपि मुहावरे और कहावतें मनुष्य के जीवन के अनुभावों को संक्षिप्ति, प्रभावशाली रूप में अभिव्यक्त करने का साधन रही है। परन्तु हर मुहावरे या कहावत एक-सा नहीं हो सकते।

(3) अलंकार की समस्या:—एक भाषा के अलंकार उस भाषा के शब्द को सौन्दर्य प्रदान करते है। 'कनक-कनक' में यमक अलंकार दुहरे अर्थ में प्रयोग अनुवाद के लिए एक गंभीर समस्या बन जाती है।

(4)शैली की समस्या:—हर भाषा की अपनी शैली होती है। परन्तु अगर एक भाषा में उपलब्ध शैली विशेषताएँ दूसरी में न मिले तो अनुवाद करने में परेशानी होती है। जैसे, हिन्दी की तीन शैलियाँ संस्कृत-निष्ठ हिदी, हिन्दुस्तानी और बातचित।

समाधान

(1) भाषा का ज्ञान:—अनुवादक की सर्वप्रथम आवश्यकता भाषाओं का समुचित ज्ञान हो क्योंकि उसके सामने दो अलग-अलग भाषाओं की प्रकृति,

प्रवृति, संस्कृति, अभिव्यक्ति शक्ति आदि बातों से वाकिफ होना चाहिए जिससे भाषा की वाक्य-रचना, शब्दों की चयन-प्रक्रिया, अभिव्यक्ति की सक्षम परख और वाक्य-विन्यास एवं शैलियों पर सांस्कृतिक प्रभाव का गहन अध्ययन हो ताकि अपने दायित्वों को अच्छी तरह निभा सके।

(2) विषय का ज्ञानः—अनुवादक को अनुवाध सामग्री के विषय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। अगर उसे विषय का अच्छी तरह ज्ञान नहीं होगा तो वह मूल रचना के साथ सही न्याय नहीं कर पायेगा।

(3) अभिव्यक्तिगत तटस्थताः—उत्तम अनुवाद अनुवादक के रूचि के साथ उसकी योग्यता, विषय-वस्तु की समझ, भाषाओं की निपुणता आदि बातों पर बहुत कुछ निर्भर करता है। अच्छे और सफल अनुवाद की पहचान यही कि पाठक को पढ़ते समय ऐसा न महसुस हो अनुवाद पढ़ रहे हैं बल्कि मूल पाठ पढ़ रहे है। उसमें अपने से कुछ न जोड़कर तटस्था का ध्यान रखना चाहिए। जैसे- अंग्रेजी का वाक्य- To give blank cheque, हिन्दी अनुवाद 'कोरा चेक देना यह गलत है बल्कि 'खुली छूट देना' आदि।

पाश्चात्य चिन्तन

नाइडा—'अनुवाद का तात्पर्य है स्रोत-भाषा में व्यक्त सन्देश के लिए लक्ष्य-भाषा में निकटतम सहज समतुल्य सन्देश को प्रस्तुत करना। यह समतुल्यता पहले तो अर्थ के स्तर पर होती है फिर शैली के स्तर पर।'

जॉन कनिंगटन—'लेखक ने जो कुछ कहा है, अनुवादक को उसके अनुवाद का प्रयत्न तो करना ही है, जिस ढंग से कहा, उसके निर्वाह का भी प्रयत्न करना चाहिए।'

कैटफोड—'एक भाषा की पाठ्य सामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्यसामग्री से प्रतिस्थापना ही अनुवाद है।' 1.मूल-भाषा (भाषा) 2. मूल भाषा का अर्थ (संदेश)3 मूल भाषा की संरचना (प्रकृति)

सैमुएल जॉनसन—'मूल भाषा की पाठ्य सामग्री के भावों की रक्षा करते हुए उसे दूसरी भाषा में बदल देना अनुवाद है।'

फॉरेस्टन—'एक भाषा की पाठ्य सामग्री के तत्त्वों को दूसरी भाषा में स्थानान्तरित कर देना अनुवाद कहलाता है। यह ध्यातव्य है कि हम तत्त्व या कथ्य को संरचना (रूप) से हमेशा अलग नहीं कर सकते हैं।'

हैलिडे–'अनुवाद एक सम्बन्ध है, जो दो-या दो-से अधिक पाठों के बीच होता है, ये पाठ समान स्थिति में समान प्रकार्य सम्पादित करते हैं।'

न्यूमार्क–'अनुवाद एक शिल्प है, जिसमें एक भाषा में व्यक्त सन्देश के स्थान पर दूसरी भाषा के उसी सन्देश को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है।'

इस प्रकार नाइडा ने अनुवाद में अर्थ पक्ष तथा शैली पक्ष, दोनों को महत्त्व देने के साथ-साथ दोनों की समतुल्यता पर भी बल दिया है। जहाँ नाइडा ने अनुवाद में मूल-पाठ के शिल्प की तुलना में अर्थ पक्ष के अनुवाद को अधिक महत्त्व दिया है, वहीं कैटफोड अर्थ की तुलना में शिल्प सम्बन्धी तत्त्वों को अधिक महत्त्व देते हैं। सैमुएल जॉनसन ने अनुवाद में भावों की रक्षा की बात कही है, तो न्यूमार्क ने अनुवाद कर्म को शिल्प मानते हुए निहित सन्देश को प्रतिस्थापित करने की बात कही है। कैटफोड ने अनुवाद को पाठसामग्री के प्रतिस्थापन के रूप में परिभाषित किया है। उनके अनुसार यह प्रतिस्थापन भाषा के विभिन्न स्तरों (स्वन, स्वनिम, लेखिम), भाषा की वर्ण सम्बन्धी इकाइयों (लिपि, वर्णमाला आदि), शब्द तथा संरचना के सभी स्तरों पर होना चाहिए। नाइडा, कैटफोड, न्यूमार्क तथा सैमुएल जॉनसन की उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि अनुवाद एक भाषा पाठ में व्यक्त (निहित) सन्देश को दूसरी भाषा पाठ में प्रस्तुत करने की प्रक्रिया का परिणाम है। हैलिडे अनुवाद को प्रक्रिया या उसके परिणाम के रूप में न देखकर उसे दो भाषा-पाठों के बीच ऐसे सम्बन्ध के रूप में परिभाषित करते हैं,जो दो भाषाओं के पाठों के मध्य होता है।

भारतीय चिन्तन

देवेन्द्रनाथ शर्मा–'विचारों को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपान्तरित करना अनुवाद है।'

भोलानाथ –'किसी भाषा में प्राप्त सामग्री को दूसरी भाषा में भाषान्तरण करना अनुवाद है, दूसरे शब्दों में एक भाषा में व्यक्त विचारों को यथा सम्भव और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास ही अनुवाद है।'

विनोद गोदरे–'अनुवाद, स्रोत-भाषा में अभिव्यक्त विचार अथवा व्यक्त अथवा रचना अथवा सूचना साहित्य को यथासम्भव मूल भावना के समानान्तर बोध एवं संप्रेषण के धरातल पर लक्ष्य-भाषा में अभिव्यक्त करने की प्रक्रियाहै।'

रीतारानी पालीवाल–'स्रोत-भाषा में व्यक्त प्रतीक व्यवस्था को लक्ष्य-भाषा की सहज प्रतीक व्यवस्था में रूपान्तरित करने का कार्य अनुवाद है।'

दंगल झाल्टे–'स्रोत-भाषा के मूल पाठ के अर्थ को लक्ष्य-भाषा के परिनिष्ठित पाठ के रूप में रूपान्तरण करना अनुवाद है।'

बालेन्दु शेखर 'अनुवाद एक भाषा समुदाय के विचार और अनुभव सामग्री को दूसरी भाषा समुदाय की शब्दावली में लगभग यथावत् सम्प्रेषित करने की सोद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि अनुवाद की परिकल्पना में स्रोत-भाषा की सामग्री लक्ष्य-भाषा में उसी रूप में, सम्पूर्णता में प्रकट होती है। सामग्री के साथ प्रस्तुति के ढंग में भी समानता हो। मूल-भाषा से लक्ष्य-भाषा में रूपान्तरित करने में स्वाभाविकता का निर्वाह अनिवार्यत: हो। और लक्ष्य-भाषा में व्यक्त विचारों में ऐसी सहजता हो कि वह मूल-भाषा पर आधारित न होकर स्वयं मूल-भाषा होने का एहसास पैदा करे। हम यह भी लक्ष्य करते हैं कि लगभग सभी परिभाषाओं में अनुवाद-प्रक्रिया को शामिल किया गया है। इन सभी परिभाषाओं के आधार पर 'अनुवाद' को परिभाषित किया जा सकता है–'अनुवाद, मूल-भाषा या स्रोत-भाषा में निहित अर्थ (या सन्देश)व शैली को यथा सम्भव सहज समतुल्य रूप में लक्ष्य-भाषा की प्रकृति व शैली के अनुसार परिवर्तित करने की सोद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है।'

अनुवाद के क्षेत्र

आज की दुनिया में अनुवाद का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है। शायद ही कोई क्षेत्र बचा हो जिसमें अनुवाद की उपादेयता को सिद्ध न किया जा सके। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि आधुनिक युग के जितने भी क्षेत्र हैं सबके सब अनुवाद के भी क्षेत्र हैं, चाहे न्यायालय हो या कार्यालय, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी हो या शिक्षा, संचार हो या पत्रकारिता, साहित्य का हो या सांस्कृतिक सम्बन्ध। इन सभी क्षेत्रों में अनुवाद की महत्ता एवं उपादेयता को सहज ही देखा-परखा जा सकता है। चर्चा की शुरुआत न्यायालय क्षेत्र से करते हैं।

न्यायालय–अदालतों की भाषा प्राय: अंग्रेजी में होती है। इनमें मुकद्दमों के लिए आवश्यक कागजात अक्सर प्रादेशिक भाषा में होते हैं, किन्तु पैरवी अंग्रेजी में ही होती है। इस वातावरण में अंग्रेजी और प्रादेशिक भाषा काबारी-बारी से परस्पर अनुवाद किया जाता है।

सरकारी कार्यालय–आजादी से पूर्व हमारे सरकारी कार्यालयों की भाषा अंग्रेजी थी। हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता मिलने के साथ हीसरकारी कार्यालयों के अंग्रेजी दस्तावेजों का हिन्दी अनुवाद जरूरी हो गया। इसी के मद्देनजर सरकारी कार्यालयों में राजभाषा प्रकोष्ठ की स्थापना कर अंग्रेजी दस्तावेजों का अनुवाद तेजी से हो रहा है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी–देश-विदेश में हो रहे विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के गहन अनुसंधान के क्षेत्र में तो सारा लेखन-कार्य उन्हीं की अपनी भाषा में किया जा रहा है। इस अनुसंधान को विश्व पटल पर रखने के लिए अनुवाद ही एक मात्र साधन है। इसके माध्यम से नई खोजों को आसानी से सबों तक पहुँचाया जा सकता है। इस दृष्टि से शोध एवं अनुसंधान के क्षेत्र में अनुवाद बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

शिक्षा–भारत जैसे–बहुभाषा-भाषी देश के शिक्षा-क्षेत्र में अनुवाद की भूमिका को कौन नकार सकता है। कहना अतिशयोक्ति न होगी कि शिक्षा का क्षेत्र अनुवाद के बिना एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। देश की प्रगति के लिए परिचयात्मक साहित्य, ज्ञानात्मक साहित्य एवं वैज्ञानिक साहित्य का अनुवाद बहुत जरूरी है। आधुनिक युग में विज्ञान, समाज-विज्ञान, अर्थशास्त्र, भौतिकी, गणित आदि विषय की पाठ्य-सामग्री अधिकतर अंग्रेजी में लिखी जाती है। हिन्दी प्रदेशों के विद्यार्थियों की सुविधा के लिए इन सब ज्ञानात्मक अंग्रेजी पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद तो हो ही रहा है, अन्य प्रादेशिक भाषाओंमें भी इस ज्ञान-सम्पदा को रूपान्तरित किया जा रहा है।

जनसंचार–जनसंचार के क्षेत्र में अनुवाद का प्रयोग अनिवार्य होता है। इनमें मुख्य हैं समाचार-पत्र, रेडियो, दूरदर्शन। ये अत्यन्त लोकप्रिय हैं और हर भाषा-प्रदेश में इनका प्रचार बढ़ रहा है। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन में भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में समाचार प्रसारित होते हैं। इनमें प्रतिदिन 22 भाषाओं में खबरें प्रसारित होती हैं। इनकी तैयारी अनुवाद कों द्वारा की जाती है।

साहित्य–साहित्य के क्षेत्र में अनुवाद वरदान साबित हो चुका है। प्राचीन और आधुनिक साहित्य का परिचय दूरदराज के पाठक अनुवाद के माध्यम से पाते हैं। 'भारतीय साहित्य' की परिकल्पना अनुवाद के माध्यम से ही संभव हुई है। विश्व-साहित्य का परिचय भी हम अनुवाद के माध्यम से ही पाते हैं। साहित्य के क्षेत्र में अनुवाद के कार्य ने साहित्यों के तुलनात्मक अध्ययन को सुगम बना

दिया है। विश्व की समृद्ध भाषाओं के साहित्यों का अनुवाद आज हमारे लिए कितना जरूरी है कहने या समझाने की आवश्यकता नहीं।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध–अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध अनुवाद का सबसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों का संवाद मौखिक अनुवादक की सहायता से ही होता है। प्रायः सभी देशों में एक दूसरे देशों के राजदूत रहते हैं और उनके कार्यालय भी होते हैं। राजदूतों को कई भाषाएँ बोलने का अभ्यास कराया जाता है। फिर भी देशों के प्रमुख प्रतिनिधि अपने विचार अपनी ही भाषा में प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुवाद की व्यवस्था होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय मैत्री एवं शान्ति को बरकरार रखने की दृष्टि से अनुवाद की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

संस्कृति–अनुवाद को 'सांस्कृतिक सेतु' कहा गया है। मानव-मानव को एक दूसरे के निकट लाने में, मानव जीवन को अधिक सुखी और सम्पन्न बनाने में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। 'भाषाओं की अनेकता' मनुष्य को एक दूसरे से अलग ही नहीं करती, उसे कमजोर, ज्ञान की दृष्टि से निर्धन और संवेदन शून्य भी बनाती है। 'विश्वबंधुत्व की स्थापना' एवं 'राष्ट्रीय एकता' को बरकरार रखने की दृष्टि से अनुवाद एक तरह से सांस्कृतिक सेतु की तरह महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है।

व्यत्पत्तिमूलक अर्थ

'अनुवाद' का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ है - पुनः कथनय एक बार कही हुई बात को दोबारा कहना। इसमें 'अर्थ की पुनरावृत्ति होती हैं, शब्द (शब्द रूप) की नहीं। 'ट्रांसलेशन' शब्द का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ है 'पारवहन' अर्थात् एक स्थान-बिन्दु से दूसरे स्थान-बिन्दु पर ले जाना। यह स्थान-बिन्दु भाषिक पाठ है। इसमें भी ले जाई जाने वाली वस्तु अर्थ होता है, शब्द नहीं। उपर्युक्त दोनों शब्दों में अन्तर व्युत्पत्तिमूलक अर्थ की दृष्टि से है, अतः सतही है। वास्तविक व्यवहार में दोनों की समानता स्पष्ट है। अर्थ की पुनरावृत्ति को ही दूसरे शब्दों में और प्रकारान्तर से, अर्थ का भाषान्तरण कहा जाता है, जिसमें कई बार मूल भाषा की रूपात्मक-गठनात्मक विशेषताएँ लक्ष्यभाषा में संक्रान्त हो जाती है।

वस्तुतः 'अनुवाद' शब्द का भारतीय परम्परा वाला अर्थ आधुनिक सन्दर्भ में भी मान्य है और इसी को केन्द्र बिन्दु बनाकर अनुवाद की प्रकृति को अंशशः

समझा जाता है। तदनुसार, अनुवाद कार्य के तीन सन्दर्भ हैं - समभाषिक, अन्यभाषिक और अन्तरसंकेतपरक।

समभाषिक अनुवाद

समभाषिक सन्दर्भ में अर्थ की पुनरावृत्ति एक ही भाषा की सीमा के अन्तर्गत होती है, परन्तु इसके आयाम भिन्न-भिन्न हो जाते हैं। मुख्य आयाम दो हैं -कालक्रमिक और समकालिक। कालक्रमिक आयाम पर समभाषिक अनुवाद एक ही भाषा के ऐतिहासिक विकास की दो निकटस्थ अवस्थाओं में होता है, जैसे, पुरानी हिन्दी से आधुनिक हिन्दी में अनुवाद। समकालिक आयाम पर समभाषिक अनुवाद मुख्य रूप से तीन स्तरों पर होता है - बोली, शैली और माध्यम।

बोली स्तर पर समभाषिक अनुवाद के चार उपस्तर हो सकते हैं–

(क) एक भौगोलिक बोली से दूसरी भौगोलिक बोली में, जैसे–ब्रज से अवधी में।

(ख) अमानक बोली से मानक बोली में, जैसे–गंजाम ओड़िया से पुरी की ओड़िया में अथवा नागपुर मराठी से पुणे मराठी में।

(ग) बोली रूप से भाषा रूप में, जैसे–ब्रज या अवधी से हिन्दी में

(घ) एक सामाजिक बोली से दूसरी सामाजिक बोली में, जैसे–अशिक्षितों या अल्पशिक्षितों की भाषा से शिक्षितों की भाषा में या एक धर्म में दीक्षित लोगों की भाषा से अन्य धर्म में दीक्षित लोगों की भाषा में।

शैली स्तर पर समभाषिक अनुवाद को शैली-विकल्पन के रूप में भी देखा जा सकता है। इसका एक अच्छा उदाहरण है औपचारिक शैली से अनौपचारिक शैली में अनुवाद, जैसे–'धूम्रपान वर्जित है' (औपचारिक शैली) 'बीड़ी सिगरेट पीना मना है' (अनौपचारिक शैली)। इसी प्रकार 'ट्यूबीय वायु आधान में सममिति नहीं रह गई। है' (तकनीकी शैली) -झ 'टायर की हवा निकल गई है' (गैरतकनीकी शैली)।

माध्यम की दृष्टि से समभाषिक अनुवाद की स्थिति वहाँ होती है जहाँ मौखिक माध्यम में प्रस्तुत सन्देश की लिखित माध्यम में या इसके विपरीत पुनरावृत्ति की जाए, जैसे, मौखिक माध्यम का का एक वाक्य है–'समय की सीमा के कारण मैं अपने श्रोताओं को अधिक विस्तार से इस विषय में नहीं बता

पाऊँगा।' इसी को लिखित माध्यम में इस प्रकार से कहना सम्भवत: उचित माना जाता है–'स्थान की सीमा के कारण मैं अपने पाठकों को अधिक विस्तार से इस विषय का स्पष्टीकरण नहीं कर सकुंगा।' ('समय' 'स्थान' 'श्रोता' 'पाठकश्य 'विषय में बता पाना' झ 'का स्पष्टीकरण कर सकना')।

समभाषिक अनुवाद के उपर्युक्त उदाहरणों से दो बातें स्पष्ट होती हैं–

(क) अर्थान्तरण या अर्थ की पुनरावृत्ति की प्रक्रिया में शब्द चयन तथा वाक्य-विन्यास दोनों प्रभावित होते हैं। माध्यम अनुवाद में स्वनप्रक्रिया की विशेषताएँ (बलाघात, अनुतान आदि) लिखित व्यवस्था की विशेषताओं (विराम-चिह्न आदि) का रूप ले लेती हैं या इसके विपरीत होता है।

(ख) बोली, शैली, और माध्यम के आयामों के मध्य कठोर विभाजन रेखा नहीं, अपितु इनमें आंशिक अतिव्याप्ति पाई जाती है, जिसकी सम्भावना भाषा प्रयोग की प्रवृत्ति में ही निहित है। जैसे, शैलीगत अनुवाद की आंशिक सत्ता माध्यम अनुवाद में दिखाई देती है, और तदनुसार 'के विषय में बता पाना' जैसा मौखिक माध्यम का, अतंएव अनौपचारिक, चयन, लिखित माध्यम में औपचारिकता का स्पर्श लेता हुआ 'का स्पष्टीकरण कर सकना' हो जाता है। इसी प्रकार शैलीगत अनुवाद में समाजिक बोलीगत अनुवाद भी कभी-कभी समाविष्ट हो जाता है। जैसे, शिक्षितों की बोली में, औपचारिक शैली की प्रधानता की प्रवृत्ति हो सकती है और अल्पशिक्षितों या अशिक्षितों की बोली में अनौपचारिक शैली की।

समभाषिक अनुवाद की समस्याएँ न केवल रोचक हैं अपितु अन्यभाषिक अनुवाद की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण भी हैं। अनुवाद को भाषाप्रयोग की एक विधा के रूप में देखने पर समभाषिक अनुवाद का महत्त्व और भी स्पष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त अन्यभाषिक अनुवाद की प्रकृति को समझने की दृष्टि से समभाषिक अनुवाद की प्रकृति को समझना न केवल सहायक है, अपितु आवश्यक भी है। ये कहा जा सकता है कि अनुवाद व्युत्पन्न भाषाप्रयोग है, जिसके दो सन्दर्भ हैं - समभाषिक और अन्यभाषिक। इस सन्दर्भ भेद से अनुवाद व्यवहार में अन्तर आ जाता है, परन्तु दोनों ही स्थितियों में अनुवाद की प्रकृति वही रहती है।

अन्यभाषिक अनुवाद

अन्यभाषिक अनुवाद दो भाषाओं के बीच में होता है। ये दो भाषाएँ ऐतिहासिकता और क्षेत्रीयता के समन्वित मानदण्ड पर स्वतन्त्र भाषाओं के रूप में पहचानी जाती हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से एक ही धारा में आने वाली भाषाओं को सामान्यत: उस स्थिति में स्वतन्त्र भाषा के रूप में देखते हैं यदि वह कालक्रम में एक दूसरे के निकट सन्निहित न हों, जैसे–संस्कृत और हिन्दी, इन दोनों के मध्य प्राकृत भाषाएँ आ जाती हैं। इसी प्रकार क्षेत्रीयता की दृष्टि से प्रतिवेशी भाषाओं में अत्यधिक आदन-प्रदान होने पर भी उन्हें भिन्न भाषाएँ ही मानना होगा, जैसे–हिन्दी और पंजाबी। अन्यभाषिक अनुवाद के सन्दर्भ में सम्बन्धित भाषाओं का स्वतन्त्र अस्तित्त्व महत्त्व की बात होती है। समभाषिक अनुवाद की तुलना में अन्यभाषिक अनुवाद सामाजिक और व्यावहारिक दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण है। भाषाप्रयोग की दृष्टि से अन्यभाषिक अनुवाद की समस्याओं में समभाषिक अनुवाद की समस्याओं से गुणात्मक अन्तर दिखाई पड़ता है। इस प्रकार समभाषिक अनुवाद से सम्बन्धित होते हुए भी अन्यभाषिक अनुवाद, अपेक्षाकृत स्वनिष्ठ व्यापार है।

अन्तरसंकेतभाषिक अनुवाद

अनुवाद शब्द के उपर्युक्त दोनों सन्दर्भ अपेक्षाकृत सीमित हैं। इनमें अनुवाद को भाषा-संकेतों का व्यापार माना गया है। वस्तुत: भाषा-संकेत, संकेतों की एक विशिष्ट श्रेणी है, जिनके द्वारा सम्प्रेषण कार्य सम्पन्न होता है। सम्प्रेषण के लिए विभिन्न कोटियों के संकेतों को काम में लिया जाता है। इन्हें सामान्य संकेत कहा जाता है। इस दृष्टि से भी अनुवाद शब्द की परिभाषा की जाती है। इसके अनुसार एक संकेतों द्वारा कही गई बात को दुसरी कोटि के संकेतों द्वारा पुन: कहना इस प्रकार के अनुवाद को अन्तरसंकेतपरक अनुवाद कहा जाता है। यह सामान्य संकेत विज्ञान के अन्तर्गत है। भाषिक संकेतों को प्रवर्तन बिन्दु मानकर संकेतों को भाषिक और भाषेतर में विभक्त किया जाता है। भाषेतर में दो भाग हैं - बाह्य (बाह्य ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ग्राह्य) और आन्तरिक (अन्तरिन्द्रिय द्वारा ग्राह्य)।

अनुवाद की दृष्टि से संकेत-परिवर्तन के व्यापार की निम्नलिखित कोटियाँ बन सकती हैं–

1. बाह्य संकेत का बाह्य संकेत में अनुवाद – इसके अनुसार किसी देश का मानचित्र उस देश का अनुवाद है, किसी प्राणी का चित्र उस प्राणी का अनुवाद है।
2. बाह्य संकेत का भाषिक संकेत में अनुवाद–इसके अनुसार किसी प्राणी के लिये किसी भाषा में प्रयुक्त कोई शब्द उस प्राणी का अनुवाद है। इस दृष्टि से वस्तुत: यहा भाषा दर्शन की समस्या है जिसकी व्याख्या अर्थ के संकेत सिद्धान्त में की गई है।
3. आन्तरिक संकेत से आन्तरिक संकेत में अनुवाद – इसके अनुसार किसी एक घटना को उसकी समशील संवेदना में परिवर्तित करना इस श्रेणी का अनुवाद है। स्पष्ट है कि इस स्थिति की वास्तविक सत्ता नहीं हो सकती। अत: केवल सैद्धान्तिकता की दष्टि से ही यह कोटि निर्धारित की जाती है।
4. आन्तरिक संकेत से भाषिक संकेत में अनुवाद – इसके अनुसार किसी आन्तरिक संवेदना के लिए किसी शब्द का प्रयोग करना इस कोटि का अनुवाद है। इसको अधिक स्पष्टता से कहा जाता है कि, किसी भौतिक स्थिति के साथ सम्पर्क होने पर – जैसे, किसी दुर्घटना को देखकर, प्रकृति के किसी दृश्य को देखकर, किसी वस्तु को हाथ लगाकर, कुछ सँघकर, दूसरे शब्दों में इन्द्रियार्थ सन्निकर्ष होने पर – मन में जिस संवेदना का उदय होता है वह एक प्रकार का संकेत है। उसके लिये भाषा के किसी शब्द का प्रयोग करना या भाषिक संकेत द्वारा उसकी पुनरावृत्ति करना इस कोटि का अनुवाद कहलाएगा। उदाहरण के लिए, एक विशिष्ट प्रकार की वेदना का संकेत करने के लिए हिन्दी में 'शोक' शब्द का प्रयोग किया जाता है और दूसरी के लिए 'प्रेम' का। समझा जाता है कि एक संवेदना का अनुवाद 'शोक' शब्द द्वारा किया जाता है और दूसरी का 'प्रेम' द्वारा। इस दृष्टि से यह कहा जाता है कि समस्त मौलिक अभिव्यक्ति अनुवाद है। वक्ता या लेखक अपने संवेदना रूपी संकेतों की भाषिक संकेतों में पुनरावृत्ति कर देता है। इस दृष्टि से यह भाषा मनोविज्ञान की समस्या है, जिसकी व्याख्या उद्दीपन–अनुक्रिया सिद्धान्त में की गई है।

इस प्रकार, अनुवाद शब्द की व्यापक परिधि में तीनों सन्दर्भों के अनुवादों का स्थान है –समभाषिक अनुवाद, अन्यभाषिक अनुवाद, और अन्तरसंकेतपरक अनुवाद। तीनों का अपना–अपना सैद्धान्तिक आधार है। इन तीनों के मध्य का भेद

जानना महत्त्वपूर्ण है। अनुवादक को यह स्थिर करना है कि इन तीनों में केन्द्रीय स्थिति किसकी है तथा शेष दो का उनके साथ कैसा सम्बन्ध है।

सैद्धान्तिक औचित्य की दृष्टि से अन्यभाषिक अनुवाद की स्थिति केन्द्रीय है। केवल 'अनुवाद' शब्द (विशेषणरहित पद) से अन्यभाषिक अनुवाद का अर्थ ग्रहण किया जाता है। इसका मूल है द्विभाषाबद्धता। अनुवादक का बोधन तथा अभिव्यक्ति दोनों स्थितियों में ही भाषा से बँधे रहते हैं और ये भाषाएँ भी भेद (काल, स्थान या प्रयोग सन्दर्भ पर आधारित भेद) की दृष्टि से नहीं, अपितु कोड की दृष्टि से भिन्न-भिन्न होती हैं, जैसे–हिन्दी और अंग्रेजी, हिन्दी और सिन्धी आदि।

इस केन्द्रीय स्थिति के दो छोर हैं। प्रथम छोर पर दोनों स्थितियों में भाषाबद्धता रहती है, परन्तु भाषा वही रहती है। स्थितियों को अन्तर उसी भाषा के भेदों के अन्तर पर आधारित होता है। यह समभाषिक अनुवाद है। पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग की स्पष्टता के लिए इसे 'अन्वयान्तर' या 'शब्दान्तरण' कहा जाता है। दूसर छोर पर भाषेतर संकेत का भाषिक संकेत में परिवर्तन होता है। संकेत पद्धति का यह परिवर्तन भाषा प्रयोग की सामान्य स्थिति को जन्म देता है। पारिभाषिक शब्दावली में इसे 'भाषा व्यवहार' कहा जाता है। इन तीनों (समभाषिक अनुवाद, अन्यभाषिक अनुवाद, और अन्तरसंकेतपरक अनुवाद) में सम्बन्ध तथा अन्तर दोनों हैं। यह सम्बन्ध उभयनिष्ठ है।

अनुवाद (अन्यभाषिक अनुवाद) की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वास्तविक अनुवाद कार्य में तथा अनूदित पाठ के मूल्यांकन में अनुवादकों को समभाषिक अनुवाद तथा अन्तरसंकेतपरक अनुवाद की संकल्पनाओं से सहायता मिलती है। यह आवश्यकता तभी मुखर रूप से सामने आती है, जब अनुवाद करते-करते अनुवादक कभी अटक जाते हैं -मूल पाठ का सम्यक् बोधन नहीं हो पातें, लक्ष्यभाषा में शुद्ध और उपयुक्त अनुवाद का पर्याप्ततया अन्वेषण करने में कठिनाई होती है, अनुवादक को यह जाँचना होता है कि अनुवाद कितना सफल है, इत्यादि।

प्रवृत्तिमूलक अर्थ

प्रवृत्तिमूलक में (व्यवहार में) 'अनुवाद' शब्द से अन्यभाषिक अनुवाद का ही अर्थ लिया जाता है। और इसी कारण शनैः शनैः यह बात सिद्धान्त का भी अंग बन गई है कि अनुवाद दो भाषाओं के मध्य होने वाली प्रक्रिया है। इस

स्थिति का स्वीकार किया जाता है। संस्कृत परम्परा का 'छाया' शब्द इसी स्थिति का संकेत करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

परिभाषा के दृष्टिकोण

अनुवाद के स्वरूप को समझने के लिए अनुवाद की परिभाषा विशेष रूप से सहायक है। अनुवाद की बहुपक्षीयता को देखते हुए अनुवाद की परिभाषा विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रस्तुत की गई है। मुख्य दृष्टिकोण तीन प्रकार के हैं - (1) अनुवाद एक प्रक्रिया है। (2) अनुवाद एक प्रक्रिया अथवा और उसका परिणाम है। (3) अनुवाद एक सम्बन्ध का नाम है।

अनुवाद एक प्रक्रिया है

इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत निम्नलिखित परिभाषाएँ उद्धृत की जाती हैं–

(क) 'मूलभाषा के सन्देश के सममूल्य सन्देश को लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत करने की क्रिया को अनुवाद कहते हैं। सन्देशों की यह मूल्यसमता पहले अर्थ और फिर शैली की दृष्टि से, तथा निकटतम एवं स्वाभाविक होती है।' (नाइडा तथा टेबर)

(ख) 'अनुवाद वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा सार्थक अनुभव (अर्थपूर्ण सन्देश या देश का अर्थ) एक भाषा-समुदाय से दूसरे भाषा-समुदाय को सम्प्रेषित किया जाता है।'

(ग) 'एक भाषा की पाठ्यसामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्यसामग्री द्वारा प्रस्थापित करना अनुवाद कहलाता है।' (कैटफोर्ड)

(घ) 'अनुवाद एक शिल्प है जिसमें एक भाषा में लिखित सन्देश के स्थान पर दूसरी भाषा के उसी सन्देश को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जाता है।' (न्यूमार्क)

अनुवाद एक प्रक्रिया या उसका परिणाम है

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित परिभाषा को उद्धृत किया जाता है –

(क) 'एक भाषा या भाषाभेद से दूसरी भाषा या भाषाभेद में प्रतिपाद्य को स्थानान्तरित करने की प्रक्रिया या उसके परिणाम को अनुवाद कहते हैं।' (हार्टमन तथा स्टार्क)

अनुवाद एक सम्बन्ध का नाम है

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित परिभाषा आती है –

(क) 'अनुवाद एक सम्बन्ध है, जो दो या दो से अधिक पाठों के बीच होता है, ये पाठ समान स्थिति में समान प्रकार्य सम्पादित करते हैं (दोनों पाठों का सन्दर्भ समान होता है और उनसे व्यंजित होने वाला सन्देश भी समान होता है)।' (हैलिडे)

अनुवाद की परिभाषाओं का यह वर्गीकरण जहाँ अनुवाद की प्रकृति की बहुपक्षीयता को स्पष्ट करता है, वहाँ इससे यह संकेत भी मिलता है कि, विभिन्न उद्देश्यों के अनुसार अनुवाद की परिभाषाएँ भी भिन्न-भन्न हो सकती हैं। इस प्रकार ये सभी परिभाषाएँ मान्य हैं। इन परिभाषाओं के आधार पर अनुवाद के दो पक्ष माने जाते हैं।

अनुवाद के पक्ष

अनुवाद के दो पक्ष हैं – पहला संक्रियात्मक पक्ष अतएव गतिशील और दूसरा सैद्धान्तिक पक्ष अतएव स्थितिशील।

संक्रियात्मक पक्ष

संक्रियात्मक दृष्टि से अनुवाद एक प्रक्रिया है। अनुवाद के पक्ष का सम्बन्ध अनुवाद करने के कार्य से है जिसके लिए 'अनुवाद कार्य' शब्द का प्रयोग करना उचित माना जाता है।

सैद्धान्तिक पक्ष

सैद्धान्तिक दृष्टि से अनुवाद एक सम्बन्ध है, जो दो या दो से अधिक, परन्तु विभिन्न भाषाओं के पाठों के मध्य होता है, परन्तु वे समानार्थक होने चाहिये।

इस सम्बन्ध का उद्घाटन तुलनात्मक पद्धति के अध्ययन से किया जाता है। इन दोनों का समन्वित रूप इस धारणा में मिलता है कि अनुवाद एक निष्पत्ति है – कार्य का परिणाम अनुवाद है – जो अपने मूल पाठ से पर्यायता के सम्बन्ध से जुड़ा है। निष्पत्ति के रूप में अनुवाद को 'अनूदित पाठ' कहा जाता है। इस दृष्टि से एक मूल पाठ के अनेक अनुवाद हो सकते हैं। इस प्रकार संक्रियात्मक दृष्टि से अनुवाद को जहाँ भाषा प्रयोग की एक विधा के रूप में जाना जाता है,

वहाँ सैद्धान्तिक दृष्टि से इसका सम्बन्ध भाषा पाठ तुलना तथा व्यतिरेकी विश्लेषण की तकनीकों पर आधारित भाषा सम्बन्धों के प्रश्न से (तुलनात्मक-व्यतिरेकी पाठ भाषाविज्ञान यही है) जोड़ा जाता है।

अनुवाद को अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की शाखा कहा गया है। वस्तुतः, अपने इस रूप में यह अपने प्रक्रिया रूप तथा सम्बन्ध रूप परिभाषाओं की योजक कड़ी है, जिसका संक्रियात्मक आधार अनूदित पाठ है, जिसके मूल में 'अनुवाद एक निष्पत्ति है' की धारणा निहित है। इन परिभाषाओं से अनुवाद के विषय में जो अन्य जानकारी मिलती है, वें बन्दुवार निम्न प्रकार से हैं -

(1) अनुवाद एक भाषा या भाषाभेद से दूसरी भाषा या भाषा भेद में होता है।

(2) यह प्रक्रिया, परिवर्तन, स्थानान्तरण, प्रतिस्थापन, या पुनरावृत्ति की प्रकृति की होती है।

(3) स्थानान्तरित होने वाली वस्तु को विभिन्न नामों से इंगित कर सकते हैं, जैसे–पाठ्यसामग्री, सार्थक अनुभव, सूचना, सन्देश। ये विभिन्न नाम अनुवाद की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि के विभिन्न आयोमों तथा अनुवाद कार्य के उद्देश्यों में अन्तर से जुड़े हैं। जैसे, भाषागत 'पाठ्यसामग्री' नाम से व्यक्त होने वाली सुनिश्चितता अनुवाद के भाषावैज्ञानिक आधार की विशेषता है, जिसका विशेष उपयोग मशीन अनुवाद में होता है। 'सूचना' और 'सार्थक अनुभव' अनुवाद के समाजभाषागत आधार का संकेत करते हैं, और 'सन्देश' से अनुवाद की पाठसंकेतपरक पृष्ठभूमि उपलक्षित होती है।

(4) उपर्युक्त की विशेषता यह होती है कि इसका दोनों भाषाओं में समान अर्थ होता है। यह अर्थ की समानता व्यापक दृष्टि से होती है और भाषिक अर्थ से लेकर सन्दर्भमूलक अर्थ तक व्याप्त रहती है।

संक्षेप में, एक भाषा के विशिष्ट भाषाभेद के विशिष्ट पाठ को दूसरी भाषा में इस प्रकार प्रस्तुत करना अनुवाद है, जिसमें वह मूल के भाषिक अर्थ, प्रयोग के वैशिष्ट्य से निष्पन्न अर्थ, प्रयुक्ति और शैली की विशेषता, विषयवस्तु, तथा सम्बद्ध सांस्कृतिक वैशष्ट्यि को यथासम्भव संरक्षित रखते हुए दूसरी भाषा के पाठक को स्वाभाविक रूप से ग्राह्य प्रतीत हो।

अनुवाद का महत्त्व

बीसवीं सदी को अनुवाद का युग कहा गया है। यद्यपि अनुवाद सबसे प्राचीन व्यवसाय या व्यवसायों में से एक कहलाता है तथापि उसके जो महत्त्व

बीसवीं सदी में प्राप्त हुआ वह उससे पहले उसे नहीं मिला ऐसा माना जाता है। इसका मुख्य कारण माना गया है कि बीसवीं शताब्दी में ही भाषा सम्पर्क अर्थात् भिन्न भाषाभाषी समुदायों में सम्पर्क की स्थिति प्रमुख रूप से आरम्भ हुई। इसके मूल कारण आर्थिक और राजनीतिक माने जाते हैं। फलस्वरूप, विश्व का आर्थिक-राजनीतिक मानचित्र परिवर्तित होने लगा। वर्तमान युग में अधिकतर राष्ट्रों में यदि एक भाषा प्रधान है तो एक या अधिक भाषाएँ गौण पद पर दिखाई देती हैं। दूसरे शब्दों में, एक ही राजनीतिक-प्रशासनिक इकाई की सीमा के अन्तर्गत भाषायी बहुसंख्यक भी रहते हैं और भाषायी अल्पसंख्यक भी। लोकतन्त्र में सब लोगों का प्रशासन में समान रूप से भाग लेने का अधिकार तभी सार्थक माना जाता है, जब उनके साथ उनकी भाषा के माध्यम से सम्पर्क किया जाए। इससे बहुभाषिकता की स्थिति उत्पन्न होती है और उसके संरक्षण की प्रक्रिया में अनुवाद कार्य का आश्रय लेना अनिवार्य हो जाता है। इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राष्ट्रों के बीच राजनीतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक, तथा साहित्यिक और सांस्कृतिक स्तर पर बढ़ते हुए आदान-प्रदान के कारण अनुवाद कार्य की अनिवार्यता और महत्ता की नई चेतना प्रबल रूप से विकसित होती हुई दिखती है। अतः अनुवाद एक व्यापक तथा बहुधा अनिवार्य और तर्कसंगत स्थिति मानी जाती है। अनुवाद के महत्त्व को दो भिन्न, परन्तु सम्बन्धित सन्दर्भो में अधिक स्पष्टता से समझया जाता है–(क) सामाजिक एवं व्यावहारिक महत्त्व, (ख) शैक्षणिक एवं ज्ञानात्मक महत्त्व।

सामाजिक एवं व्यावहारिक महत्त्व

सामाजिक सन्दर्भ में अनुवाद व्यापार अनौपचारिक परिस्थितियों में होता है। इसका सम्बन्ध द्विभाषिकता की स्थिति से है। द्विभाषिकता का सामान्य अर्थ है एक समय में दो भाषाओं का वैकल्पिक रूप से प्रयोग। वर्तमान युग के समाज का एक बृहद् भाग ऐसा है, जो सामाजिक सन्दर्भ की अनौपचारिक स्थिति में दो भाषाओं का वैकल्पिक प्रयोग करता है। सामान्य रूप से प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति, नगरीय परिवेश का अर्ध शिक्षित व्यक्ति, दो भिन्न भाषाभाषी राज्यों के सीमा प्रदेश में रहने वाली जनता, तथा भाषायी अल्पसंख्यक, इनमें अधिक स्पष्ट रूप से द्विभाषिकता की स्थिति देखी जाती है। यह द्विभाषिकता प्रायः आश्रित/संयुक्त द्विभाषिकता की कोटि की होती है। जिसका सामान्य लक्षण यह है कि, सब एक भाषा में (मातृभाषा में) सोचते हैं, परन्तु अन्य भाषा में

अभिव्यक्त करते हैं। इस स्थिति में अनुवाद प्रक्रिया का होना अनिवार्य है। परन्तु यह प्रक्रिया अनौपचारिक रूप में ही होती है। व्यक्ति मन ही मन पहली भाषा से अन्य भाषा में अनुवाद कर अपनी बात कह देते हैं। यह माना गया है कि, अन्य भाषा परिवेश में अन्य भाषा सीखते समय अनुवाद का प्रत्यक्ष रूप से अस्तित्त्व रहता है। यदि स्व-भाषा के ही परिवेश में अन्य भाषा सीखी जाए तो 'कोड' परिवर्तन की स्थिति आती है, जिसमें अनुवाद की स्थिति कुछ परोक्ष हो जाती है। अत: द्विभाषी रूप में सभी अनुवाद अनौपचारिक हैं। इस दृष्टि से अनुवाद एक सामाजिक भाषा व्यवहार में महत्त्वपूर्ण भूमिका में दिखता है।

शैक्षणिक एवं ज्ञानात्मक महत्त्व

शैक्षणिक एवं ज्ञानात्मक सन्दर्भ में अनुवाद व्यापार औपचारिक स्थिति में होता है। इसके दो भेद हैं—साधन रूप में अनुवाद और साध्य रूप में अनुवाद।

साधन रूप में अनुवाद

साधन रूप में अनुवाद का प्रयोग भाषा शिक्षण की एक विधि के रूप में किया जाता है। संज्ञानात्मक कौशल के रूप में अनुवाद के अभ्यास से भाषा अधिगम के दो कौशलों-बोधन और अभिव्यक्ति को पुष्ट किया जाता है। इसी प्रकार साधन रूप में अनुवाद के दो और क्षेत्र हैं—भाषाओं का तुलनात्मक व्यतिरेकी अध्ययन तथा तुलनात्मक साहित्य विवेचन।

भाषाओं का तुलनात्मक व्यतिरेकी अध्ययन

वस्तुत: भाषाओं के अध्ययन-विश्लेषण के लिए अनुवाद के द्वारा ही व्यक्ति को यह ज्ञात होता है कि, एक वाक्य में किस शब्द का क्या अर्थ है। उसके पश्चात् ही वह दोनों में समानता तथा असमानता के बिन्दु से अवगत हो पाता है। अत: व्यतिरेकी भाषा विश्लेषण को अनुवादात्मक विश्लेषण (ट्रांसलेटिव एनालसिस) भी कहा गया है।

तुलनात्मक साहित्य विवेचन

तुलनात्मक साहित्य विवेचन में साहित्यों के तुलनात्मक अध्ययन के साधन रूप में अनुवाद के प्रयोग के द्वारा सदृश-विसदृश अंशों का अर्थबोध होता है, जिससे अंशों की तुलना की जा सके। इसके अतिरिक्त अन्य भाषा साहित्य की

कृतियों के अनुवाद का अभ्यास करना अथवा और उन्हें अनूदित रूप में पढ़ना तुलनात्मक साहित्य विवेचन में अनुवाद के योगदान का उदाहरण है।

साध्य रूप में अनुवाद

साध्य रूप में अनुवाद व्यापार अनेक क्षेत्रों में दिखाई पड़ता है। कोशकार्य भी उक प्रकार का अनुवाद कार्य है। समभाषिक कोश में एक ही भाषा के अन्दर अनुवाद होता है और द्विभाषी कोश में दो भाषाओं के मध्य। यह अनुवाद, पाठ की अपेक्षा भाषा के आयाम पर होता है, जिसमें भाषा विश्लेषण के दो स्तर प्रभावित होते हैं। वे दो स्तर - शब्द और शब्द शृंख्ला हैं।

इसी प्रकार किसी भाषा के विकास के लिए भी अनुवाद-व्यापार का आश्रय लिया जाता है। जब किसी भाषा को ऐसे व्यवहार-क्षेत्रों में काम करने का अवसर मिलता है, जिनमें पहले उसका प्रयोग नहीं होता था, तब उसे विषयवस्तु और अभिव्यक्ति पद्धति दोनों ही दृष्टियों से विकसित करने की आवश्यकता होती है। इसके लिए अन्य भाषाओं से विभिन्न प्रकार के साहित्य का उसमें अनुवाद किया जाता है। फलस्वरूप, विषयवस्तु की परिधि के विस्तार के साथ-साथ भाषा के अभिव्यक्ति-कोश का क्षेत्र भी विस्तृत होता है। अनेक नये शब्द बन जाते हैं, कई बार प्रचलित शब्दों को नया अर्थ मिल जाता है, नये सहप्रयोग विकसित होने लगते हैं, संकर-शब्दावली प्रयोग में आने लगती है, और भाषा प्रयोग के सन्दर्भ की विशेषता के कारण कुल मिलाकर भाषा का एक नवीन भेद विकसित हो जाता है। आधुनिक प्रशासनिक हिन्दी तथा पत्रकारिता हिन्दी इसके अच्छे उदाहरण हैं। इस प्रक्रिया को भाषा नियोजन और भाषा विकास कहते हैं, जो अपने व्यापकतर सन्दर्भ में राष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक विकास का अंग है। इस प्रकार अनुवाद के माध्यम से विकासशील भाषा में आवश्यक और महत्त्वपूर्ण साहित्य का प्रवेश होता है। तब कह सकते हैं कि इस रूप में अनुवाद राष्ट्रीय विकास में भी योगदान करता है।

अपने व्यापकतम रूप में अनुवाद भाषा की शक्ति में संवर्धन करता है, पाठों की व्याख्या एवं निर्वचन में सहायक है, भाषा तथा विचार के बीच सम्बन्ध को स्पष्ट करता है, ज्ञान का प्रसार करता है, संस्कृति का संवाहक है, तथा राष्ट्रों के मध्ये परस्पर अवगमन और सद्भाव की वृद्धि में योगदान करता है। गेटे के शब्दों में, अनुवाद (अपनी प्रकृति से) असम्भव होते हुए भी (सामाजिक दृष्टि से) आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण है।

स्वरूप

अनुवाद के स्वरूप के दो उल्लेखनीय पक्ष हैं – समन्वय और सन्तुलन। अनुवाद सिद्धान्त का बहुविद्यापरक आयाम इसका समन्वयशील पक्ष है। तदनुसार, यद्यपि अनुवाद सिद्धान्त का मूल उद्‌गम है अनुप्रयुक्त तुलनात्मक पाठसंकेतविज्ञान, तथापि उसे कुछ अन्य शास्त्र भी स्पर्श करते हैं। 'तुलनात्मक' से अनुवाद का दो भाषाओं से सम्बन्धित होना स्पष्ट ही है, जिसमें भाषाओं की समानता–असमानता के प्रश्न उपस्थित होते हैं। पाठसंकेतविज्ञान के तीनों पक्ष – अर्थविचार, वाक्यविचार तथा सन्दर्भमीमांसा – अनुवाद सिद्धान्त के लिए प्रासंगिक हैं। अर्थविचार में भाषिक संकेत तथा भाषाबाह्य यथार्थ के बीच में सम्बन्ध का अध्ययन होता है। सन्दर्भमीमांसा के अन्तर्गत भाषाप्रयोग की स्थिति के सन्दर्भ के विभिन्न आयामों – वक्ता एवं श्रोता की सामाजिक पहचान, भाषाप्रयोग का उद्देश्य तथा सन्देश के प्रति वक्ता – श्रोता की अभिवृत्ति, भाषाप्रयोग की भौतिक परिस्थितियों की तथा अभिव्यक्ति, माध्यम आदि – की मीमांसा होती है। स्पष्ट है कि संकेतविज्ञान की परिधि भाषाविज्ञान की अपेक्षा व्यापकतर है तथा अनुवाद कार्य जैसे–व्यापक सम्प्रेषण व्यापार के अध्ययन के उपयुक्त है।

अनुवाद शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'वद्' धातु से हुई है। 'अनुवाद' का शाब्दिक अर्थ है 'पुनःकथन' अर्थात किसी कही गई बात को फिर से कहना। यह भी कहा जा सकता है कि एक भाषा में व्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में ज्यों–को–त्यों प्रकट करना ही अनुवाद है। अनुवाद एक साहित्यिक विधा है, पर वह मौलिक साहित्य रचना की कोटि में नहीं आ सकती। एल.एन.शर्मा 'सौमित्रा' उसे सेकण्ड हॅण्ड साहित्य मानते है। इसी कारण अनुवाद को मूल लेखन पर आधारित 'भाषांतर' कह सकते है।

अनुवाद में मूलतः किसी एक भाषा में व्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में व्यक्त करना बड़ा ही कठिन कार्य है, क्योंकि प्रत्येक भाषा का अपना स्वरूप होता है, उसकी अपनी निजी–ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य तथा अर्थमूलक विशेषताएँ होती हैं। कभी–कभी स्रोत भाषा का कथ्य लक्ष्य भाषा में अपेक्षाकृत विस्तृत, कहीं संकुचित और कहीं भिन्नरूपी हो जाता है।

अनुवाद में दो भाषाओं का होना जरूरी है। इन दोनों भाषाओं को अनुवाद विज्ञान में स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की संज्ञा दी गई है। जिस भाषा की सामग्री अनूदित होती है वह स्रोत भाषा कहलाती है और जिस भाषा में अनुवाद किया जाता है वह लक्ष्य भाषा कहलाती है।

कैटफर्ड(J-C-Catford) ने अनुवाद की परिभाषा इस प्रकार दी है–

''The replacement of textual material from one language by equivalent textual material in another language" अर्थात् अनुवाद एक भाषा(स्रोत भाषा) के पाठ्यपरक उपादानों का दूसरी भाषा (लक्ष्य भाषा) के पाठ्यपरक उपादानों के रुप में समतुल्यता के सिद्धांत के आधार पर प्रतिस्थापन है।

अनुवाद मानव की मूलभूत एकता, व्यक्तिचेतना एवं विश्वचेतना के अद्वैत का प्रत्यक्ष प्रमाण है। विश्व संस्कृति के निर्माण कि प्रक्रिया में विचारों के आदान-प्रदान का योगदान रहा है और यह अनुवाद के माध्यम से ही संभव हो सका है।

बीसवीं शताब्दी में अनुवाद को जो महत्त्व प्राप्त हुआ वह उससे पहले नहीं मिला था। इसी कारण इस सदी को 'अनुवाद युग' कहा गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि बीसवीं शताब्दी में ही भिन्न भाषाभाषी समुदायों में संपर्क की स्थिति प्रमुख रुप से उभर कर आयी। इसका मूल कारण आर्थिक और राजनीतिक है। अंतरर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राष्ट्रों के बीच राजनीतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक और औद्योगिक तथा साहित्यिक और सांस्कृतिक स्तर पर बढ़ते हुए आदान-प्रदान के कारण अनुवाद कार्य की अनिवार्यता और महत्ता को नई दिशा प्राप्त हुई है। इस कारण अनुवाद एक व्यापक तथा एक सीमा तक अनिवार्य और तर्कसंगत स्थिति है।

सामाजिक संदर्भ में अनुवाद व्यापार अनौपचारिक परिस्थितियों में होता है। इसका संदर्भ द्विभाषिकता की स्थिति से है। इसका सामान्य अर्थ है कि हम एक समय में दो भाषाओं का वैकल्पिक रुप से प्रयोग करते हैं। यानी हम एक भाषा(मातृभाषा) में सोचते है, परंतु उसे दूसरी भाषा में अभिव्यक्त करते है। इस स्थिति में अनुवाद प्रक्रिया का होना अनिवार्य है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अनौपचारिक रुप में अनुवादक होता है। इस दृष्टि से अनुवाद व्यापार अनौपचारिक स्थिति में होता है। इसके दो भेद हैं–साधन रूप में अनुवाद और साध्य रूप में अनुवाद। साधन रूप में अनुवाद का प्रयोग भाषा शिक्षण की एक विधि के रूप में किया जाता है। साध्य रूप में अनुवाद अनेक क्षेत्रों में दिखाई देता है। अपने व्यापकतम क्षण में अनुवाद भाषा की शक्ति में समवर्धन करता है, भाषा तथा विचार के बीच समबन्ध को स्पष्ट करता है, ज्ञान का प्रसार करता है, संस्कृति का संवाहक है।

अनुवाद यांत्रिक प्रक्रिया नहीं अपितु मैलिकता से स्पर्श करता हुआ कृतित्त्व है। उसके एक छोर पर मूल लेखक होता है तो दूसरी छोर पर अनुवादक। इन दोनों के बीच है अनुवाद की प्रक्रिया। एक कुशल अनुवादक अपने आप को मूल लेखक के चितंन की भूमि पर प्रतिष्ठित कर अपनी सूझबूझ एवं प्रतिभा के बल पर स्रोत सामग्री को अपने कला और कौशल्य से प्रस्तुत करता है जिससे उसका कृतित्त्व 'अनुवाद' मैलिक रचना के स्तर तक पहुँच सके।

यह निर्विवाद सत्य हे कि अनुवाद मूल लेखन से कहीं अधिक कठिन कार्य है। मूल लेखन जहाँ अपने विचारों की अभिव्यक्ति में स्वतंत्र होता हे वहीं अनुवाद एक भाषा के विचारों को दूसरी भाषा में उतारने में अनेक तरह से बंधा होता है। उन दोनों भाषाओं की सूक्ष्मतम जानकारी के अतिरिक्त विषय के तह तक पहुँचने की क्षमता जथा अभिव्यकित की पूर्ण कुशलता अच्छे अनुवादक के लिए अपेक्षित है।

समन्वय पक्ष

अनुवाद सिद्धान्त को स्पर्श करने वाले शास्त्रों में है सम्प्रेषण सिद्धान्त जिसकी मान्यताओं के अनुसार अनुवाद कार्य एक सम्प्रेषण व्यापार है, तथा तदनुसार उस पर वे सभी बातें लागू होती हैं, जो सम्प्रेषण व्यापार की प्रकृति में हैं, जैसे–सम्प्रेषण का शत्प्रतिशत् यथातथ न होना, अपूर्णता, उद्रिक्तता (व्यतिरिक्तता), आंशिक कृत्रिमता आदि। इसी से अनुवाद कार्य में शब्द–प्रति–शब्द तथा अर्थ–प्रति–अर्थ समानता के स्थान पर सन्देशस्तरीय समानता का औचित्य भी साधा जा सकता है। संक्रियात्मक दृष्टि से एक पाठ या प्रोक्ति अनुवाद कार्य का प्रवर्तन बिन्दु होता है। एक पाठ की अपनी संरचना होती है, भाषिक संसक्ति तथा सन्देशगत सुबद्धता की संकल्पनाओं द्वारा उसके सुगठित अथवा शिथिल होने की जाँच कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त एक पाठ को भाषाप्रकायों की एकीभूत समष्टि के रूप में देखते हुए, उसमें भाषा–प्रयोग शैलीओ के भाषाप्रकार्यमूलक वितरण के विषय में अधिक निश्चित जानकारी प्राप्त होती हैं। इसी से सम्बन्धित शास्त्र है, समाजभाषाशास्त्र तथा शैलीविज्ञान, जिसमें सामाजिक बोलियों तथा प्रयुक्तियों के अध्ययन के साथ सन्दर्भानुकूल भाषाप्रयोग की शैलीयों के वितरण की जानकारी अनुवाद सिद्धान्त के लिए वांछनीय है।

भाषा से समन्धित होने के कारण तर्कशास्त्र तथा भाषादर्शन भी अनुवाद सिद्धान्त को पुष्ट करते हैं। तर्कशास्त्र के अनुसार अनूदित पाठ के सत्यमूल्य की

परीक्षा अनुवाद की विशुद्धता को शुद्ध करने का आधार है। भाषादर्शन में होने वाले अर्थ सम्बन्धी चिन्तन से अनुवाद कार्य में अर्थ के अन्तरण या उसकी पुनरावृत्ति से सम्बन्धित समस्याओं को जानने में सहायता मिलती है। विटजेन्स्टीन की मान्यता 'भाषा में शब्द का 'प्रयोग' ही उसका अर्थ है'। अनुवाद सिद्धान्त के लिए इस कारण से विशेष प्रासंगिक है कि पाठ ही अनुवाद कार्य की इकाई है, जिसका सफल अर्थबोध अनुवाद की पहली आवश्यकता है। इस प्रकार वक्ता की विवक्षा में अर्थ का मूल खोजना, भाषिक अर्थ तथा भाषाबाह्य स्थिति (सन्दर्भ) अनुवाद सिद्धान्त के आवश्यक अंग हैं। अर्थ के अन्तरण में जहाँ उपर्युक्त मान्यताओं की एक भूमिका है, वहाँ अर्थगत द्विभाषिक समानता के निर्धारण में घटकीय विश्लेषण की पद्धति की विशेष उपयोगिता स्वीकार की गई है। यह बात विशेष रूप से ध्यान में ली जाती है कि जहाँ विविध शास्त्रों की प्रासंगिक मान्यताओं से अनुवाद सिद्धान्त का स्वरूप निर्मित है, वहाँ स्वयं अनुवाद सिद्धान्त उन शास्त्रों का एक विशिष्ट अंग है।

सन्तुलन पक्ष

अनुवाद सिद्धान्त का 'सामान्य' पक्ष भी है और विशिष्ट पक्ष भी, और यह इसका सन्तुलनशील स्वरूप है – सामान्य और विशिष्ट का सन्तुलन। अनुवाद की परिभाषा के अनुसार कहा जाता है कि अनुवाद व्यवहारतः विशिष्ट भाषाभेद के स्तर पर तथा इसीलिए सिद्धान्ततः सामान्य भाषा के स्तर पर होता है – अंग्रेजी भाषा के एक भेद पत्रकारिता की अंग्रेजी से हिन्दी भाषा के सममूल्य भेद पत्रकारिता की हिन्दी में। तदनुसार, युगपद् रूप से अनुवाद सिद्धान्त का एक सामान्य पक्ष भी है और विशिष्ट पक्ष भी। हम जो बात सामान्य के स्तर पर कहते हैं, उसे व्यावहारिक रूप में भाषाभेद के विशिष्ट स्तर पर उदाहृत करते हैं।

क्षेत्र

'यथासम्भव अधिकतम पाठ प्रकारों के लिए एक उपयुक्त तथा सामान्य अनुवाद प्रणाली का निर्धारण' ये अनुवाद के क्षेत्र सम्बन्धित एक विचारणीय प्रश्न माना जाता है। प्रणाली के निर्धारण के सम्बन्ध में अनुवाद प्रक्रिया की प्रकृति, अनुवाद (वस्तुतः अनुवाद कार्य) के विभिन्न प्रकार, अनुवाद के सूत्र तथा विभिन्न कोटि के पाठों के अनुवाद के निर्देश निश्चित करने के प्रारूप का निर्धारण, आदि पर विचार करना होता है। अनुवाद का मुख्य उद्देश्य, अनुवाद की

इकाई, अनुवाद का कला-कौशल-विज्ञान का स्वरूप, अनुवाद कार्य की सीमाएँ, आदि कुछ अन्य विषय हैं, जिन पर विचार अपेक्षित होता है।

मूलभाषा का ज्ञान

अनुवाद कार्य का मेरुदण्ड है मूलभाषा पाठ। इसकी संरचना, इसका प्रकार, भाषाप्रकार्य प्रारूप के अनुसार मूलपाठ का स्वरूप निर्धारण, आदि के साथ शब्दार्थ-व्यवस्था एवं व्याकरणिक संरचना के विश्लेषणात्मक बोधन के विभिन्न प्रारूप, उनकी शक्तियों और सीमाओं का आकलन, आदि के सम्बन्ध में सैद्धान्तिक चर्चा तथा इनके संक्रियात्मक ढाँचे का निर्धारण, इसके अन्तर्गत आने वाले मुख्य बिन्दु हैं। अनुवाद सिद्धान्त के ही अन्तर्गत कुछ गौण बिन्दुओं की चर्चा भी होती है - रूपक, व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ, पारिभाषिक शब्द, आद्याक्षर (परिवर्णी) शब्द, भौगोलिक नाम, व्यापारिक नाम, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के नाम, सांस्कृतिक शब्द, आदि के अनुवाद के लिए कौन-सी प्रणाली अपनाई जाए, साहित्यिक रचनाओं, वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय लेखन, प्रचार साहित्य आदि के लिए अनुवाद प्रणाली का रूप क्या हो, इत्यादि।

विविध शास्त्रों का ज्ञान

इसी से सम्बन्धित एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु है, अनुवाद की विभिन्न युक्तियाँ - लिप्यन्तरण, शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद, शब्दानुगामी अनुवाद, आगत अनुवाद, व्याख्या, विस्तरण, संक्षेपण, सांस्कृतिक पर्याय, स्वभाषीकरण आदि। अनुवाद का काम अन्ततोगत्वा एक ही व्यक्ति करता है। एकाकी अनुवाद में तो अनुवादक अकेला होता ही है, सहयोगात्मक अनुवाद में भी, अन्तिम अवधि में, सम्पादन का कार्य अनुवादक को अकेले करना होता है। अतः अनुवादक के साथ अनेक दायित्व जुड़ जाते हैं और कार्य के सफल निष्पादन में उससे अनेक अपेक्षाएं रहती हैं। भाषा ज्ञान, विषय ज्ञान, अभिव्यक्ति कौशल, व्यक्तिगत गुण आदि की दृष्टि से अनुवादक से होने वाली अपेक्षाओं पर विचार करना होता है। अनुवाद शिक्षा और अनुवाद समीक्षा, दो अन्य महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं।

शिक्षा

अनुवाद की शिक्षा भाषा-अधिगम के, विशेष रूप से अन्य भाषा अधिगम के, साधन के रूप में दी जा सकती है (भाषाशिक्षण की द्विभाषिक पद्धति भी इसी के अन्तर्गत है)। इसमें अनुवाद शिक्षण, भाषा-शिक्षण के अधीन है तथा एक

मध्यवर्ती अल्पकालिक अभ्यासक्रम में इसकी योजना की जाती है, जिसमें शिक्षण के सोपान तथा लक्ष्य बिन्दु स्पष्ट तथा निश्चित होते हैं। इसमें शिक्षार्थी का लक्ष्य भाषा सीखना है, अनुवाद करना नहीं। शिक्षा के दूसरे चरण में अनुवाद का अभ्यास, अनुवाद को एक शिल्प या कौशल के रूप में सीखने के लिए किया जाता है, जिसकी प्रगत अवस्था 'अनुवाद कला है' की शब्दावली में निर्दिष्ट की जाती है। इस स्थिति में जो भाषा (मूलभाषा या लक्ष्यभाषा) अनुवादक की अपनी नहीं, उसके अधिगम को भी आनुभंगिक रूप में पुष्ट करता जाता है। अभ्यास सामग्री के रूप में पाठ प्रकारों की विविधता तथा कठिनाई की मात्रा के अनुसार पाठों का अनुस्तरण करना होता है। यदि एक सजाती, विजातीय, स्वेदशी या विदेशी भाषा को सीखने की योजना में उससे या उसमें अनुवाद करने की क्षमता को विकसित करना एक उद्देश्य हो तो अनुवाद-शिक्षण के दोनों सोपानों – साधनपरक तथा साध्यपरक – को अनुस्तरित रूप में देखा जा सकता है।

समीक्षा

अनुवाद समीक्षा, अनुवाद सिद्धान्त का ऐसा अंग है, जिसका शिथिल रूप में व्यवहार, अनूदित कृति का एक सामान्य पाठक भी करता है, परन्तु जिसकी एक पर्याप्त स्पष्ट सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि है। सिद्धान्तपुष्ट अनुवाद समीक्षा एक ज्ञानात्मक व्यापार है। इसमें एक मूलपाठ के एक या एक से अधिक अनुवादों की समीक्षा की जाती है, तथा मूल की तुलना में अनुवाद का या मूल के विभिन्न अनुवादों का पारस्परिक तुलना द्वारा मूल्यांकन किया जाता है। इसके तीन सोपान हैं – मूलभाषा पाठ तथा लक्ष्यभाषा पाठ का विश्लेषण, दोनों की तुलना (प्रत्यक्ष तथा परोक्ष समानताओं की तालिका, और अभिव्यक्ति विच्छेदों का परिचयन), और अन्त में लक्ष्य भाषागत विशुद्धता, उपयुक्तता और स्वाभाविकता की दृष्टि से अनुवाद का मूल्यांकन। मूल्यांकन के सोपान पर अनुवाद की सफलता की जाँच के लिए विभिन्न परीक्षण तकनीकों का प्रयोग किया जाता है।

प्रकार

अनुवाद को कला और विज्ञान दोनों ही रूपों में स्वीकारने की मानसिकता इसी कारण पल्लवित हुई है कि संसार भर की भाषाओं के पारस्परिक अनुवाद की कोशिश अनुवाद की अनेक शैलियों और प्रविधियों की ओर इशारा करती हैं। अनुवाद की एक भंगिमा तो यही है कि किसी रचना

का साहित्यिक-विधा के आधार पर अनुवाद उपस्थित किया जाए। यदि किसी नाटक का नाटक के रूप में ही अनुवाद किया जाए तो ऐसे अनुवादों में अनुवादक की अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा का वैशिष्ट्य भी अपेक्षित होता है। अनुवाद का एक आधार अनुवाद के गद्यात्मक अथवा पद्यात्मक होने पर भी आश्रित है। ऐसा पाया जाता है कि अधिकांशत: गद्य का अनुवाद गद्य में अथवा पद्य में ही उपस्थित हो, लेकिन कभी-कभी यह क्रम बदला हुआ नजर आता है। कई गद्य कृतियों के पद्यानुवाद मिलते हैं, तो कई काव्यकृतियों के गद्यानुवाद भी उपलब्ध हैं। अनुवादों को विषय के आधार पर भी वर्गीकृत किया जाता है और कई स्तरों पर अनुवाद की प्रकृति के अनुरूप उसे मूल-केंद्रित और मूलमुक्त दो वर्गों में भी बाँटा गया है। अनुवाद के जिन सार्थक और प्रचलित प्रभेदों का उल्लेख अनुवाद विज्ञानियों ने किया है, उनमें शब्दानुवाद, भावानुवाद, छायानुवाद, सारानुवाद, व्याख्यानुवाद, आशुअनुवाद और रूपांतरण को सर्वाधिक स्वीकृति मिली है।

शब्दानुवाद

स्रोतभाषा के प्रत्येक शब्द का लक्ष्यभाषा के प्रत्येक शब्द में यथावत् अनुवादन को शब्दानुवाद कहते हैं। 'मक्षिका स्थाने मक्षिका' पर आधारित शब्दानुवाद वास्तव में अनुवाद की सबसे निकृष्ट कोटि का परिचायक होता है। प्रत्येक भाषा की प्रकृति अन्य भाषा से भिन्न होती है और हर भाषा में शब्द के अनेकानेक अर्थ विद्यमान रहते हैं। इसीलिए मूल भाषा की हर शब्दाभिव्यक्ति को यथावत् लक्ष्यभाषा में नहीं अनुवादित किया जा सकता। कई बार ऐसे शब्दानुवादों के कारण बड़ी हास्यास्पद स्थिति उत्पन्न हो जाती है। संस्कृत से हिंदी में किये गये अनुवाद को कई बार प्रकृति की साम्यता के कारण सह्य होते हैं, लेकिन यूरोपीय परिवार की भाषाओं से किये गए अनुवाद में अर्थ और पदक्रम के दोष सामान्यत: नजर आते हैं। वास्तव में यदि स्रोत और लक्ष्यभाषा में अर्थ, प्रयोग, वाक्य-विन्यास और शैली की समानता हो, तभी शब्दानुवाद सही होता है, अन्यथा यंत्रावत् किये गए शब्दानुवाद अबोधगम्य, हास्यास्पद एवं कृत्रिम हो जाते हैं।

भावानुवाद

ऐसे अनुवादकों में स्रोत-भाषा के शब्द, पदक्रम और वाक्य-विन्यास पर ध्यान न देकर अनुवाद मूलभाषा की विचार-सामग्री या भावधारा पर अपने

आपको केंद्रित करता है। ऐसे अनुवादों में स्रोतभाषा की भाव-सामग्री को उपस्थित करना ही अनुवादक का लक्ष्य होता है। भावानुवाद की प्रक्रिया में कभी-कभी मूल रचना जैसा मौलिक वैभव आ जाता है, लेकिन कई बार पाठकों को यह शिकायत होती है कि अनुवादक ने मूलभाषा की भावधारा को समझे बिना, लक्ष्य-भाषा की प्रकृति के अनुरूप भाव सामग्री प्रस्तुत कर दी है। जब पाठक किसी रचना को रचनाकार के अभिव्यक्ति-कौशल की दृष्टि से पढ़ना चाहता है, तो भावानुवाद उसकी लक्ष्यसिद्धि में सहायक नहीं होता।

छायानुवाद

संस्कृत नाटकों में लगातार ऐसे प्रयोग मिलते हैं कि उनकी स्त्रा-पात्रातथा सेवक, दासी आदि जिस प्राकृत भाषा का प्रयोग करते हैं, उसकी संस्कृत छाया भी नाटक में विद्यमान रहती है। ऐसे ही प्रयोगों से छायानुवाद का उद्‌भव हुआ है। अनुवाद की प्रविधि के अंतर्गत अनुवादक न शब्दानुवाद की तरह केवल मूल शब्दों का अनुसरण करता है और न सिर्फ भावों का ही परिपालन करता है, बल्कि मूलभाषा से पूरी तरह बंधा हुआ उसकी छाया में लक्ष्यभाषा में वर्ण्य-विषय की प्रस्तुति करता है।

सारानुवाद

इस अनुवाद में मूलभाषा की सामग्री का संक्षिप्त और अतिसंक्षिप्त अनुवाद लक्ष्यभाषा में किया जाता है। लंबे भाषणों और वाद-विवादों के अनुवाद प्रस्तुत करने में यह विधि सहायक होती है।

व्याख्यानुवाद

ऐसे अनुवादों में मूलभाषा की सामग्री का लक्ष्यभाषा में व्याख्या सहित अनुवाद उपस्थित किया जाता है। इसमें अनुवादक अपने अध्ययन और दृष्टिकोण के अनुरूप मूल भाषा की सामग्री की व्याख्या अपेक्षित प्रमाणों और उदाहरणों आदि के साथ करता है। लोकमान्य तिलक ने 'गीता' का अनुवाद इस शैली में किया है। संस्कृत के बहुत सारे भाष्यकारों और हिन्दी के टीकाकारों ने व्याख्यानुवाद की शैली का ही अनुगमन किया है। स्वभावत: व्याख्यानुवाद अथवा भाष्यानुवाद मूल से बहुत बड़ा हो जाता है और कई स्तरों पर तो एकदम मौलिक बन जाता है।

आशु अनुवाद

जहाँ अनुवाद दुभाषिये की भूमिका में काम करता है, वहाँ वह केवल आशुअनुवाद कर पाता है। दो दूरस्थ देशों के भिन्न भाषा–भाषी जब आपस में बातें करते हैं, तो उनके बीच दुभाषिया संवाद का माध्यम बनता है। ऐसे अवसरों पर वे अनुवाद शब्द और भाव की सीमाओं को तोड़कर अनुवादक की सत्वर अनुवाद क्षमता पर आधारित हो जाता है। उसके पास इतना समय नहीं होता है कि शब्द के सही भाषायी पर्याय के बारे में सोचे अथवा कोशों की सहायता ले सके। कई बार ऐसे दुभाषिये के आशुअनुवाद के कारण दो देशों में तनाव की स्थिति भी बन जाती है। आशुअनुवाद ही अब भाषांतरण के रूप में चर्चित है।

रूपान्तरण

अनुवाद के इस प्रभेद में अनुवादक मूलभाषा से लक्ष्यभाषा में केवल शब्द और भाव का अनुवादन नहीं करता, अपितु अपनी प्रतिभा और सुविधा के अनुसार मूल रचना का पूरी तरह रूपांतरण कर डालता है। विलियम शेक्सपीयर के प्रसिद्ध नाटक 'मर्चेन्ट ऑफ वेनिस' का अनुवाद भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'दुर्लभ बन्धु' अर्थात् 'वंशपुर का महाजन' नाम से किया है, जो रूपांतरण के अनुवाद का अन्यतम उदाहरण है। मूल नाटक के एंटोनियो, बैसोलियो, पोर्शिया, शाइलॉक जैसे–नामों को भारतेंदु ने क्रमशः अनंत, बसंत, पुरश्री, शैलाक्ष जैसे–रूपांतर प्रदान किये हैं। ऐसे रूपांतरण में अनुवाद की मौलिकता सबसे अधिक उभरकर सामने आती है।

अनुवादक के इन प्रभेदों से ज्ञापित होता है कि संसार भर की भाषाओं में अनुवाद की कई शैलियाँ और प्रविधियाँ अपनाई गई हैं, लेकिन यदि अनुवादक सावधानीपूर्वक शब्द और भाव की आत्मा का स्पर्श करते हुए मूलभाषा की प्रकृति के अनुरूप लक्ष्यभाषा में अनुवाद उपस्थित करे तो यही आदर्श अनुवाद होगा। इसीलिए श्रेष्ठ अनुवादक को ऐसा कुशल चिकित्सक कहा जाता है, जो बोतल में रखी दवा को अपनी सिरिंज के द्वारा रोगी के शरीर में यथावत पहुँचा देता है।

अनुवाद के सिद्धान्त

अनुवाद सिद्धान्त कोई अपने में स्वतन्त्रा, स्वनिष्ठ, सिद्धान्त नहीं है और न ही यह उस अर्थ में कोई 'विज्ञान' ही है, जिस अर्थ में गणितशास्त्र,

भाषाशास्त्र, समाजशास्त्र आदि हैं। इसकी ऐसी कोई विशिष्ट अध्ययन सामग्री तथा अध्ययन प्रणाली भी नहीं, जो अन्य शास्त्रों की अध्ययन सामग्री तथा प्रणाली से इस रूप में भिन्न हो कि, इसका मूलतः स्वतन्त्र व्यक्तित्त्व बन सके। वस्तुतः, यह अनुवाद के विभिन्न मुद्दों से सम्बन्धित ज्ञानात्मक सूचनाओं का एक निकाय है, जिससे अनुवाद को एक प्रक्रिया (अनुवाद कार्य), एक निष्पत्ति (अनुदित पाठ), तथा एक सम्बन्ध (सममूल्यता) के रूप में समझने में सहायता मिलती है। इसके लिए सद्यः 'अनुवाद विद्या (ट्रांसलेशन स्टड़ीज़), 'अनुवाद विज्ञान' (साइंस ऑफ ट्रांसलेशन), और 'अनुवादिकी' (ट्रांसलेटालजी) शब्द भी प्रचलित हैं।

अनुवाद, भाषाप्रयोग सम्बन्धी एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसकी एक सुनिश्चित परिणति होती है तथा जिसके फलस्वरूप मूल एवं निष्पत्ति में 'मूल्य' की दृष्टि से समानता का सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। इस प्रकार प्रक्रिया, निष्पत्ति, और सम्बन्ध की संघटित इकाई के रूप में अनुवाद सम्बन्धी सामान्य प्रकृति की जानकारी ही अनुवाद सिद्धान्त है, जो मूलतः एकान्वित न होते हुए भी संग्रहणीय, रोचक, ज्ञानवर्धक, तथा एक सीमा तक वास्तविक अनुवाद कार्य के लिए उपादेय है। अपने विकास की वर्तमान अवस्था में यह बहु-विद्यापरक अनुशासन बन गया है। जिसका ज्ञान प्राप्त करना स्वयमेव एक लक्ष्य है तथा जो जिज्ञासु पाठक के लिए बौद्धिक सन्तोष का स्रोत है।

अनुवाद सिद्धान्त की अनुवाद कार्य में उपयोगिता का आकलन के समय इस सामयिक तथ्य को ध्यान में रखा जाता है कि वर्तमान काल में अनुवाद एक संगठित व्यवसाय हो गया है, जिसमें व्यक्तिगत रुचि की अपेक्षा व्यावसायिक-सामाजिक आवश्यकता से प्रेरित प्रशिक्षणार्थियों की संख्या अधिक होती है। विशेष रूप से ऐसे लोगों के लिए तथा सामान्य रूप से रुचिशील अनुवादकों के लिए अनुवाद कार्य में दक्षता विकसित करने में अनुवाद सिद्धान्त के योगदान को निरूपित किया जाता है। इस योगदान का सैद्धान्तिक औचित्य इस दृष्टि से भी है कि अनुवाद कार्य सर्जनात्मक होने के कारण ही गौण रूप से समीक्षात्मक भी होता है। इसे 'सर्जनात्मक-समीक्षात्मक' भी कहा जाता है।

सर्जनात्मकता को विशुद्ध तथा पुष्ट करने के लिए जो समीक्षात्मक स्फुरणाएँ अनुवादक में होती हैं, वे अनुवाद सिद्धान्त के ज्ञान से प्रेरित होती हैं। अनुवाद की विशुद्धता की निष्पत्ति में सिद्धान्त ज्ञान का योगदान रहता है। साथ ही, अनुवाद प्रक्रिया की जानकारी उसे पर्याय-चयन में अधिक सावधानी से

काम करने में सहायता कर सकती है। इससे अधिक महत्त्वपर्ण बात मानी जाती है कि वह मूर्खतापूर्ण त्रुटियाँ करने से बच सकता है। मूलपाठ का भाषिक, विषयवस्तुगत, तथा सांस्कृतिक महत्त्व का कोई अंश अनूदित होने से न रह जाए, इसके लिए अपेक्षित सतर्क दृष्टि को विकसित करने में भी अनुवाद सिद्धान्त का ज्ञान अनुवादक की सहायता करता है। इसी प्रश्न को दूसरे छोर से भी देखा जाता है। कहा जाता है कि जो लोग मौलिक लिख सकते हैं, वे लिखते हैं, जो लिख नहीं पाते वे अनुवाद करते हैं, और जो लोग अनुवाद नहीं कर सकते, वे अनुवाद के बारे में चर्चा किया करते हैं। वस्तुत: इन तीनों में परिपूरकता है – ये तीनों कुछ भिन्न-भिन्न हैं – तथापि यह माना जाता है कि अनुवाद विषयक चर्चा को अधिक प्रामाणिक तथा विशद बनाने में अनुवाद सिद्धान्त के विद्यार्थी को अनुवाद कार्य सम्बन्धी अनुभव सहायक होता है। यह बात कुछ ऐसा ही है कि सर्जनात्मकता से अनुभव के स्तर पर परिचित साहित्य समीक्षक अपनी समीक्षात्मक प्रतिक्रियाओं को अधिक विश्वासोत्पादक रीति से प्रस्तुत कर सकता है।

अनुवाद सिद्धान्त का विकास

अनुवाद सिद्धान्त के वर्तमान स्वरूप को देखते हुए इसके विकास कों विहंग-दृश्य से दो चरणों में विभक्त करके देखा जाता है –

(1) आधुनिक भाषाविज्ञान, विशेष रूप से अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, के विकास से पूर्व का युग-बीसवीं सदी पूर्वार्धय

(2) इसके पश्चात् का युग-बीसवीं सदी उत्तरार्ध।

सामान्य रूप से कहा जाता है कि, सिद्धान्त विकास के विभिन्न युगों में और उसी विभिन्न धाराओं में विवाद का विषय यह रहा कि, अनुवाद शब्दानुगामी हो या अर्थानुगामी, यद्यपि विवाद की 'भाषा' बदलती रही। ईसापूर्व प्रथम शताब्दी में रोमन युग से आरम्भ होता है, जब होरेंस तथा सिसरो ने शब्दानुगामी तथा अर्थानुगामी अनुवाद में अन्तर स्पष्ट किया तथा साहित्यिक रचनाओं के लिए अर्थानुगामी अनुवाद को प्रधानता दी। सिसरो ने अच्छे अनुवादक को व्याख्याकार तथा अलेकार प्रयोग में दक्ष बताया। रोमन युग के पश्चात् जिसमें साहित्यिक अनुवादों की प्रधानता थी, दूसरी शक्तिशाली धारा बाइबिल अनुवाद की है। सन्त जेरोम (400 ईस्वी) ने भी बाइबिल के अनुवाद में अर्थानुगामिता को प्रधानता दी तथा अनुवाद में दैनन्दिन के व्यवहार की भाषा के प्रयोग का समर्थन किया।

इसमें विचार यह था कि, बाइबिल का सन्देश जनसाधारण पर्यन्त पहुँच जाए और इसके निमित्त जनसाधारण के लिए बोधगम्य भाषा का प्रयोग किया जाए, जिसमें स्वभावतः अर्थानुगामी दृष्टिकोण को प्रधानता मिली।

जान वाइक्लिफ (1330-84) तथा विलियम टिंड्ल (1494-1936) ने इस प्रवृत्ति का समर्थन किया। बोधगम्य तथा सुन्दर भाषा में, तथा शैली एवं अर्थ के मध्य सामंजस्य की रक्षा करते हुए, बाइबिल के अनुवाद की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिला, जिसमें मार्टिन लूथर (1530) का योगदान उल्लेखनीय रहा। तृतीय धारा शिक्षाक्रम में अनुवाद के योगदान से सम्बन्धित रही है। क्विटिलियन (प्रथम शताब्दी) ने अनुवाद तथा समभाषी व्याख्यात्मक शब्दान्तरण की उपयोगिता को लेखन अभ्यास तथा भाषण-दक्षता विकसित करने के सन्दर्भ में देखा। जिसका मध्यकालीन यूरोप में अधिक प्रसार हुआ। इससे स्थानीय भाषाओं का स्तर ऊपर उठा तथा उनकी अभिव्यक्ति सामर्थ्य में वृद्धि भी हुई। समृद्ध और विकसित भाषाओं से विकासशील भाषाओं में अनुवाद की प्रवृत्ति मध्यकालीन यूरोप के साहित्यिक जगत् की एक प्रमुख प्रवृत्ति है, जिसे ऊर्ध्वस्तरी आयाम की प्रवृत्ति कहा गया और इसी समय प्रचलित समान रूप से विकसित या अविकसित भाषाओं के मध्य अनुवाद की प्रवृत्ति को समस्तरी आयाम की प्रवृत्ति के रूप में देखा गया।

मध्यकालीन यूरोप के आरम्भिक सिद्धान्तकारों में फ्रेंच विद्वान ई. दोलेत (1509-46) ने 1540 में प्रकाशित निबन्ध में अनुवाद के पाँच विधि-निषेध प्रस्तावित किए –

(क) अनुवादक को मूल लेखक की भाषा की पूरा ज्ञान हो, परन्तु वह चाहे तो मूलभाषा की दुर्बोधता और अस्पष्टता को दूर कर सकता है।

(ख) अनुवादक का मूलभाषा और लक्ष्यभाषा का पूर्ण ज्ञान हो,

(ग) अनुवादक शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद से बचे,

(घ) अनुवादक दैनन्दिन के व्यवहार की भाषा का प्रयोग करे,

(ड़) अनुवादक ऐसा शब्दचयन तथा शब्दविन्यास करे कि उचित प्रभाव की निष्पत्ति हो।

जार्ज चौपमन (1559-1634) ने भी इसी प्रकार 'इलियड' के सन्दर्भ में अनुवाद के तीन सूत्र प्रस्तावित किए –

(क) शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद से बचा जाए,

(ख) मूल की भावना पर्यन्त पहुँचने का प्रयास किया जाए,

(ग) अनुवाद, विद्वत्ता के स्पर्श के कारण अति शिथिल न हो।

यूरोप के पुनर्जागरण युग में अनुवाद की धारा एक गौण प्रवृत्ति रही। इस युग के अनुवादकों में अर्थ की प्रधानता के साथ पाठक के हितों की रक्षा की प्रवृत्ति दिखाई देती है। हालैण्ड (1552-1637) के अनुवाद में मूलपाठ के अर्थ में परिवर्तन-परिवर्धन द्वारा अनूदित पाठ के संस्कार की झलक दीखती है। सत्राहवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में सर जान डेनहम (1615-69) ने कविता के अनुवाद में शब्दानुगामी होने की प्रवृत्ति का विरोध किया और मूल पाठ के केन्द्रीय तत्त्व को ग्रहण कर लक्ष्य भाषा में उसके पुनस्सर्जन की बात कही, उसे 'अनुसर्जन' (ट्रांसक्रिएशन) कहा जाने लगा।

इस अविध में जान ड्राइडन (1631-1700) ने महत्त्वपर्ण विचार प्रकट किए। उन्होंने अनुवाद कार्य की तीन कोटियाँ निर्धारित की–

(क) शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद (मेटाफ्रेझ),

(ख) अर्थानुगामी अनुवाद (पैराफ्रेझ),

(ग) अनुकरण (इमिटेशन)।

ड्राइडन के अनुसार (क) और (ख) के मध्य का मार्ग अवलम्बन योग्य है। उनके अनुसार कविता के अनुवाद में अनुवादक को दोनों भाषाओं पर अधिकार हो, उसे मूल लेखक के साहित्यिक गुणों और उसकी 'भावना' का ज्ञान हो, तथा वह अपने समय के साहित्यिक आदर्शों का पालन करे। अलेग्जेंडर पोप (1688-1744) ने भी डाइडन के समान ही विचार प्रकट किए।

अठारहवीं शताब्दी में अनुवाद की अतिमूलनिष्ठता तथा अतिस्वतन्त्रता के विवाद से एक सोपान आगे बढ़कर एक समस्या थी कि अपने समकालीन पाठक के प्रति अनुवादक का कर्तव्य। पाठक की ओर अत्यधिक झुकाव के कारण अनूदित पाठ का स्वरूप मूल पाठ से काफी दूर पड़ जाता था। इस पर डॉ. सैम्युएल जानसन (1709-84) ने कहा कि, अनुवाद में मूलपाठ की अपेक्षा परिवर्धन के कारण उत्पन्न परिष्कृति का स्वागत किया जा सकता है, परन्तु मूलपाठ की हानि न हो ये ध्यान देना चाहिये। उन्होंने यह भी कहा कि जिस प्रकार लेखक अपने समकालीन पाठक के लिए लिखता है, उसी प्रकार अनुवादक भी अपने समकालीन पाठक के लिए अनुवाद करता है। डॉ. जानसन की सम्मति में अनुवाद की मूलनिष्ठता तथा पाठकधर्मिता में सन्तुलन मिलता है। उन्होंने अनुवादक को ऐसा चित्रकार या

अनुकर्ता कहा जो मूल के प्रति निष्ठावान होते हुए भी उद्दिष्ट दर्शक के हितों का ध्यान रखता है।

एलेग्जेंडर फ्रेजर टिटलर जिनकी पुस्तक प्रिंसिपल्स आफ ट्रांसलेशन (1791) अनुवाद सिद्धान्त पर पहली व्यवस्थित पुस्तक मानी जाती है। टिटलर ने तीन अनुवाद सूत्र प्रस्तावित किए –

(क) अनुवाद में मूल रचना के भाव का पूरा अनुरक्षण हो,

(ख) अनुवाद की शैली मूल के अनुरूप हो,

(ग) अनुवाद में मूल वाली सुबोधता हो।

टिटलर ने ही यह कहा कि, अनुवाद में मूल की भावना इस प्रकार पूर्णतया संक्रान्त हो जाए कि उसे पढकर पाठकों को उतनी ही तीव्र अनुभूति हो, जितनी मूल के पाठकों को हुई थी, प्रभावसमता का सिद्धान्त यही है।

अनुवाद की प्रक्रिया

सैद्धान्तिक दृष्टि से 'अनुवाद कैसे होता है' का निर्वैयक्तिक विवरण ही अनुवाद की प्रक्रिया है। भाषा व्यवहार की एक विशिष्ट विधा के रूप में अनुवाद प्रक्रिया का स्पष्टीकरण एक ऐसी दृष्टि की अपेक्षा रखता है, जिसमें अनुवाद कार्य सम्बन्धी बहिर्लक्षी परिस्थितियों और भाषा-संरचना एवं भाषा-प्रयोग सम्बन्धी अन्तर्लक्षी स्थितियों का सन्तुलन हो। उपर्युक्त परिस्थितियों से सम्बन्धित सैद्धान्तिक प्रारूपों के सन्दर्भ में यह स्पष्टीकरण प्रस्तुत करना आधुनिक अनुवाद सिद्धान्त का वैशिष्ट्य माना जाता है। तदनुसार चिन्तन के अंग के रूप में अनुवाद की इकाई, अनुवाद का पाठक, और कला, कौशल (या शिल्प) एवं विज्ञान की दृष्टि से अनुवाद के स्वरूप पर दृष्टिपात के साथ-साथ अनुवाद की प्रक्रिया का विशद विवरण किया जाता है।

अनुवाद की इकाई

सामान्यत: सन्देश का अनुवाद किया जाता है–अत: अनुवाद की इकाई भी सन्देश को माना जाता है। विभिन्न प्रकार के अनुवादों में सन्देश की अभिव्यंजक भाषिक इकाई का आकार भी भिन्न-भिन्न रहता है। यान्त्रिक अनुवाद में एक रूप या पद अनुवाद की इकाई होता है, परन्तु मानव अनुवाद में इकाई का आकार अधिक विशाल होता है। इसी प्रकार आशु मौखिक अनुवाद (अनुभाषण) में यह इकाई एक वाक्य होती है, तो लिखित अनुवाद में इकाई का आकार वाक्य से

बड़ा होता है (और क्रमिक मौखिक अनुवाद की इकाई भी एक वाक्य होती है, कभी एकाधिक वाक्यों का समुच्चय भी)।

लिखित माध्यम के मानव अनुवाद में, अनुवाद की इकाई एक पाठ को माना जाता है। अनुवादक पाठ स्तर के सन्देश का अनुवाद करते हैं। पाठ के आकार की सीमा एक वाक्य से लेकर एक सम्पूर्ण पुस्तक या पुस्तकों के एक विशिष्ट समूह पर्यन्त कुछ भी हो सकती है, परन्तु एक सन्देश उसमें अपनी पूर्णता में अभिव्यक्त हो जाता हो ये आवश्यक है। उदाहरण के लिए, किसी सार्वजनिक सूचना या निर्देश का एक वाक्य ही पूर्ण सन्देश बन सकता है। जैसे–'प्रवेश वर्जित' है। दूसरी ओर 'रंगभूमि' या 'कामायनी' की पूरी पुस्तक ही पाठ स्तर की हो सकती है। भौतिक सुविधा की दृष्टि से अनुवादक पाठ को तर्कसंगत खण्डों में बाँटकर अनुवाद कार्य करते हैं, ऐसे खण्डों को अनुवादक पाठांश कह सकते हैं अथवा तात्कालिक सन्दर्भ में उन्हें ही पाठ भी कहा जाता है। इन्हें अनुवादक अनुवाद की तात्कालिक इकाई कहते हैं तथा सम्पूर्ण पाठ को अनुवाद की पूर्ण इकाई।

पाठ की संरचना

पाठ की संरचना का ज्ञान, अनुवाद प्रक्रिया को समझने में विशेष सहायक माना जाता है। पाठ संरचना के तीन आयाम माने गये हैं – पाठगत, पाठसहवर्ती तथा अन्य पाठपरक। संकेतविज्ञान की मान्यता के अनुसार तीनों का समकालिक अस्तित्त्व होता है तथा ये तीनों अन्योन्याश्रित होते हैं।

पाठगत आयाम

पाठगत (पाठान्तर्वर्ती) आयाम पाठ का आन्तरिक आयाम है, जिसमें उसके भाषा पक्ष का ग्रहण होता है। दोनों ही स्थितियों में सुगठनात्मकता पाठ का आन्तरिक गुण है। पाठ की पाठगत संरचना के दो पक्ष हैं –

(1) वाक्य के अन्तर्गत आने वाली इकाइयों का अधिक्रम,

(2) भाषा–विश्लेषण के विभिन्न स्तरों पर, अनुभव होने वाली संसक्ति।

वाक्य की इकाइयाँ, वाक्य, उपवाक्य, पदबन्ध, पद और रूप (प्रत्यय) इस अधिक्रम में संयोजित होती हैं, परन्तु पाठ की दृष्टि से यह बात महत्त्वपूर्ण है कि एक से अधिक वाक्यों वाले पाठ के वाक्य अन्तरवाक्ययोजकों द्वारा इस प्रकार समन्वित होते हैं कि, पूरे पाठ में संसक्ति का गुण अनुभव होने लगता है।

परन्तु संसक्ति तत्पर्यन्त सीमित नहीं। उसे हम पाठ विश्लेषण के विभिन्न स्तरों पर भी अनुभव कर सकते हैं। तदनुसार सन्दर्भगत संसक्ति, शब्दगत संसक्ति, और व्याकरणिक संसक्ति की बात की जाती है।

पाठसहवर्ती आयाम

पाठसहवर्ती आयाम में पाठ की विषयवस्तु, उसकी विशिष्ट विधा, उसका सामाजिक-सांस्कृतिक पक्ष, पाठ के समय या लेखक का अभिव्यक्तिपरक विशिष्ट आशय, उद्दिष्ट पाठक का सामाजिक व्यक्तित्त्व और उसकी आवश्यकता आदि का अन्तर्भाव होता है। पाठसहवर्ती आयाम के उपर्युक्त पक्ष परस्पर इस प्रकार सुबद्ध रहते हैं कि सम्पूर्ण पाठ एकान्वित इकाई के रूप में अनुभव होता है। यह स्पष्टतया माना जाता है कि, पाठ में पाठगत आयाम से ही पाठसहवर्ती आयाम की अभिव्यक्ति होती है और पाठसहवर्ती आयाम से पाठगत आयाम अनुशासित होता है। इस प्रकार ये दोनों अन्योंन्याश्रित हैं। पाठभेद से सुगठनात्मकता की गहनता में भी अन्तर आ जाता है - अनुभवी पाठक अपने अभ्यासपुष्ट अन्तर्जन से ग्रहण करता है। तदनुसार, साहित्यिक रचना में सुगठनात्मकता की जो गहनता उपलब्ध होती है वह अन्तिम विवरण में अनुभूत नहीं होती।

पाठपरक आयाम

पाठ संरचना के अन्य पाठपरक आयाम में एक विशिष्ट पाठ की, उसके समान या भिन्न सन्दर्भ वाले अन्य पाठों से सम्बन्ध की चर्चा होती है। उदाहरण के लिए, एक वस्त्र के विज्ञापन की भाषा की, प्रसाधन सामग्री के विज्ञापन की भाषा से प्रयोग शैली की दृष्टि से जो समानता होगी तथा बैंकिग सेवा के विज्ञापन से जो भिन्नता होगी वो सम्बन्ध पर चर्चा की जाती है।

विभिन्न प्रारूप

इस में अनुवाद प्रक्रिया के प्रमुख प्रारूपों की प्रक्रिया सम्बन्धी चिन्तन के विभिन्न पक्षों को जानने के लिये चर्चा होती है। प्रारूपकार प्रायः अपनी अनुवाद परिस्थितियों तथा तत्सम्बन्धी चिन्तन से प्रेरित होने के कारण प्रक्रिया के कुछ ही पक्षों पर विशेष बल दे पाते हैं। सर्वांगीणता में इस न्यूनता की पूर्ति इस रूप में हो जाती है कि, विवेचित पक्ष के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी मिल जाती है। इस दृष्टि से बाथगेट (1981) द्रष्टव्य है। अनुवाद प्रक्रिया के प्रारूपों की रचना

के पीछे दो प्रेरक तत्त्व प्रधान रूप से माने जाते हैं –मानव अनुवादकों का प्रशिक्षण तथा यन्त्र अनुवाद का यान्त्रिक पक्ष। इन दोनों की आवश्यकताओं से प्रेरित होकर अनुवाद प्रक्रिया के सैद्धान्तिक स्पष्टीकरण प्रस्तुत किए गए। बहुधा केवल मानव अनुवादकों के प्रशिक्षण की आवश्यकता से प्रेरित अनुवाद प्रक्रिया प्रारूपों से होती है। अनुप्रयोगात्मक आयाम में इनकी उपयोगिता स्पष्ट की जाती है।

सामान्य सन्दर्भ

अनुवाद प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु है लक्ष्यभाषा में मूलभाषा पाठ के अनुवाद पर्याय प्रस्तुत करना। यह प्रक्रिया एकपक्षीय होती है – मूलभाषा से लक्ष्यभाषा में। परन्तु भाषाओं की यह स्थिति अन्त:परिवर्त्य होती है – जो प्रथम बार में मूलभाषा है, वह द्वितीय बार में लक्ष्यभाषा हो सकती है। इस प्रक्रिया को सम्प्रेषण सिद्धान्त से समर्थित मानचित्र द्वारा भी समाझाया जाता है, जो निम्न प्रकार से है (न्यूमार्क 1969) –

(1) वक्ता लेखक का विचार, (2) मूलभाषा की अभिव्यक्ति रुढियाँ (3) मूलभाषा पाठ, (4) प्रथम श्रोताध्पाठक की प्रतिक्रिया, (5) अनुवादक का अर्थबोध, (6) लक्ष्यभाषा की अभिव्यक्ति रुढियाँ, (7) लक्ष्यभाषा पाठ, (8) द्वितीय श्रोताध्पाठक की प्रतिक्रिया

इस प्रारूप के अनुसार अनुवाद प्रक्रिया के कुल आठ सोपान हो सकते हैं। लेखक या वक्ता के मन में उठने वाला विचार मूलभाषा की अभिव्यक्ति रूढियों में बँधकर मूलभाषा के पाठ का आकार ग्रहण करता है, जिससे पहले (मूलभाषा के) श्रोता या पाठक के मन में वक्ता/लेखक के विचार के अनुरूप प्रतिक्रिया प्रकट होती है। तत्पश्चात् अनुवादक अपनी प्रतिभा, भाषाज्ञान और विषयज्ञान के अनुसार मूलभाषा के पाठ का अर्थ समझकर लक्ष्यभाषा की अभिव्यक्ति रूढ़ियों का पालन करते हुए लक्ष्यभाषा के पाठ का सर्जन करता है, जिसे दूसरा (लक्ष्यभाषा का) पाठक ग्रहण करता है। इस व्याख्या से स्पष्ट होता है कि सं. 5, अर्थात् अनुवादक का सं. 3, 4 और 1 इन तीनों से सम्बन्ध है। वह मूलभाषा के पाठ का अर्थबोध करते हुए पहले पाठक के समान आचरण करता है, और मूलभाषा का पाठ क्योंकि वक्ता/लेखक के विचार का प्रतीक होता है, अत: अनुवादक उससे भी जुड़ जाता है।

इसी प्रारूप को विद्वानों ने प्रकारान्तर से भी प्रस्तुत किया है। उदारण के लिये नाइडा, न्यूमार्क, और बाथगेट के अंशदानों की चर्चा की जाती है।

नाइडा का चिन्तन

नाइडा (1964) के अनुसार ये अनुवाद पर्याय जिस प्रक्रिया से निर्धारित होते हैं, उसके दो रूप हैं–प्रत्यक्ष और परोक्ष। इन दोनों में आधारभूत अन्तर है। प्रत्यक्ष प्रक्रिया के प्रारूप के अनुसार मूल पाठ की बाह्यतलीय संरचना के स्तर पर उपलब्ध भाषिक इकाइयों के लक्ष्यभाषा में अनुवाद पर्याय निश्चित होते हैं, और अनुवाद प्रक्रिया एक क्रमबद्ध प्रक्रिया है, जिसमें मूल पाठ के प्रत्येक अंश का अनुवाद होता है। इस प्रक्रिया में एक मध्यवर्ती स्थिति भी होती है जिसमें एक निर्विशेष और सार्वभौम भाषिक संरचना रहती है, इसका केवल सैद्धान्तिक महत्त्व है। इस प्रारूप की मान्यता के अनुसार, अनुवादक मूलभाषा पाठ के सन्देश को सीधे लक्ष्यभाषा में ले जाता है, वह इन दोनों स्थितियों में मूलभाषा पाठ और लक्ष्यभाषा पाठ की बाह्यतलीय संरचना के स्तर पर ही रहता है। अनुवाद-पर्यायों के चयन और प्रस्तुतीकरण का कार्य एक स्वचालित प्रक्रिया के समान होता है। नाइडा ने एक आरेख के द्वारा इसे स्पष्ट किया है –

क ---------- (क्ष) ---------- ख

इसमें 'क' मूलभाषा है, 'ख' लक्ष्यभाषा है, और '(क्ष)' वह मध्यवर्ती संरचना है, जो दोनों भाषाओं के लिए समान होती है और जो अनुवाद को सम्भव बनाती है, यहाँ दोनों भाषाएँ एक-दूसरे के साथ इस प्रकार सम्बद्ध हो जाती हैं कि उनका अपना वैशिष्ट्य कुछ समय के लिए लुप्त हो जाता है।

परोक्ष प्रक्रिया के प्रारूप में धारणा यह है कि अनुवादक पाठ की बाह्यतलीय संरचना पर्यन्त सीमित रहकर आवश्यकतानुसार, अपितु प्रायः सदा, पाठ की गहन संरचना में भी जाता है और फिर लक्ष्यभाषा में उपयुक्त अनुवाद पर्याय प्रस्तुत करता है। वस्तुतः इस प्रारूप में पूर्ववर्णित प्रत्यक्ष प्रक्रिया प्रारूप का अन्तर्भाव हो जाता है, दोनों में विरोध नहीं है। प्रत्यक्ष प्रक्रिया प्रारूप की यह नियम है कि अनुवाद कार्य बाह्यतलीय संरचना के स्तर पर ही हो जाता है, जबकि परोक्ष प्रक्रिया के अनुसार अनुवाद कार्य प्रायः पाठ की गहन संरचना के माध्यम से होता है, यद्यपि इस बात की सदा सम्भावना रहती है कि भाषा में मूलभाषा के अनेक अनुवाद पर्याय बाह्यतलीय संरचना के स्तर पर ही मिल जाएँ।

नाइडा के अनुसार अनुवाद प्रक्रिया के वास्तव में तीन सोपान होते हैं-

(1) अनुवादक सर्वप्रथम मूलभाषा के पाठ का विश्लेषण करता है, पाठ की व्याकरणिक संरचना तथा शब्दों एवं शब्द शृंख्लाओं का अर्थगत विश्लेषण कर वह मूलपाठ के सन्देश को ग्रहण करता है। इसके लिए वह भाषा-सिद्धान्त पर आधारित भाषा-विश्लेषण की तकनीकों का उपयुक्त रीति से अनुप्रयोग करता है। विशेषत: असामान्य रूप से जटिल तथा दीर्घ और अनेकार्थ वाक्यों और वाक्यांशों-पदबन्धों के अर्थबोधन में हो सकने वाली कठिनाइयों का हल करने में मूलपाठ का विश्लेषण सहायक रहता है।

(2) अर्थबोध हो जाने के पश्चात् सन्देश का लक्ष्यभाषा में संक्रमण होता है। यह प्रक्रिया अनुवादक के मस्तिष्क में होती है। इसमें मूलपाठ के लक्ष्यभाषागत अनुवाद-पर्याय निर्धारित होते हैं तथा दोनों भाषाओं के मध्य विभिन्न स्तरों और श्रेणियों में सामंजस्य स्थापित होता है।

(3) अन्त में अनुवादक मूलभाषा के सन्देश को लक्ष्य भाषा में उसकी संरचना एवं प्रयोग नियमों तथा विधागत रूढ़ियों के अनुसार इस प्रकार पुनर्गठित करता है कि वह लक्ष्यभाषा के पाठक को स्वाभाविक प्रतीत होता है या कम से कम अस्वाभाविक प्रतीत नहीं होता।

विश्लेषण

अनुवाद प्रक्रिया के स्पष्टीकरण के सन्दर्भ में नाइडा ने मूलपाठ के विश्लेषण के लिए एक सुनिश्चित भाषा सिद्धान्त तथा विश्लेषण की रूपरेखा प्रस्तुत की है। उनके अनुसार भाषा के दो पक्षों का विश्लेषण अपेक्षित है - व्याकरण तथा शब्दार्थ। नाइडा व्याकरण को केवल वाक्य अथवा निम्नतर श्रेणियों - उपवाक्य, पदबन्ध आदि - के गठनात्मक विश्लेषण पर्यन्त सीमित नहीं मानते। उनके अनुसार व्याकरणिक गठन भी एक प्रकार से अर्थवान् होता है। उदाहरण के लिए, कर्तृवाच्य संरचना और कर्मवाच्यभावववाच्य संरचना में केवल गठनात्मक अन्तर ही नहीं, अपितु अर्थ का अन्तर भी है। इस सम्बन्ध में उन्होंने अनेकार्थ संरचनाओं की ओर विशेष रूप से ध्यान खींचा है। उदाहरण के लिए, 'यह राम का चित्र है' इस वाक्य के निम्नलिखित तीन अर्थ हो सकते हैं-

(1) यह चित्र राम ने बनाया है।

(2) इस चित्र में राम अंकित है।

(3) यह चित्र राम की सम्पत्ति है।

ये तीनों वाक्य, नाइडा के अनुसार, बीजवाक्य या उपबीजवाक्य हैं, जिनका निर्धारण अनुवर्ति रूपान्तरण की विधि से किया गया है। बाह्यस्तरीय संरचना पर इन तीनों वाक्यों का प्रत्यक्षीकरण 'यह राम का चित्र है' इस एक ही वाक्य के रूप में होता है। नाइडा ने उपर्युक्त रूपान्तरण विधि का विस्तार से वर्णन किया है। उनकी रूपान्तरण विषयक धारणा चाम्स्की के रूपान्तरण-प्रजनक व्याकरण की धारणा के समान कठोर तथा गठनबद्ध नहीं, अपितु अनुप्रयोग की प्रकृति तथा उसके उद्देश्य के अनुरूप लचीली तथा अन्तर्ज्ञानमलक है। इसी प्रकार उन्होंने शब्दार्थ की दो कोटियों - वाच्यार्थ और लक्ष्य-व्यंग्यार्थ- का वर्णनात्मक विश्लेषण किया है। यह ध्यान देने योग्य है कि, नाइडा ने विश्लेषण की उपर्युक्त प्रणाली को मूलभाषा पाठ के अर्थबोधन के साधन के रूप में प्रस्तुत किया है। उनका बल मूलपाठ के अर्थ का यथासम्भव पूर्ण और शुद्ध रीति से समझने पर रहा है। उनकी प्रणाली बाइबिल एवं उसके सदृश अन्य प्राचीन ग्रन्थों की भाषा के विश्लेषणात्मक अर्थबोधन के लिए उपयुक्त माना जाता है, यद्यपि उसका प्रयोग अन्य और आधुनिक भाषाभेदों के पाठों के अर्थबोधन के लिए भी किया जा सकता है।

संक्रमण

विश्लेषण की सहायता से हुए अर्थबोध का लक्ष्यभाषा में संक्रान्त अनुवाद-प्रक्रिया का केन्द्रस्थ सोपान है। अनुवादकार्य में अनुवादक को विश्लेषण और पुनर्गठन के दो ध्रुवों के मध्य गति करते रहना होता है, परन्तु यह गति संक्रमण मध्यवर्ती सोपान के मार्ग से होती है, जहाँ अनुवादक को (क्षण भर के लिए रुकते हुए) पुनर्गठन के सोपान के अंशो को और अधिक स्पष्टता से दर्शन होता है। संक्रमण की यह प्रक्रिया अनुवादक के मस्तिष्क में तथा अपनी प्रकृति से त्वरित तथा अन्तर्ज्ञानमूलक होती है। अनुवाद प्रक्रिया में अनुवादक के व्यक्तित्त्व की संगति इस सोपान पर है। विश्लेषण से प्राप्त भाषिक तथा सम्प्रेषण सम्बन्धी तथ्यों का, उपयुक्त अनुवाद-पर्याय स्थिर करने में, अनुवादक जैसा उपयोग करता है, उसी में उसकी कुशलता निहित होती है। विश्लेषण तथा पुनर्गठन के सोपानों पर एक अनुवादक अन्य व्यक्तियों से भी कभी कुछ सहायता ले सकता है, परन्तु संक्रमण के सोपान पर वह एकाकी ही होता है। संक्रमण के सोपान पर विचारणीय बातें दो हैं - अनुवादक का अपना व्यक्तित्त्व तथा मूलभाषा

एवं लक्ष्यभाषा के बीच संक्रमणकालीन सामंजस्य। अनुवादक के व्यक्तित्त्व में उसका विषयज्ञान, भाषाज्ञान, प्रतिभा, तथा कल्पना इन चार की विशेष अपेक्षा होती है, तथापि प्रधानता की दृष्ट से प्रतिभा और कल्पना को विषयज्ञान तथा भाषाज्ञान से अधिक महत्त्व देना होता है, क्योंकि अनुवाद प्रधानतया एक व्यावहारिक और क्रियात्मक कार्य है। विषयज्ञान तथा भाषाज्ञान की कमी को अनुवादक दूसरों की सहायता से भी पूरा कर सकता है, परन्तु प्रतिभा और कल्पना की दृष्टि से अपने ऊपर ही निर्भर रहना होता है।

मूलभाषा एवं लक्ष्यभाषा के मध्य सामंजस्य स्थापित होना अनुवाद-प्रक्रिया की अनिवार्य एवं आन्तरिक आवश्यकता है। भाषान्तरण में सन्देश का प्रतिकूल रूप से प्रभावित होना सम्भावित रहता है। इस प्रतिकूलता के प्रभाव को यथासम्भव कम करने के लिए अर्थपक्ष और व्याकरण दोनों की दृष्टि से दोनों भाषाओं के बीच सामंजस्य की स्थिति लानी होती है। मुहावरे एवं उनका लाक्षणिक प्रयोग, अनेकार्थकता, अर्थ की सामान्यता तथा विशिष्टता, आदि अनेक ऐसे मुद्दे हैं जिनका सामंजस्य करना होता है। व्याकरण की दृष्टि से प्रोक्ति-संरचना एवं प्रकार, वाक्य-संरचना एवं प्रकार तथा पद-संरचना एवं प्रकार सम्बन्धी अनेक ऐसी बातें हैं, जिनका समायोजन अपेक्षित होता है। उदाहरण के लिए, मूलपाठ में प्रयुक्त किसी विशेष अन्तरवाक्ययोजक के लिए लक्ष्यभाषा के पाठ में किसी अन्तरवाक्ययोजक का प्रयोग अपेक्षित न होना, मूलपाठ की कर्मवाच्य संरचना के लिए लक्ष्यभाषा में कर्त्तवाच्य संरचना का उपयुक्त होना व्याकरणिक समायोजन के मुद्दे हैं।

संक्रमण का सोपान अनुवाद कार्य की दृष्टि से जितना महत्त्वपूर्ण है, अनुवाद प्रक्रिया के स्पष्टीकरण में उसका अपेक्षाकृत स्वतन्त्र अस्तित्त्व शेष दो सोपानों की तुलना में उतना स्पष्ट नहीं। बहुधा संक्रमण तथा पुनर्गठन के सोपानों के अन्तर को प्रक्रिया के विशदीकरण में स्थापित करना कठिन हो जाता है। विश्लेषण और पुनर्गठन के सोपानों पर, अनुवादक का कर्तृत्व यदि अपेक्षाकृत स्वतन्त्र होता है, तो संक्रमण के सोपान पर वह कुछ अधीनता की स्थिति में रहता है। अधिक मुख्य बात यह है कि, अनुवादक को उन सब मुद्दों की चेतना हो जिनका ऊपर वर्णन किया गया है। यदि अनुवाद-प्रशिक्षणार्थी के लिए ये प्रत्यक्ष रूप से उपयोगी माने जाएँ, तो अभ्यस्त अनुवादक के अनुवाद-व्यवहार के ये स्वाभाविक अ्ंग माने जा सकते हैं।

पुनर्गठन

मूलपाठ के सन्देश का अर्थबोध, संक्रमण के सोपान में से होते हुए लक्ष्यभाषा में पुनर्गठित होकर अनुवाद (अनुदित पाठ) का रूप धारण करता है। पुनर्गठन का सोपान लक्ष्यभाषा में मूर्त अभिव्यक्ति का सोपान है। अनुवाद प्रक्रिया की जानकारी के सम्बन्ध में अनुवादकों को पुनर्गठन के सोपान पर पाठ के जिन प्रमुख आयामों की उपयुक्तता पर ध्यान देना अभीष्ट है, वे हैं –

1. व्याकरणिक संरचना तथा प्रकार,
2. शब्दक्रम,
3. सहप्रयोग,
4. भाषाभेद तथा शैलीगत प्रतिमान।

लक्ष्यभाषागत उपयुक्तता तथा स्वाभाविकता ही इन सबकी आधारभूत कसौटी है। इन गुणों की निष्पत्ति के लिए कई बार दोनों भाषाओं में समानता की स्थिति सहायक होती है, कई बार असमानता की। उदाहरण के लिए, यह आवश्यक नहीं कि, मूलभाषा के पदबन्ध के लिए लक्ष्यभाषा का उपयुक्त अनुवाद–पर्याय एक पदबन्ध ही हो, यह संरचना एक समस्त पद भी हो सकती है, जैसे, Diploma in translation = अनुवाद डिप्लोमा। देखना यह होता है कि, लक्ष्यभाषा में सन्देश का पुनर्गठन उपर्युक्त घटकों की दृष्टि से उपयुक्तता तथा स्वाभाविकता की स्थिति की निष्पत्ति करें, वे घटक लक्ष्यभाषा की 'आत्मीयता' (जीनियस) तथा परम्परा के अनुरूप हों।

मूलभाषा में व्याकरणिक संरचना के कतिपय तथ्यों का लक्ष्यभाषा में स्वरूप बदल सकता है, यद्यपि यह सदा आवश्यक नहीं होता। उदाहरण के लिए, अंग्रेल मूलपाठ की कर्मवाच्य संरचना 'Steps have been taken by the Government to meet the situation' को हिन्दी में कर्मवाच्य संरचना में भी प्रस्तुत किया जा सकता है, कर्तृवाच्य संरचना में भी–' स्थिति का सामना करने के लिए सरकार द्वारा कार्यवाही की गई हैंधस्थिति का सामना करने के लिए सरकार ने कार्यवाही की हैं।' परन्तु 'The meeting was chaired by X' के लिए हिन्दी में कर्तृवाच्य संरचना 'क्ष ने बैठक की अध्यक्षता की' उपयुक्त प्रतीत होता है। ऐसे निर्णय पुनर्गठन के स्तर पर किए जाते हैं। यही बात सहप्रयोग के लिए है। सहप्रयोग प्रत्येक भाषा के अपने-अपने होते हैं। अंग्रेजी में to take a step कहते हैं, तो हिन्दी में 'कार्यवाही करना'। इस उदाहरण में जव जांम का अनुवाद 'उठाना' समझना भूल मानी जाएगी–ये दोनों अपनी-अपनी भाषा में ऐसे

शाब्दिक इकाइयों के रूप में प्रयुक्त होते हैं, जिन्हें खण्डित नहीं किया जा सकता।

भाषाभेद के अन्तर्गत, कालगत, स्थानगत और प्रयोजनमूलक भाषा भेदों की गणना होती है। तथापि एक सुगठित पाठ के स्तर पर ये सब शैलीभेद के रूप में देखे जाते हैं। उदाहरण के लिए, पुरानी अंग्रेजी की रचना का हिन्दी में अनुवाद करते समय, पुनर्गठन के सोपान पर अनुवादक को यह निर्णय करना होगा कि, लक्ष्यभाषा के किस भाषाभेद के शैलीगत प्रभाव मूलभाषापाठ के शैलीगत प्रभावों के समकक्ष हो सकते हैं। इस दृष्टि से पुरानी अंग्रेजी के पाठ का पुरानी हिन्दी में भी अनुवाद उपयुक्त हो सकता है, आधुनिक हिन्दी में भी। शैलीगत प्रतिमान को विहंग दृष्टि से दो रूपों में समझाया जाता है–साहित्येतर शैली और साहित्यिक शैली।

साहित्येतर शैली में औपचारिक के विरुद्ध अनौपचारिक तथा तकनीकी के विरुद्ध गैर-तकनीकी, ये दो भेद प्रमुख रूप से मिलते हैं। साहित्यिक शैली में पाठ के विधागत भेदों – गद्य और पद्य, आदि का विशेष रूप से उल्लेख किया जाता है। इस दृष्टि से औपचारिक शैली के मूलपाठ को लक्ष्यभाषा में औपचारिक शैली में ही प्रस्तुत किया जाए, या मूल गद्य रचना को लक्ष्यभाषा में गद्य के रूप में ही प्रस्तुत किया जाए, यह निर्णय लक्ष्यभाषा की परम्परा पर आधारित उपयुक्तता के अनुसार करना होता है। उदाहरण के लिए, भारतीय भाषाओं में गद्य की तुलना में पद्य की परम्परा अधिक पुष्ट है, अतः उनमें मूल गद्य पाठ का यदि पद्यात्मक भाषान्तरण हो, तो वह भी उपयुक्त प्रतीत हो सकता है। सारांश यह कि लक्ष्यभाषा में जो स्वाभाविक और उपयुक्त प्रतीत हो तथा जो लक्ष्यभाषा की परम्परा के अनुकूल हो – स्वाभाविकता, उपयुक्तता तथा परम्परानुवर्तिता, ये तीनों एक सीमा तक अन्योन्याश्रित हैं – उसके आधार पर लक्ष्यभाषा में सन्देश का पुनर्गठन होता है।

नाइडा की प्रणाली किस प्रकार काम करती है, उसे निम्न उदहारणों की सहायता से भी समझाया जाता है। सार्वजनिक सूचना के सन्दर्भ से एक उदाहरण इस प्रकार है।

(1)

क = No admission

य =dmission is not allowed

र = प्रवेश की अनुमति नहीं है।

ख = प्रवेश वर्जित है, अन्दर आना मना है।

उक्त अनुवाद के अनुसार, 'क' मूलभाषा का पाठ है, जो एक सार्वजनिक निर्देश की भाषा का उदाहरण है। यह एक अल्पांग (न्यूनीकृत) वाक्य है। इसके अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विश्लेषण की विधि से अनुगामी रूपान्तरण द्वारा अनुवादक इसका बीजवाक्य निर्धारित करता है, यह बीजवाक्य 'य' है, इसी से 'क' व्युत्पन्न है। संक्रमण के सोपान पर 'य' समसंरचनात्मक और समानार्थक वाक्य 'र' है, जो पुरोगामी रूपान्तरण द्वारा पुनर्गठन के स्तर पर 'ख' का रूप धारण कर लेता है। 'ख' के दो भेद हैं, दोनों ही शुद्ध माने जाते हैं, उनमें अन्तर शैली की दृष्टि से है। 'प्रवेश वर्जित है' में औपचारिकता है तथा वह सुशिक्षित वर्ग के उपयुक्त है, 'अन्दर आना मना है' में अनौपचारिकता है और उसे सामान्य रूप से सभी के लिए और विशेष रूप से अल्पशिक्षित वर्ग के लिए उपयुक्त माना जाता है, सूचनात्मकता तथा (निषेधात्मक) आदेशात्मकता दोनों में सुरक्षित है।

यहाँ प्रशासनिक अंग्रेजी का निम्नलिखत वाक्य है, जो मूलपाठ है और उक्त अनुवाद के अनुसार 'क' के स्तर पर है –

(2) It becomes very inconvenient to move to the section officer's table along with all the relevant papers a number of times during the day in connection with the above mentioned work-

न्यूमार्क का चिन्तन

न्यूमार्क (1976) के अनुसार अनुवाद प्रक्रिया का प्रारूप निम्नलिखित आरेख के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

नाइडा और न्यूमार्क द्वारा प्रस्तावित प्रक्रिया का विहंगावलोकन करने से पता चला है कि दोनों की अनुवाद-प्रक्रिया सम्बन्धी धारणा में कोई मौलिक अन्तर नहीं। बाइबिल अनुवादक होने के कारण नाइडा की दृष्टि प्राचीन पाठ के अनुवाद की समस्याओं से अधिक बँधी दिखी, अतः वे विश्लेषण, संक्रमण तथा पुनर्गठन के सोपानों की कल्पना करते हैं। प्राचीन रचना होने के कारण बाइबिल की भाषा में अर्थग्रहण की समस्या भाषा की व्याकरणिक संरचना से अधिक जुड़ी हुई है। इतः नाइडा के अनुवाद सम्बन्धी भाषा सिद्धान्त में व्याकरण को विशेष महत्त्व का स्थान प्राप्त होता है। व्याकरणिक गठन से सम्बन्धित अर्थग्रहण

में 'विश्लेषण' विशेष सहायक माना जाता है, अत: नाइडा ने सोपान का नामकरण भी 'विश्लेषण' किया।

न्यूमार्क की दृष्टि आधुनिक तथा वैविध्यपूर्ण भाषाभेदों के अनुवाद कार्य की समस्याओं से अनुप्राणित मानी जाती है। अत: वे बोधन तथा अभिव्यक्ति के सोपानों की कल्पना करते हैं। परन्तु वे मूलभाषा पाठ को लक्ष्यभाषा पाठ से भी जोड़ते हैं, जिससे दोनों पाठों का अनुवाद-सम्बन्ध तुलना तथा व्यतिरेक के सन्दर्भ में स्पष्ट हो सके। न्युमार्क भी बोधन के लिए विशिष्ट भाषा सिद्धान्त प्रस्तुत करते हैं, जिसमें वे शब्दार्थविज्ञान को केन्द्रीय महत्त्व का स्थान देते हैं। अपने विभिन्न लेखों में उन्होंने (1981) अपनी सैद्धान्तिक स्थापना का विवरण प्रस्तुत किया है।

शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद से जहाँ दोनों भाषाओं के शब्दक्रम का अन्तर स्पष्ट होता है, वहाँ शब्दार्थ स्तर पर दोनों भाषाओं का सम्बन्ध भी प्रकट हो जाता है। अनुवादकों को ज्ञात हो जाता है कि तमेमतअमक के लिए हिन्दी में 'सुरक्षित' या 'आरक्षित' सही शब्द है, परन्तु Judgement या 'निर्णय' के ऐसे सहप्रयोग में, जैसा कि उपर्युक्त वाक्य में दिखाई देता है, शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद करना उपयुक्त न होगा। इससे यह सैद्धान्तिक भी स्पष्ट हो जाता है कि, अनुवाद को दो भाषाओं के मध्य का सम्बन्ध कहने की अपेक्षा दो विशिष्ट भाषा भेदों या दो विशिष्ट पाठों के मध्य का सम्बन्ध कहना अधिक उपयुक्त है, जिसमें अनुवाद की इकाई का आकार, सम्बन्धित भाषाभेद या पाठगत सन्देश की प्रकृति से निर्धारित होता है। प्रस्तुत वाक्य में सम्पूर्ण वाक्य ही अनुवाद की इकाई है, क्योंकि इसमें शब्दों का उपयुक्त अनुवाद अन्योन्याश्रय सम्बन्ध आधारित है। अनुवादक यह भी जान जाते हैं कि, उपर्युक्त वाक्य का हिन्दी समाचार में जो 'निर्णय सुरक्षित रख लिया गया है' यह अनुवाद प्राय: दिखाई देता है वह क्यों अस्वभाविक, अनुपयुक्त तथा असम्प्रेषणीय-वत् प्रतीत होता है। शब्दश: अनुवाद की उपर्युक्त प्रवृत्ति का प्रदर्शन करने वाले अनुवादों को 'अनुवादाभास' कहा जाता है।

वस्तुत: अनुवाद की प्रक्रिया में आवृत्ति का तत्त्व होता है, अर्थात् अनुवादक दो बार अनुवाद करते हैं। मूलपाठ के बोधन के लिए मूलभाषा में अनुवाद किया जाता है–No admission ? admission is not allowed; इसी प्रकार लक्ष्यभाषा में सन्देश के पुनर्गठन या अभिव्यक्ति को लक्ष्यभाषा पाठ का आकार देते हुए हम लक्ष्यभाषा में उसका पुन: अनुवाद करते हैं, 'प्रवेश की अनुमति नहीं है'

'अन्दर आना मना है'। इस प्रकार अन्यभाषिक अनुवाद में दोनों भाषाओं के स्तर पर समभाषिक अनुवाद की स्थिति आती है। इन्हें क्रमशः बोधनात्मक अनुवाद (डिकोडिंग ट्रांसलेशन) पुनरभिव्यक्तिमूलक अनुवाद (रि-इनकोडिंग ट्रांसलेशन) कहा जाता है।

बोधनात्मक अनुवाद साधन रूप है - मूलपाठ के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए किया गया है। पुनरभिव्यक्तिमूलक अनुवाद साध्य रूप है - वास्तविक अनूदित पाठ। यदि एक अभ्यस्त अनुवादक के यह अर्ध-औपचारिक या अनौपचारिक रूप में होता है, तो अनुवाद-प्रशिक्षणार्थी के लिए इसके औपचारिक प्रस्तुतीकरण की आवश्यकता और उपयोगिता होती है जिससे वह अनुवाद-प्रक्रिया को (अनुभवस्तर के साथ-साथ) ज्ञान के स्तर पर भी आत्मसात् कर सके।

बाथगेट का चिन्तन

बाथगेट (1980) अपने प्रारूप को संक्रियात्मक प्रारूप कहते हैं, जो अनुवाद कार्य की व्यावहारिक प्रकृति से विशेष मेल खाने के साथ-साथ नाइडा और न्यूमार्क के प्रारूपों से अधिक व्यापक माना जाता है।

इसमें सात सोपानों की कल्पना की गई है, जिनमें से पर्यालोचन के सोपान के अतिरिक्त शेष सर्व में अतिव्याप्ति का अवकाश माना जाता है (जो असंगत नहीं) परन्तु सैद्धान्तिक स्तर पर इनके अपेक्षाकृत स्वतन्त्र अस्तित्त्व को मान्यता प्रदान की गई है। मूलभाषा पाठ का मूल जानना और तदनुसार अपनी मानसिकता का मूलपाठ से तालमेल बैठाना समन्वयन है। यह सोपान मूलपाठ के सब पक्षों के धूमिल से अवबोधन पर आधारित मानसिक सज्जता का सोपान है, जो अनुवाद कार्य में प्रयुक्त होने की अभिप्रेरणा की व्याख्या करता है तथा अनुवाद की कार्यनीति के निर्धारण के लिए आवश्यक भूमिका निर्माण का स्पष्टीकरण प्रस्तुत करता है।

विश्लेषण और बोधन के सोपान (नाइडा और न्यूमार्क-वत्) पूर्ववत् हैं। पारिभाषिक अभिव्यक्तियों के अन्तर्गत बाथगेट उन अंशों को लेते हैं, जो मूलपाठ के सन्देश की निष्पत्ति में अन्य अंशों की तुलना में विशेष महत्त्व के हैं और जिनके अनुवाद पर्यायों के निर्धारण में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता वो मानते है। पुनर्गठन भी पहले के ही समान है। पुनरीक्षण के अन्तर्गत अनूदित पाठ का सम्पूर्ण अन्वेषण आता है। हस्तलेखन या ट्कण की त्रुटियों को दूर करने के अतिरिक्त अभिव्यक्ति में व्याकरणनिष्ठता, परिष्करण, श्रुतिमधुरता, स्पष्टता,

स्वाभाविकता, उपयुक्तता, सुरुचि, तथा आधुनिक प्रयोग रूढि की दृष्टि से अनूदित पाठ का आवश्यक संशोधन पुनरीक्षण है। यह कार्य प्रायः अनुवादक से भिन्न व्यक्ति, अनुवादक से यथोचित् सहायता लेते हुए, करता है। यदि स्वयं अनुवादक को यह कार्य करना हो तो अनुवाद कार्य तथा पुनरीक्षण कार्य में समय का इतना व्यवधान अवश्य हो कि अनुवादक अनुवाद कार्य कालीन स्मृति के पाश से मुक्तप्राय होकर अनूदित पाठ के प्रति तटस्थ और आलोचनात्मक दृष्टि अपना सके तथा इस प्रकार अनुवादक से भिन्न पुनरीक्षक के दायित्व का वहन कर सके। पर्यालोचन के सोपान में विषय विशेषज्ञ और अनुवादक के मध्य संवाद के द्वारा अनूदित पाठ की प्रामाणिकता की पुष्टि का प्रावधान है। जिन पाठों की विषयवस्तु प्रामाणिकता की अपेक्षा रखती है – जैसे–विधि, प्रकृतिविज्ञान, समाज विज्ञान, प्रौद्योगिकी, आदि – उनमें पर्यलोचन की उपयोगिता स्पष्ट होती है।

एक उदाहरण के द्वारा बाथगेट के प्रारूप को स्पष्ट किया जाता है। मूलभाषा पाठ है किसी ट्रक पर लिखा हुआ सूचना वाक्यांश Public Carrier- इसके अनुवाद की मानसिक सज्जता करते समय अनुवादक को यह स्पष्ट होता है कि, इस वाक्यांश का उद्देश्य जनता को ट्रक की उपलब्धता के विषय में एक विशिष्ट सूचना देना है। इस वाक्यांश के सन्देश में जहाँ प्रभावपरक या सम्बोधनात्मक (श्रोता केन्द्रित) प्रकार्य की सत्ता है, वहाँ सूचनात्मक प्रकार्य भी इस दृष्टि से उपस्थित है कि, उसका विधिक्षेत्रीय और प्रशासनिक पक्ष है – इन दोनों दृष्टियों से ऐसे ट्रक पर कुछ प्रतिबन्ध लागू होते हैं। अतः कुल मिलाकर यह वाक्यांश सम्प्रेषण केन्द्रित प्रणाली के द्वारा अनूदित होने योग्य है। विश्लेषण के सोपान पर अनुगामी रूपान्तरण के द्वारा अनुवादक इसका बोधनात्मक अनुवाद करते हुए बीजवाक्य या वाक्यांश निर्धारित करते हैं–It carries goods of the public = Carrier of public goods. बोधन के सोपान पर अनुवादक को यह स्पष्ट होता है कि, It can be hired = 'इसे भाड़े पर लिया जा सकता है।' पारिभाषिक अभिव्यक्ति के सोपान पर अनुवादक इसे विधि–प्रशासनिक अभिव्यक्ति के रूप में पहचानते हैं, जिसके सन्देश के अनुवाद को सम्प्रेषणीय बनाते हुए अनुवादक को उसकी विशुद्धता को भी यथोचित् रूप से सुरक्षित रखना है। पुनर्गठन के सोपान पर अनुवादक के सामने इस वाक्यांश के दो अनुवाद हैं–'लोकवाहन' (उत्तर प्रदेश में प्रचलित) और 'भाड़े का ट्रक' (बिहार में प्रचलित)। पिछले सोपानों की भूमिका पर अनुवादक के सामने यह स्पष्ट हो जाता है कि – 'लोकवाहन' में सन्देश का वैधानिक पक्ष भले सुरक्षित हो परन्तु

यह सम्प्रेषण के उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर पाता। इस अभिव्यक्ति से साधारण पढ़े-लिखे को यह तुरन्त पता नहीं चलता कि लोकवाहन का उसके लिए क्या उपयोग है। इसको सम्प्रेषणीय बनाने के लिए इसका पुनरभिव्यक्तिमूलक (समभाषिक) अनुवाद अपेक्षित है - 'भाड़े का ट्रक' - जिससे जनता को यह स्पष्ट हो जाता है कि, इस ट्रक का उसके लिए क्या उपयोग है। मूल अभिव्यक्ति इतनी छोटी तथा उसकी स्वीकृत अनुवाद 'भाड़े का ट्रक' इतना स्पष्ट है कि, इसके सम्बन्ध में पुनरीक्षण तथा पर्यालोचन के सोपान अपेक्षित नहीं, ऐसा कहा जाता है।

निष्कर्ष

अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न प्रारूपों के विवेचन से **निष्कर्षस्वरूप** दो बातें स्पष्टतः मानी जाती हैं। पहली, अनुवाद प्रक्रिया एक क्रमिक प्रक्रिया है, जिसमें तीन स्थितियाँ बनती हैं -

(क) अनुवादपूर्व स्थिति–अनुवाद कार्य के सन्दर्भ को समझना। किस पाठसामग्री का, किस उद्देश्य से, किस कोटि के पाठक के लिए, किस माध्यम में, अनुवाद करना है, आदि इसके अन्तर्गत है।

(ख) अनुवाद कार्य की स्थिति–मूलभाषा पाठ का बोधन, संक्रमण, लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्ति।

(ग) अनुवादोत्तर स्थिति–अनूदित पाठ का पुनरीक्षण-सम्पादन तथा इस प्रकार अन्ततः 'सुरचित' पाठ की निष्पत्ति।

दूसरी बात यह है कि अनुवाद, मूलपाठ के बोधन तथा लक्ष्यभाषा में अभिव्यक्ति, इन दो ध्रुवों के मध्य निरन्तर होते रहने वाली प्रक्रिया है, जो सीधी और प्रत्यक्ष न होकर घुमावदार तथा परोक्ष है। वह मध्यवर्ती स्थिति जिसके जरिए यह प्रक्रिया सम्पन्न होती है, एक वैचारिक संज्ञानात्मक संरचना है, जो मूलपाठ के बोधन (जिसके लिए आवश्यकतानुसार विश्लेषण की सहायता लेनी होती है) से निष्पन्न होती है तथा जिसमें लक्ष्यभाषागत अभिव्यक्ति के भी बीज निहित रहते हैं। यह भाषा विशेष सापेक्ष शब्दों के बन्धन से मुक्त शुद्ध अर्थमयी सत्ता है। इस मध्यवर्ती संरचना का अधिष्ठान अनुवादक का मस्तिष्क होता है।

सांस्कृतिक-संरचनात्मक दृष्टि से अपेक्षाकृत निकट भाषाओं में इस वैचारिक संरचना की सत्ता की चेतना अपेक्षाकृत स्पष्ट होती है। वैचारिक स्तर पर स्थित होने के कारण इसकी भौतिक सत्ता नहीं होती-भाषिक अभिव्यक्ति के

स्तर पर यह यथातथ रूप में एक यथार्थ का रूप ग्रहण नहीं करतीय यदि अनुवादक भाषिक स्तर पर इसे अभिव्यक्त भी करते हैं, तो केवल सैद्धान्तिक आवश्यकता की दृष्टि से, जिसमें विश्लेषण के रूप में कुछ वाक्यों तथा वाक्यांशों का पुनर्लेखन अन्तर्भूत होता है। परन्तु यह भी सत्य है कि यही वह संरचना है, जो अनूदित होकर लक्ष्यभाषा पाठ में परिणत होती है। इस बात को अन्य शब्दो में भी कहा जाता है कि, अनुवादक मूलभाषापाठ की वैचारिक संरचना का अनुवाद करता है, परन्तु अनुवाद की प्रक्रिया की यह आन्तरिक विशेषता है कि जो सरंचना अन्ततोगत्वा लक्ष्य भाषा में अनूदित होती है, वह है मध्यवर्ती वैचारिक संरचना जो मूलपाठ की वैचारिक संरचना के अनुवादक कृत बोध से निष्पन्न है।

अनुवाद प्रक्रिया के इस निरूपण से सैद्धान्तिक स्तर पर दो बातों का स्पष्टीकरण होता है। एक, मूलभाषापाठ के अनुवादकीय बोध से निष्पन्न वैचारिक संरचना ही क्योंकि लक्ष्यभाषापाठ का रूप ग्रहण करती है, अतः अनुवादक भेद से अनुवाद भेद दिखाई पड़ता है। दूसरे, उपर्युक्त वैचारिक संरचना विशिष्ट भाषा निरपेक्ष (या उभय भाषा सापेक्ष) होती है – उसमें दोनों भाषाओं (मूल तथा लक्ष्य) के माध्यम से यथासम्भव समान तथा निकटतम रूप में अभिव्यक्त होने की संभाव्यता होती है। मूलभाषापाठ का सन्देश जो अनूदित हो जाता है उसकी यह व्याख्या है।

अनुवाद प्रक्रिया की प्रकृति

अनुवाद प्रक्रिया के उपर्युक्त विवरण के आधार पर अनुवाद प्रक्रिया की प्रकृति के परस्पर सम्बद्ध तीन मूलतत्त्व निर्धारित किए जाते हैं–सममूल्यता, द्वन्द्वात्मकता, और अनुवाद परिवृत्ति।

सममूल्यता

अनुवाद कार्य में अनुवादक मूलभाषापाठ के लक्ष्यभाषागत पर्यायों से जिस समानता की बात करता है, वह मूल्य (वैल्यू) की दृष्टि से होती है। यह मूल्य का तत्त्व भाषा के शब्दार्थ तथा व्याकरण के तथ्यों तक सीमित नहीं होता, अपितु प्रायः उनसे कुछ अधिक तथा भाषाप्रयोग के सन्दर्भ से (आन्तरिक और बाह्य दोनों) से उद्‌भूत होता है। वस्तुतः यह एक पाठसंकेतवैज्ञानिक संकल्पना है तथा सन्देश स्तर की समानता से जुड़ी है। भाषा के भाषावैज्ञानिक विश्लेषण में अर्थ

के स्तर पर पर्यायत्ता या अन्ययांतर सम्बन्ध पर आधारित होते हुए भी सममूल्यता सन्देश का गुण है, जिसमें पाठ का उसकी समग्रता में ग्रहण होता है। यह अवश्य है कि सममूल्यता के निर्धारण में पाठसंकेतविज्ञान के तीन घटकों के अधिक्रम का योगदान रहता है – वाक्यस्तरीय सममूल्यता पर अर्थस्तरीय सममूल्यता को प्राधान्य मिलता है तथा अर्थस्तरीय सममूल्यता पर सन्दर्भस्तरीय सममूल्यता को मान्यता दी जाती है। दूसरे शब्दों में, यदि दोनों भाषाओं में वाक्यरचना के स्तर पर सममूल्यता स्थापित न हो तो अर्थस्तरीय सममूल्यता निर्धारित करनी होगी, और यदि अर्थस्तरीय सममूल्यता निर्धारित न हो सके, तो सन्दर्भस्तरीय सममूल्यता को मान्यता देनी होगी। उदाहरण के लिए, The meeting was chaired by X' (कर्मवाच्य) के हिन्दी अनुवाद के पक्ष ने बैठक की अध्यक्षता की' (कर्तृवाच्य) में सममूल्यता का निर्धारण वाक्य स्तर से ऊपर अर्थ स्तर पर हुआ है, क्योंकि दोनों की वाक्यरचनाओं में वाच्य की दृष्टि से असमानता है। इसी प्रकार, What time is it? के हिन्दी अनुवाद 'कितने बजे हैं ?' (न कि समय क्या है, जो हिन्दी का सहज प्रयोग न होकर अंग्रेजी का शाब्दिक अनुवाद ही अधिक प्रतीत होता है) के बीच सममूल्यता का निर्धारण अर्थस्तर से ऊपर सन्दर्भ – समय पूछना, जो एक दैनिक सामाजिक व्यवहार का सन्दर्भ है – के स्तर पर हुआ है। इस प्रकार सममूल्यता की स्थिति पाठसंकेत के संघटनात्मक पक्ष में होने के साथ-साथ सम्प्रेषणात्मक पक्ष में भी होती है, जिसमें सम्प्रेषणात्मक पक्ष का स्थान संघटनात्मक पक्ष से ऊपर होता है।

सममूल्यता को पाठसंकेतवैज्ञानिक संकल्पना मानने से व्यवहार में जो छूट मिलती है, वह सम्प्रेषण की मान्यता पर आधारित अनुवाद कार्य की आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ है। मूलभाषा का पाठ किस भाषाभेद (प्रयुक्ति) से सम्बन्धित है, उसका उद्दिष्ट/सम्भावित पाठक कौन है (उसका शैक्षिक-सांस्कृतिक स्तर क्या है), अनुवाद करने का उद्देश्य क्या है – इन तथ्यों के आधार पर अनुवाद सममूल्यों का निर्धारण होता है। इस प्रक्रिया में वे यदि कभी शब्दार्थगत पर्यायों तथा गठनात्मक संरचनाओं की सम्वादिता से कभी-कभी भिन्न हो सकते हैं, तो कुछ प्रसंगों में उनसे अभिन्न, अत एव तद्रूप होने की सम्भावना को नकारा भी नहीं किया जा सकता। यह ठीक है कि भाषाएँ संरचना, शैलीय प्रतिमान आदि की दृष्टि से अंशतः असमान होती हैं और यह भी ठीक है कि वे अंशतः समान भी होती हैं, मुख्य बात यह है कि उन समान तथा असमान बिन्दुओं को पहचाना जाए। सम्प्रेषण के सन्दर्भ में समानता एक लचीली स्थिति बन जाती है।

अनुवाद में मूल्यगत समानता ही उपलब्ध करनी होती है। अनुवादगत सममूल्यता लक्ष्य भाषापाठ की दृष्टि से यथासम्भव स्वाभाविक तथा मूलभाषापाठ के यथासम्भव निकटतम होती है। इसका एक उल्लेखनीय गुण है। गत्यात्मकता, जिसका तात्पर्य यह है कि अनुवाद के पाठक की अनुवाद सममूल्यों के प्रति वही स्वीकार्यता है, जो मूल के पाठकों की मूल की सम्बद्ध अभिव्यक्तियों के प्रति है। स्वीकार्यता या प्रतिक्रिया की यह समानता उभयपक्षीय होने से गतिशील है, और यही अनुवाद सममूल्यता की गत्यात्मकता है।

द्वन्द्वात्मकता

अनुवाद का सम्बन्ध दो स्थितियों के साथ है। इसे अनुवादक द्वन्द्वात्मकता कहेते हैं। यह द्वन्द्वात्मकता केवल भाषा के आयाम तक सीमित नहीं, अपितु समस्त अनुवाद परिस्थिति में व्याप्त है। इसकी मूल विशेषता है सन्तुलन, सामंजस्य या समझौता। एक प्रक्रिया, सम्बन्ध, और निष्पत्ति के रूप में अनुवाद की द्वन्द्वात्मकता के विभिन्न आयामों को इस प्रकार निरूपित किया जाता है –

(क) अनुवाद का बाह्य सन्दर्भ

1. अनुवाद में, मूल लेखक तथा दूसरे पाठक (अनुवाद का पाठक) के बीच सम्पर्क स्थापित होता है। मूल लेखक और दूसरे पाठक के बीच देश या काल या दोनों की दृष्टि से दूरी या निकटता से द्वन्द्वात्मकता के स्वरूप में अन्तर आता है। स्थान की दृष्टि से मूल लेखक तथा पाठक दोनों ही विदेशी हो सकते हैं, स्वदेशी हो सकते हैं, या इनमें से एक विदेशी और एक स्वदेशी हो सकता है। काल की दृष्टि से दोनों अतीतकालीन हो सकते हैं, दोनों समकालीन हो सकते हैं, या लेखक अतीत का और पाठक समसामयिक हो सकता है। इन सब स्थितियों से अनुवाद प्रक्रिया प्रभावित होती है।
2. अनुवाद में, मूल लेखक और अनुवादक में सन्तुलन अपेक्षित होता है। अनुवादक को मूल लेखक की चिन्तन पद्धति और अभिव्यक्ति पद्धति के साथ अपनी चिन्तन पद्धति तथा अभिव्यक्ति पद्धति का सामंजस्य स्थापित करना होता है।
3. अनुवाद में, अनुवादक तथा अनुवाद के पाठक के मध्य अनुबन्ध होता है। अनुवादक का अनुवाद करने का उद्देश्य वही हो जो अनुवाद के पाठक

का अनुवाद पढ़ने के सम्बन्ध में है। अनुवादक के लिए आवश्यक है कि, वह अपने भाषा प्रयोग को अनुवाद के सम्भावित पाठक की बोधनक्षमता के अनुसार ढाले।

4. अनुवाद में, अनुवादक की व्यक्तिगत रुचि (अनुवाद कार्य तथा अनुवाद सामग्री दोनों की दृष्टि से) तथा उसकी व्यावसायिक आवश्यकता का समन्वय अपेक्षित है।
5. अपनी प्रकृति की दृष्टि से पूर्ण अनुवाद असम्भव है तथा अनूदित रचना मूल रचना के पूर्णतया समान नहीं हो सकती, परन्तु सामाजिक-सांस्कृतिक तथा राजनीतिक-आर्थिक दृष्टि से अनुवाद कार्य न केवल महत्त्वपूर्ण है अपितु आवश्यक और सुसंगत भी। एक सफल अनुवाद में उक्त दोनों स्थितियों का सन्तुलन होता है।

(ख) अनुवाद का आन्तरिक सन्दर्भ

6. अनुवाद में, दो भाषाओं के मध्य सम्बन्ध के परिप्रेक्ष्य में, एक और भाषा-संरचना (सन्दर्भरहित) तथा भाषा-प्रयोग (सन्दर्भसहित) के मध्य द्वन्दात्मक सम्बन्ध स्पष्ट होता है, तो दूसरी ओर भाषा-प्रयोग के सामान्य पक्ष और विशिष्ट पक्ष के मध्य सन्तुलन की स्थिति उभरकर सामने आती है।
7. अनुवाद में, दो भाषाओं की विशिष्ट प्रयुक्तियों के दो विशिष्ट पाठों के मध्य विभिन्न स्तरों और आयामों पर समायोजन अपेक्षित होता है। ये स्तरध्आयाम हैं - व्याकरणिक गठन, शब्दकोश के स्तर, शब्दक्रम की व्यवस्था, सहप्रयोग, शब्दार्थ, व्यवस्था, भाषाशैली की रूढ़ियाँ, भाषा-प्रकार्य, पाठ प्रकार, साहित्यिक सामाजिक-सांस्कृतिक रूढ़ियाँ।
8. गुणात्मक दृष्टि से अनुवाद में विविध प्रकार के सन्तुलन दिखाई देते हैं। किसी भी पाठ का सब स्तरों/आयामों पर पूर्ण अनुवाद असम्भव है, परन्तु सब प्रकार के पाठों का अनुवाद सम्भव है। एक सफल अनुवाद में निम्नलिखित युग्मों के घटक सन्तुलन की स्थिति में दिखाई देते हैं - विशुद्धता और सम्प्रेषणीयता, रूपनिष्ठता और प्रकार्यात्मकता, शाब्दिकता और स्वतन्त्राता, मूलनिष्ठता और सुन्दरता (रोचकता), और उद्रिक्तता तथा सामासिकता। तदनुसार एक सफल अनुवाद जितना सम्भव हो, उतना विशुद्ध, रूपनिष्ठ, शाब्दिक, और मूलनिष्ठ होता है तथा जितना आवश्यक

हो उतना सम्प्रेषणीय प्रकार्यात्मक, स्वतन्त्रा, और सुन्दर (रोचक) होता है। इसी प्रकार एक सफल अनुवाद में उद्रिक्तता (सूचना की दृष्टि से मूलपाठ की अपेक्षा लम्बा होना) की प्रवृत्ति है, परन्तु लक्ष्यभाषा प्रयोग के कौशल की दृष्टि से उसका संक्षिप्त होना वांछित होता है।

9. कार्यप्रणाली की दृष्टि से, क्षतिपूर्ति के नियम के अनुसार अनुवाद में मुख्यतया निम्नलिखित युग्मों के घटकों में सह-अस्तित्त्व दिखाई देता है—छूटना-जुड़ना (सूचना के स्तर पर) और आलंकारिकता-सुबोधता (अभिव्यक्ति के स्तर पर)। लक्ष्यभाषा में व्यक्त सन्देश के सौष्ठवपूर्ण पुनर्गठन के लिए मूल पाठ में से कुछ छूटना तथा लक्ष्यभाषा पाठ में कुछ जुड़ना अवश्यम्भावी है। यदि कुछ छूटेगा तो कुछ जुड़ेगा भी, विशेष बात यह है कि न छूटने लायक यथासम्भव छूटे नहीं तथा न जुड़ने लायक जुड़े नहीं। मूलपाठ की कुछ आलंकारिक अभिव्यक्तियाँ, जैसे—रूपक, अनुवाद में जब लक्ष्यभाषा में संक्रान्त नहीं हो पातीं तो अनलंकृत अभिव्यक्तियों का प्रयोग करना होता है - अलंकार की प्रभावोत्पादकता का स्थान सामान्य कथन की सुबोधता ले लेती है। यही बात विपरीत ढंग से भी हो सकती है - मूल की सुबोध अभिव्यक्ति के लिए लक्ष्यभाषा में एक अलंकृत अभिव्यक्ति का चयन कर लिया जाता है, परन्तु वह लक्ष्यभाषा की बहुप्रचलित रूढ़ि हो जो प्रभावोत्पादक होने के साथ-साथ सुबोध भी हो ये अत्यावश्यक होता है।

द्वन्द्वात्मकता के विभिन्न आयामों के विवेचन से अनुवादसापेक्ष सम्प्रेषण की प्रकृति पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। यह सन्तुलन जितना स्वीकार्य होता है, अनुवाद उतना ही सफल प्रतीत होता है।

अनुवाद परिवृत्ति

अनुवाद कार्य में अनुवाद परिवृत्ति एक अवश्यम्भावी तथा वांछनीय एवं स्वाभाविक स्थिति है। परिवृत्ति से अभिप्राय है दोनों भाषाओं के मध्य विभिन्न स्तरीय सम्वादिता से विचलन। विचलन की दो स्थितियाँ हो सकती हैं - अनिवार्य तथा ऐच्छिक। अनिवार्य विचलन भाषा की शब्दार्थगत एवं व्याकरणिक संरचना का अन्तरंग है, उदाहरण के लिए मराठी नपुंसकर्लिंग संज्ञा हिन्दी में पुल्लिंग या स्त्रीलिंग संज्ञा के रूप में ही अनूदित होगी। कुछ इसी प्रकार की बात अंग्रेजी वाक्य प् िंअम मिअमत के हिन्दी अनुवाद 'मुझे ज्वर है' के लिए कही

जा सकती है, क्योंकि 'मैं ज्वर रखता हूँ' हिन्दी में सम्प्रेषणात्मक तथ्य के रूप में स्वीकृत नहीं। ऐच्छिक विचलन में विकल्प की व्यवस्था होती है। अंग्रेजी 'The rule states that' को हिन्दी में दो रूपों में कहा जा सकता है – "इस नियम में यह व्यवस्था है कि/कहा गया है कि ' या 'यह नियम कहता है कि '। इन दोनों में पहला वाक्य हिन्दी में स्वाभाविक प्रतीत होता है, उतना दूसरा नहीं यद्यपि अब यह भी अधिक प्रचलित माना जाता है। एक उपयुक्त अनुवाद में पहले अनुवाद को प्राथमिकता मिलेगी। अनुवाद के सन्दर्भ में ऐच्छिक विचलन की विशेष प्रासंगिकता इस दृष्टि से है कि, इससे अनुवाद को स्वाभाविक बनाने में सहायता मिलती है। अनिवार्य विचलन, तुलनात्मक-व्यतिरेकी भाषा विश्लेषण का एक सामान्य तथ्य है, जिसमें अनुवाद का प्रयोग एक उपकरण के रूप में किया जाता है।

अनुवाद-परिवृत्ति की संकल्पना

अनुवाद-परिवृत्ति की संकल्पना का सम्बन्ध प्रधान रूप से व्याकरण के साथ माना गया है। यह दो रूपों में दिखाई देता है – व्याकरणिक शब्दों की परिवृत्ति तथा व्याकरणिक कोटियों की परिवृत्ति।

व्याकरणिक शब्दों की परिवृत्ति

व्याकरणिक शब्दों की परिवृत्ति का एक उदाहरण उपर्युक्त वाक्ययुग्म में दिखाई देता है। अंग्रेजी का निर्धारक या निश्चयत्मक आर्टिकल जीम हिन्दी में (सार्वनामिक) संकेतवाचक विशेषण 'यह/इस' हो गया है, यद्यपि यह अनिवार्य विचलन के अन्तर्गत है।

व्याकरणिक कोटियों की परिवृत्ति

व्याकरणिक कोटियों की परिवृत्ति में अनुवादक दो भेदों की ओर विशेष ध्यान देते हैं – व्याकरणिक कोटियों की परिवृत्ति तथा श्रेणी-परिवृत्ति। वाक्य में व्याकरणिक कोटियों की विन्यासक्रमात्मक संरचना में परिवृत्ति का उदाहरण है अंग्रेजी के सकर्मक वाक्य में प्रकार्यात्मक कोटियों के क्रम, कर्ता. क्रिया. कर्म, का हिन्दी में बदलकर कर्ता. कर्म. क्रिया हो जाना। यह परिवृत्ति के अनिवार्य विचलन के अन्तर्गत है, अतः व्यतिरेक है। श्रेणी परिवृत्ति का प्रसिद्ध उदाहरण है मूलभाषा के पदबन्ध का लक्ष्यभाषा में उपवाक्य हो जाना या उपवाक्य का

पदबन्ध हो जाना। अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद में इस प्रकार की परिवृत्ति के उदाहरण प्रायः मिल जाते हैं -भारतीय रेलों में सुरक्षा सम्बन्धी निर्देशावली के अंग्रेजी पाठ का शीर्षक है–'Travel safely' (उपवाक्य) और हिन्दी पाठ का शीर्षक है–'सुरक्षा के उपाय' (पदबन्ध), जबकि अंग्रेजी में भी एक पदबन्ध हो सकता है - 'Measures of safety.' इसी प्रकार पदस्तरीय, विशेषतः समस्त पद के स्तर की, इकाई का एक पदबन्ध के रूप में अनूदित होने के उदाहरण भी प्रायः मिल जाते हैं - अंग्रेजी 'She is a good natured girl' = 'वह अच्छे स्वभाव की लड़की है' ('वह एक सुशील लड़की है' में परिवृत्ति नहीं है)। श्रेणी परिवृत्ति के दोनों उदाहरण ऐच्छिक विचलन के अन्तर्गत हैं।

अनुवादक एवं इंटरप्रेटर

अनुवाद एक लिखित विधा है, जिसे करने के लिए कई साधनों की जरूरत पड़ती है। शब्दकोश, संदर्भ ग्रंथ, विषय विशेषज्ञ या मार्गदर्शक की मदद से अनुवाद कार्य को पूरा किया जाता है। इसकी कोई समय सीमा नहीं होती। अपनी इच्छानुसार अनुवादक इसे कई बार शुद्धीकरण के बाद पूरा कर सकता है। इंटरप्रेटशन यानी भाषांतरण एक भाषा का दूसरी भाषा में मौखिक रूपांतरण है। इसे करने वाला इंटरप्रेटर कहलाता है। इंटरप्रेटर का काम तात्कालिक है। वह किसी भाषा को सुन कर, समझ कर दूसरी भाषा में तुरंत उसका मौखिक तौर पर रूपांतरण करता है। इसे मूल भाषा के साथ मौखिक तौर पर आधा मिनट पीछे रहते हुए किया जाता है। बहुत कुछ यांत्रिक ढंग का भी होता है।

सामाजिक-सांस्कृतिक बदलाव में अनुवाद की भूमिका

21वीं सदी की सबसे बड़ी देन है कि विश्व एक साइबर विलेज में बदल गया है। सूचना-क्रांति और जनसंचार क्रांति ने आज विश्व को छोटा कर दिया है। विश्वभर की खबरें कुछ ही सेकेंडों में दुनिया में प्रसारित हो जाती है। इंटरनेट, सैटेलाइट और टेलीकम्यूनिकेशन ने तो क्रांति ही कर दिया है। आज ग्लोबलाइजेशन एवं बहुभाषिकता का युग है। ग्लोबलाइजेशन एवं बहुभाषिकता विभिन्न देशों की संस्कृतियों, भाषाओं एवं भौगोलिक सीमाओं में परस्पर आदान-प्रदान के कारण उत्पन्न समन्वित स्थिति एवं स्वरूप की देन है। काफी हद तक यह स्थिति विभिन्न देशों के साहित्य के परस्पर अनुवाद के कारण ही संभव हो पाई है। इसलिए आज के ग्लोबलाइजेशन युग में सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद का

महत्त्व और भी बढ़ जाता है। इस आधार पर अगर वर्तमान युग को अनुवाद का युग कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। यदि अनुवाद न होता तो विश्व-संस्कृति की इतनी बड़ी और महत्त्वपूर्ण परंपरा विकसित नहीं होती।

सामाजिक-सांस्कृतिक बदलाव में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। समाज सतत परिवर्तनशील और विकासशील होता है। इसके स्वरूप निर्माण में कई तरह के तत्त्व सक्रिय रहते हैं जिनमें आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक सांस्कृतिक चेतना आदि प्रमुख होते हैं। किसी भी समाज की जन चेतना का निर्माण, विकास एवं परिवर्तन उसकी परिस्थितियों के अनुसार होता है। युगीन परिस्थितियों से उद्‌भुत इस चेतना की निर्मिति में जनसामान्य की भाषा महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। विश्व के संस्कृतियों में मौखिक और लिखित साहित्य का अनुवाद एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया रही है। जब कोई रचना लोक-भाषा में उपलब्ध हो जाती है, तो ज्ञान के प्रसार से जनमानस में जागरूकता पैदा करती है। एक भाषा का साहित्य किसी-न किसी रूप में दूसरी भाषा में, दूसरी से तीसरी भाषा में इस तरह से अनेक भाषाओं में स्थान पाता है।

विश्व-संस्कृति के विकास में अनुवाद का योगदान अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण रहा है। धर्म, साहित्य, शिक्षा, विज्ञान, वाणिज्य-व्यवसाय, राजनीति, संस्कृति आदि के विभिन्न पहलुओं का अनुवाद से अभिन्न संबंध रहा है। जबकि समाज और अनुवाद का संबंध भी नया नहीं है। इस संबंध की जड़ें मानव समाज में काफी पुराना है। अनुवाद ने विश्वभर में ज्ञान-विज्ञान की चेतना से मानवीय ज्ञानात्मक और भावात्मक संवेदना को बदला है। अनुवाद को हम सुदृढ़ सेतु के रूप में देख सकते हैं, जो संस्कृति के भौतिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक पहलुओं को गतिशीलता प्रदान करती है। विश्व-संस्कृति के निर्माण में विचारों के आदान-प्रदान का बड़ा सहयोग रहा है और यह आदान-प्रदान अनुवाद से ही संभव हो पाया है। अनुवाद कर्म ने सामाजिक चेतना के बदलाव, संघर्ष और टकराहट को प्रबल और सजग प्रक्रिया के रूप में जीवन्त रखने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाया है।

वैचारिक आदान-प्रदान की चेतना से सामाजिक वैचारिकता में एक नई भूमि तैयार करने में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका अनेक तर्कों और उदाहरणों के माध्यम से देख सकते हैं।

यूरोपीय देशों को रेनेसाँ काल में ग्रीक और रोम के साहित्य ने प्रभावित किया। ग्रीक और लैटिन भाषाओं ने भी क्लासिक भाषाओं के रूप में यूरोप की सभी भाषाओं को प्रभावित किया। बाइबिल के अनुवाद के बाद एक ऐसी साहित्यिक क्रांति आई जिसने समूचे यूरोप को ही नहीं, बल्कि अनेक देशों की संस्कृतियों को भी प्रभावित किया। बाइबिल का अनुवाद विश्व की लगभग सभी भाषाओं में किया गया। बाइबिल के अनुवाद के इतिहास को पश्चिमी संस्कृति का इतिहास कहा जा सकता है।

पूँजीवाद के विकास और सामंतवाद के पतन की शृंखला में किस तरह अनुवाद की भूमिका रही है, उसको देखा जा सकता है। एशिया में भारतीय ग्रंथों के अनुवाद के द्वारा अनेक देशों में बौद्ध धर्म और भारतीय संस्कृति का प्रसार किस तरह हुआ है, उसको भी हम देख सकते हैं। नवीं-दसवीं शताब्दी में इंग्लैंड के जनसमाज में सौहार्द पैदा करने और इसे एकीकृत करने के लिए किंग एल्फ्रेड ने अनुवाद की सहायता ली थी।

इस काल में अनुवाद, व्याख्या और भाष्य ने नए आयाम विकसित किए। यूरोपीय वर्नाकुलरों के साहित्य का उदय हुआ। आगे चलकर ईसाई मत के प्रसार के साथ अनुवाद ने एक अन्य भूमिका ग्रहण की। भाषा और साहित्य की समृद्धि तथा जनचेतना की उद्‌भावना से आगे बढ़कर अनुवाद 'ईश्वर की वाणी' का प्रसार करने की ओर उन्मुख हुआ। धर्म ने अनुवादक के सामने एक नया लक्ष्य रखा और अनुवाद अब एक ऐसे परिवृत्त में घूमने लगा, जो सौंदर्यबोध और ईसाई मत दोनों के मानदंडों को एक साथ लेकर चलने लगा।

इसी तरह एशिया में भारतीय ग्रंथों के अनुवाद के द्वारा अनेक देशों में बौद्ध धर्म और संस्कृति का प्रसार हुआ। संस्कृत और पालि से चीनी भाषा में अनुवाद का कार्य ईसा की पहली शताब्दी से ही शुरू हो गया था। चीनी त्रिपिटिक के तेईशों संस्करण में 3360 से अधिक भारतीय ग्रंथों का चीनी में अनुवाद है। चीनी भाषा में भारतीय ग्रंथों के अनुवाद का यह कार्य कई शताब्दियों तक चलता रहा। चीनी भाषा में बौद्ध ग्रंथ चीन में आदरणीय बन गया और चीनी जनता उन्हें पूजने लगी।

जापान में इन चीनी अनुवादों के परिणामस्वरूप बौद्ध-धर्म के प्रसार के साथ-साथ सभ्यता का विकास होने लगा। बौद्ध-धर्म ने वहाँ एक नए विचार पैदा कर दिया। शिक्षा का सार्वजनिक प्रसार हुआ। इसके परिणामस्वरूप जापानी भाषा में साहित्य सृर्जना हुई।

भारत की अध्यात्म विद्या और दर्शन के उत्तम ग्रंथों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया गया। तिब्बती भाषा का एक साहित्यिक और परिष्कृत भाषा के रूप में विकास हुआ। साहित्य अनुवाद और विशद व्याख्यानों के आंदोलन ने तिब्बत में बौद्धिक चेतना को जन्म दिया। सहस्त्र सूत्रों और उनकी टीकाओं के तिब्बती अनुवाद ने ही वहाँ नवजागरण का सूत्रपात किया।

चौदहवीं शताब्दी में मंगाल भाषा में भी बौद्ध सूत्रों का अनुवाद शुरू किया गया। कंजूर के 108 खंडों के अतिरिक्त मंगोल भाषा एवं तंजूर भाषा में भी भारतीय कृतियों का अनुवाद किया गया। अमरकोश, काव्यादर्श आदि कृतियों के मंगोल अनुवादों ने मंगोलिया की साहित्यिक परम्परा को प्रभावित किया। मंगोल विश्व-कोष में भारतीय आयुर्वेद और रसायन शास्त्र के अनेक ग्रंथों के भी अनुवाद मिलते हैं। इसी तरह इन्डोनेशिया, श्रीलंका, वर्मा, लाओस, थाइलैंड और कम्पूचिया में भी अनेक संस्कृत तथा पालि ग्रंथों का अनुवाद किया गया। इन अनुवादों के परिणामस्वरूप उन देशों का साहित्य समृद्ध हुआ और वहाँ भारतीय धर्म-चिंतन और संस्कृति का प्रसार हुआ।

भारतीय पुस्तकों का अनुवाद अरबी में भी हुआ, लेकिन भारतीय पुस्तकों के अनुवादों ने अरबी संस्कृति को जितना प्रभावित किया उससे कहीं ज्यादा अरबी संस्कृति ने भारतीय संस्कृतियों को प्रभावित किया। अरबी और फारसी भाषा और साहित्य का वर्चस्व भारत में लंबे समय तक कायम रहा। अरबी और फारसी भाषाएँ भारत में शासकीय भाषाओं के रूप में प्रतिष्ठित हुईं। उनके प्रभाव से भारतीय भाषाओं के स्वरूप में परिवर्तन आया।

यूरोप के देशों में जहाँ एक ओर एशियाई संस्कृति का प्रचार अरबी के माध्यम से हुआ, वहीं दूसरी ओर यूरोपीय देशों को ग्रीस और रोम के साहित्य ने भी प्रभावित किया। ग्रीक और लैटिन भाषाओं के क्लासिक भाषाओं के रूप में, यूरोप की सभी भाषाओं को प्रभावित किया।

नवजागरण की चेतना की जो शुरूआत इटली में हुई थी, वह साहित्य और कला के क्षेत्रों में यूनान की श्रेष्ठ कृतियों के अध्ययन और पुनः सृजन तक सीमित थी। जब जर्मनी और इंग्लैंड आदि ने बाइबिल के अनुवाद का तथा ब्रिटिश शासकों ने रोम के चर्च से मुक्ति का दुःसाहस किया तो समाज को व्यापक परिवर्तन से गुजरना पड़ा। लेकिन जर्मनी और इंग्लैंड नवजागरण को केवल सैद्धांतिक रूप में ही नहीं पाना चाहते थे, वे उसे अपने जीवन में भी उतारना चाहते थे। अतः प्राचीन ग्रीक श्रेष्ठ साहित्य और कला का अध्ययन ही

पर्याप्त न था, बल्कि वर्तमान असंतोषजनक परिस्थितियों का सुधार भी आवश्यक था। बाइबिल के जर्मन तथा अंग्रेजी अनुवादों ने सामाजिक सुधार में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। आम आदमी को बाइबिल पढ़ने और रखने का अधिकार मिला। इस सबके कारण यूरोपीय समाज को विप्लव के दौर से भी गुजरना पड़ा। भयंकर रक्तपात और राजनीतिक उथल-पुथल के काल-विशेष की घटना मात्र बनकर न रहे, बल्कि इससे समूचे यूरोपीय समाज के जीवन में गंभीर परिवर्तन आए। चर्च ऑफ इंग्लैंड की स्थापना तथा बाइबिल के अंग्रेजी अनुवादों के माध्यम से ईसाई धर्म में प्रोटेस्टेंट मत की शुरूआत हुई। टिंडेल, इटेसमस, मार्टिन लूथर आदि ने समाज को पोप की सत्ता की कठिन धार्मिक जर्जर रूढ़ियों से मुक्ति दिलाई। नव-जागरणकालीन यूरोप में अनुवादों की भूमिका केन्द्रीय हो गई। साथ ही इसने अतीत और वर्तमान के बीच तथा राष्ट्रवाद और धार्मिक संघर्ष के दबाव के कारण बिखरती हुई विभिन्न भाषाओं और परम्पराओं के बीच संबंध को स्पष्ट करते हुए उसे तार्किक आधार प्रदान किया। यही कारण है कि नवजागरण काल में अनुवाद किसी भी स्थिति में गौण न होकर ऐसे प्रमुख कार्य के रूप में दिखाई देता है।

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के बाद ब्रिटिशों ने प्राचीन भारतीय परम्पराओं, ज्ञान-विषयों पर उपलब्ध समस्त महत्त्वपूर्ण साहित्य के महत्त्व को समझा था और इसीलिए उसका अंग्रेजी में अनुवाद कराया। 1775 में सर विलियम जोन्स द्वारा स्थापित बंगाल की रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ने प्राचीन भारतीय साहित्य की खोज तथा उसके अनुवाद और प्रकाशन का कार्य आरंभ किया। 1798 में सर मोनियर विलियम्स ने कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' का अनुवाद किया। यूरोपीय समाज और साहित्य पर इस अनुवाद का कई रूपों में प्रभावित किया। मैक्समूलर, शॉपेनहावर, श्लेगल आदि जर्मन विद्वानों द्वारा संस्कृत के वैदिक और लौकिक साहित्य के अनुवाद कार्य से भाषा विज्ञान के क्षेत्र में नई दिशा खुली और तुलनात्मक भाषा विज्ञान का आरंभ हुआ।

हिंदी के मध्यकाल में लोकभाषाओं के विकास और लोकजागरण को अनुवाद के परिप्रेक्ष्य में देखने पर हम पाते हैं कि इस काल में संतों ने अपनी भाषा में संस्कृत और पाली के महान् साहित्य, दर्शन, धर्म, संस्कृति और नीति चेतना के ग्रंथों का स्वच्छंद अनुवाद किया। उपनिषदों, महाभारत, रामायण और गीता के विचारों के लोकभाषा में अनुवादों की एक विस्तृत परम्परा सोलहवीं शती से अठारहवीं शती तक दिखाई देती है। गीता का हिंदी अनुवाद हखल्लभ

ने 1644 में, भगवानदास ने 1669 में, आनन्दराम ने 1707 में किया। इस प्रकार अनुवाद ने इस काल में जनता के मन पर जमी हुई निराशा को हटाते हुए जीवन में नई किरण दिखाई।

इसी प्रकार मध्ययुगीन कविता में भक्तिधारा को जनचेतना में प्रखर गति से प्रवाहित करने में अनुवादों की महत्त्वपूर्ण भूमिक रही। भारत में अंग्रेजी राज की स्थापना के बाद नवजागरण की जो नवीन चेतना प्रस्फुटित हुई उसमें अनुवाद की भूमिका को भुलाया नहीं जा सकता। फ्रांसीसी राजक्रांति, यूरोपीय पूंजीवाद, उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद की शक्तियों और उनके खतरों से हम अनुवाद के माध्यम से ही परिचित हुए थे। पश्चिम में मार्क्स, रूसों, डार्विन और टॉलस्टॉय के विचारों के साथ यूरोप में जिस नवचिंतन का आरंभ हुआ था, उसे भारत तक पहुँचाने के कार्य में अनुवाद महत्त्वपूर्ण रहा है। इन अनुवादों से एक नया बुद्धिवाद का उदय हुआ तथा मध्ययुगीन जड़ता का ध्वंस हुआ। उन्नीसवीं सदी के भारत में मानवमुक्ति की कल्पना के विकास में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। दूसरी भारतीय भाषाओं के बीच वैचारिक आदान-प्रदान के रास्ते भी अनुवाद ने ही खोलें। बंगला से बंकिम, शरद, माइकेल मधुसूदन दत्त, रवीन्द्रनाथ, मराठी से हरिनारायण आप्टे, खाण्डेकर आदि के जो अनुवाद हिंदी में हुए, वह हिंदी-भाषी प्रदेशों में एक नया विचार-विन्मय उत्पन्न किया और जनमानस साम्प्रदायिकता और प्रांतीयता से ऊपर उठकर अखण्ड चेतना की दिशा प्राप्त किया। यह समझने की जरूरत है कि हमारे राष्ट्रीय सांस्कृतिक नवजागरण में अनुवाद ने युगान्तकारी कार्य किया है। स्वयं आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हैकल की क्रांतिकारी पुस्तक 'रिडिल ऑफ दि यूनिवर्स' का 'विश्व प्रपंच' नाम से अनुवाद किया। हैकल की इस पुस्तक ने पूरे एशिया में तहलका मचा दिया था। दुनिया भर के मुक्ति संग्रामों से हमें मुक्ति संग्राम की नई चेतना मिली। दुनिया के बहुत से देश ब्रिटिश साम्राज्यवाद के नीचे पिस रहे थे उन सबकी आजादी में अनुवाद की अहम भूमिका रही है।

विभिन्न देशों के बीच साहित्यिक तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने जीवन-मूल्यों में भारी परिवर्तन उपस्थिति कर दिया है। हजारों मील की दूरी पर बसने वाले मनुष्यों के हर्ष, उल्लास, आंसू, पीड़ा और तकलीफ का अनुभव अनूदित कृति या पाठ के माध्यम से होने लगा है। इन माध्यमों के द्वारा जहाँ एक ओर पेशेवर रिश्तों में दृढ़ता आई है, वहीं दूसरी ओर मानवीय संबंधों की गहराई, ऊष्मा, सुख-दुख, परस्पर-संवाद तथा अनुभूति बोध को भी जगाया है। अब

व्यक्ति अथवा राष्ट्र का संकट केवल उन तक सीमित न रहकर वैश्विक संकट के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा है। व्यक्ति तथा राष्ट्र की समस्या का अंतर्राष्ट्रीय समाधान खोजा जाने लगा है। अनुवाद ने दो राष्ट्रों के बीच न केवल व्यावसायिक तथा पेशेवर संबंध, बल्कि मानवीय रिश्तों को भी संप्रेषित करने का सराहनीय कार्य किया है।

वास्तव में अनुवाद कार्य ने सामाजिक चेतना में परिवर्तन की प्रक्रिया को जीवंत बनाने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। अनुवाद का माध्यम न होता तो 1966 में नीग्रो युवकों द्वारा बनाया गया लड़ाकू संगठन 'ब्लैक पैंथर' के तर्ज पर 1975 में महाराष्ट्र का 'दलित पेंथर' भी न बना होता। मराठवाड़ा में उपजे एक विरोध के स्वर को जहाँ एक ओर अनुवाद ने व्यापक भारतीय दलित समुदाय की चेतना से जोड़ा तो, वहीं दूसरी ओर दुनिया के तमाम कोनों में चल रहे रंगभेदी आंदोलन से भी जोड़ा। अन्य भाषा-भाषियों द्वारा लिखे गये दलित साहित्य को हिंदी भाषा-भाषियों और अन्य भाषा भाषियों तक पहुँचाने में अनुवाद की अहम भूमिका रही है।

निष्कर्ष

विश्व के सभी विकसित देशों की राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकीपरक प्रगति में अनुवाद की उल्लेखनीय भूमिका रही है। अनुवाद से ही न्यूटन के गुरूत्वाकर्षण सिद्धान्त, डार्विन के विकासवाद, फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद और कार्ल मार्क्स के द्वंद्वात्मक भौतिकवाद की जानकारी अनुवाद से ही प्राप्त हुई है और इससे समूचा विश्व प्रभावित हुआ। वास्तव में विश्व की कम होती दूरियों में अनुवाद की भूमिका अहम है।

अनुवाद के सिद्धांत और व्यवहार पक्ष पर एक संपादित ग्रंथ 'अनुवाद विज्ञान–सिद्धांत और अनुप्रयोग' हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली से 1993 में प्रकाशित हुआ जिसमें विभिन्न विद्वानों के कुल मिलाकर 41 अध्याय समाहित हैं जिनमें से पाँच अध्याय डॉ. नगेन्द्र द्वारा लिखित हैं–अध्याय-8 अनुवाद–प्रकृति और प्रकार, अध्याय-11 अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद–साधन-उपकरण, अध्याय-15 अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद की सामान्य समस्याएँ, अध्याय-16 सर्जनात्मक साहित्य - काव्य का अनुवाद, और अध्याय-41 अनुवाद का संपादन। प्रस्तुत आलेख में इन्हीं पाँचों अध्यायों में व्यक्त डॉ. नगेंद्र

के अनुवाद सिद्धांत विषयक विचारों को आधार बनाकर उनके अनुवाद सिद्धांत विषयक प्रदेय का मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है।

1. अनुवाद–प्रकृति और प्रकार

डॉ. नगेंद्र ने 'अनुवाद' शब्द की व्युत्पत्ति स्पष्ट करते हुए लिखा है कि 'वद्' धातु में 'अनु' उपसर्ग और 'घ्' प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न 'अनुवाद' शब्द का सीधा अर्थ है- पुनर्कथन या पुनर्वाचन। संदर्भ के अनुसार 'पूर्वकथन के समर्थन या पोषण' तक इसका अर्थविस्तार हो जाता है। आजकल 'अनुवाद' शब्द अंग्रेजी के ट्रांसलेशन के पर्याय के रूप में परिनिष्ठित हो गया है। अंग्रेजी कोश के अनुसार 'ट्रांसलेशन' का सीधा अर्थ है - एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में व्यक्त करना। डॉ. नगेंद्र ने अनुवाद की परिभाषा इस प्रकार दी है–"निकटतम पर्याय शब्दावली और वाक्य विन्यास के द्वारा स्रोत भषा के मूल पाठ को समग्र रूप में अर्थात् उसके संपूर्ण प्रतिपाद्य विषय में तथा रूपबंध आदि की यथासंभव रक्षा करते हुए लक्ष्य भाषा में प्रतिष्ठापित करना ही अनुवाद है।" डॉ. नगेंद्र ने अपनी इस परिभाषा को निर्दोष न होने पर कार्यसाधक अवश्य माना है। (वही)

अनुवाद के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए डॉ. नगेंद्र ने लिखा है कि अनुवाद पारिभाषिक अर्थ में न विज्ञान है और न कला। इसके अतिरिक्त उसे निश्चित रूप से शिल्प भी कहना तर्कसंगत नहीं होगा। वास्तविक स्थिति यह है कि आधार विषय के अनुसार अनुवाद में इन तीनों ही तत्त्वों का यथानुपात समावेश रहता है। साहित्यिक अनुवाद विशेष रूप से काव्यानुवाद का अंतर्भाव जहाँ कला में ही हो जाता है, वहाँ वैज्ञानिक तथा शास्त्रीय अनुवाद में विज्ञान के आधार तत्त्वों का प्राधान्य रहता है जबकि शिल्प का प्रयोग प्रायः सर्वत्र ही मिलता है। इस प्रकार अनुवाद एक स्वतंत्र विधा है। अतः स्पष्ट है कि डॉ. नगेंद्र अनुवाद को एक स्वतंत्र विधा मानने के पक्षधर रहे हैं। पश्चिम में यह विधा अनुवाद विज्ञान (Translatology) के रूप में पहले ही मान्यता प्राप्त है।

अनुवाद के प्रकारों पर चर्चा करते हुए डॉ. नगेंद्र का मानना है कि अनुवाद भेदों का निर्णय कई तरह से किया जा सकता है: (1) भाषिक क्षेत्र के अनुसारय (2) विषय के अनुसारय (3) विधा के अनुसार, (4) पद्धति या प्रक्रिया के अनुसार तथा (5) उद्देश्य या प्रयोजन के अनुसार। अनुवाद चूँकि दो भाषाओं के बीच होता है, फिर भी, उसका क्षेत्र एक और दो से अधिक भाषाओं तक विस्तृत हो सकता है और दूसरी ओर केवल एक भाषा की परिधि में भी सीमित रह

सकता है। एक भाषा की परिधि में सीमित अनुवाद के विभिन्न रूप, कृति, भाष्य, टीका, तिलक आदि नाम से अभिहित किए जाते हैं। दो से अधिक भाषाओं में प्रस्तुत अनुवाद का भी प्रचलन पुराकाल से रहा है। विषय के अनुसार अनुवाद के दो व्यापक भेद हैं–(1) शास्त्रीय अनुवाद, और (2) साहित्यिक अनुवाद। शास्त्रीय अनुवाद के चार भेद किए जा सकते हैं–(1) वैज्ञानिक अनुवाद, (2) समाजशास्त्रीय अनुवाद, (3) मानविकी विधाओं का अनुवाद, और (4) तकनीकी अनुवाद। गणित और भौतिक विज्ञानों का अनुवाद वैज्ञानिक अनुवाद है, सामाजिक विज्ञान के विविध विषयों- अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि का अनुवाद समाजशास्त्रीय अनुवाद है, दर्शन, मनोविज्ञान आदि का अनुवाद मानविकी विधाओं के अनुवाद के अंतर्गत आता है और कार्यालय, पत्रकारिता आदि का अनुवाद तकनीकी अनुवाद है।

पद्धति और प्रक्रिया के अनुसार डॉ. नगेंद्र ने अनुवाद के तीन भेद माने हैं–(1) स्वच्छंद अनुवाद, (2) मूलानुवर्ती अनुवाद, और (3) शब्दानुवाद आदि।

उद्देश्य और प्रयोजन के आधार पर उन्होंने अनुवाद के कुछ प्रकार- भेद किए हैं, यथा- संपादित अनुवाद, संक्षिप्त अनुवाद, अनुकूलित अनुवाद, व्याख्यात्मक अनुवाद, संदर्भमूलक अनुवाद, पुनरनुवाद, मशीनी अनुवाद। अनुवाद के क्षेत्र के अंतर्गत डॉ. नगेंद्र ने भाषाविदों की मान्यता का समर्थन करते हुए तीन क्षेत्रों का उल्लेख किया है–(1) संकेतमूलक, (2) पाठमूलक, तथा (3) संदर्भमूलक। इस प्रकार अनुवाद के स्वरूप के संबंध में डॉ. नगेंद्र की दृष्टि एवं विचार पूर्णतः व्यापक एवं सर्वथा स्पष्ट हैं।

2. अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद–साधन-उपकरण

अनुवाद के साधन और उपकरणों की चर्चा अनुवाद सिद्धांतों के संदर्भ में सर्वथा अपेक्षित है। डॉ. नगेंद्र अनुवाद कार्य के लिए तीन गुणों की आवश्यकता स्वीकार करते हैं–(1) मूल विषय का ज्ञान, (2) स्रोत और लक्ष्य भाषाओं पर अपेक्षित अधिकार, और (3) अभ्यास। इनमें से अभ्यास को तो वे व्यक्ति सापेक्ष मानते हैं, लेकिन विषयज्ञान और भाषाज्ञान के लिए विशेष साधन-उपकरणों की उसी प्रकार आवश्यकता मानते हैं जिस प्रकार भौतिक निर्माण कार्य के लिए औजारों की आवश्यकता होती है। विषयज्ञान की वृद्धि में मूल ग्रंथों के अतिरिक्त परिभाषा कोशों का अध्ययन आवश्यक होता है। अंग्रेजी में सभी विषयों के

परिभाषा-कोश उपलब्ध हैं–भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान, गणित, भूविज्ञान, नृविज्ञान आदि के लिए सहायक अनेक परिभाषा कोश उपलब्ध हैं जिनमें विषय से संबद्ध संकल्पनाओं की स्पष्ट व्याख्या दी ही है। इसी प्रकार सामाजिक विज्ञानों और मानविकी विषयों के लिए भी अंग्रेजी में अनेक परिभाषा कोश सहज प्राप्य हैं। हिन्दी में भी वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के तत्त्वावधान में अनेक परिभाषा कोश प्रकाशित रूप में उपलब्ध हैं। अंग्रेजी के विश्वकोशों–जैसे- 'एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका', 'एनसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना' आदि की भी यथावश्यक सहायता ली जा सकती है। मूल या स्रोतभाषा अंग्रेजी और लक्ष्यभाषा हिन्दी के शुद्ध और सुष्ठु प्रयोग के लिए सहायक ग्रंथ है–(1) बृहत् अंग्रेजी कोश–वैवस्टर, ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी, थिसारस आदिय (2) अंग्रेजी-हिन्दी कोश–कामिल बुल्के का अंग्रेजी-हिन्दी कोश, डॉ. बाहरी का अंग्रेजी हिन्दी कोश। इस संदर्भ में सबसे अधिक उपादेय है - वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित विभिन्न विषयों के पारिभाषिक शब्दावली संग्रह। कार्यालयों में प्रयुक्त अंग्रेजी वाक्यों और वाक्यांशों के हिन्दी अनुवाद सहज सुलभ कराने हेतु वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय आदि के कार्य सराहनीय एवं उपयोगी हैं। अनुवाद के सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक पक्ष से संबद्ध समस्याओ पर हिन्दी में अनुवाद सिद्धांत विषयक ग्रंथ उपलब्ध हैं जिनके अध्ययन से, डॉ. नगेंद्र के अनुसार, अनुवाद कर्मी को सिद्धांत और व्यवहार की समस्याओं का समाधान करने में काफी सहायता मिल सकती है। अनुवाद मूलत: सिद्धांत का विषय न होकर व्यवहार का विषय है, अत: विभिन्न विषयों के अनूदित उपलब्ध ग्रंथों का अवलोकन भी उपादेय हो सकता है।

सर्जनात्मक साहित्य के क्षेत्र में साहित्य अकादमी आदि संस्थाएँ अच्छा कार्य कर रही हैं। अंग्रेजी के कथा-साहित्य, नाटक, आलोचना आदि विषयों के कतिपय प्रसिद्ध ग्रंथों के हिन्दी अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। इन ग्रंथों का सामान्य परिचय भी अनुवाद कर्मी का काफी मार्गदर्शन कर सकता है।

डॉ. नगेंद्र का मानना है कि अनुवाद भले ही सर्जनात्मक साहित्य की कोटि में न आता हो, फिर भी, उत्तम अनुवाद अनु-सर्जना तो है ही। सर्जना के, शक्ति, निपुणता और अभ्यास- ये तीन हेतु माने गए हैं। इनमें शक्ति या प्रतिभा का योगदान सभी सर्जनात्मक कार्यों में रहता है और 'अनुसर्जना' रूप अनुवाद कर्म में भी उसकी प्रेरणा आवश्यक है। किंतु सर्जना के अन्य रूपों की अपेक्षा यहाँ 'निपुणता' और 'अभ्यास' का महत्त्व अपेक्षाकृत अधिक है। इन दोनों गुणों के

विकास में अनुवाद के साधन-उपकरणों का प्रामाणिक ज्ञान निश्चय ही उपयोगी होगा।

3. अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद की सामान्य समस्याएँ

डॉ. नगेंद्र के अनुसार 'कथ्य में तथ्य' तथा विचार की प्रधानता और कथन प्रक्रिया में भाषा-शैली की ऋजुता के कारण ज्ञान के साहित्य का अनुवाद ललित साहित्य के अनुवाद की अपेक्षा अधिक सरल होता है। ज्ञान के साहित्य अथवा सामान्य वांमय का अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करने पर अनेक प्रकार की समस्याएँ सामने आती हैं। अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करने के लिए चार बातों की जरूरत होती है–(1) मूल या स्रोत भाषा अंग्रेजी पर अधिकार, (2) अनुवाद की भाषा या लक्ष्य भाषा पर अधिकार, (3) विषय का सम्यक् ज्ञान, और (4) अभ्यास। इन अर्हताओं से सम्पन्न व्यक्ति जब उपलब्ध साधन-उपकरणों से सम्पन्न होकर अनुवाद कार्य में संलग्न होता है तो उसके सामने समस्या आती है कि कहाँ से शुरू किया जाए। डॉ. नगेंद्र के अनुसार अनुवाद कार्य में प्रवृत्त होने की सामान्यत: तीन प्रमुख विधियाँ हैं–(1) विषय क्रम, (2) अनुच्छेद क्रम, और (3) वाक्य क्रम। कुछ लोग शब्दक्रम का भी सहारा लेते हैं।

डॉ. नगेंद्र के अनुसार अनुवाद-कर्म में उपयुक्त पर्याय के चयन की समस्या प्रमुख समस्या का रूप धारण करती है। अनुवादक के सामने प्रश्न आता है कि उपलब्ध पर्यायों में से वह किस का चयन करे। उदाहरण के लिए अंग्रेजी का एक सीधा-सा शब्द है- Fine- इसके अनेक अर्थ हैं–सुंदर, अच्छा, उत्तम, सुसंस्कृत, सूक्ष्म, बारीक आदि। व्यक्ति का विशेषण होने पर फाइन के लिए उपयुक्त पर्याय होगा- अच्छा या सुसंस्कृत। He is a fine man - वह अच्छा आदमी है या सुसंस्कृत पुरुष है। भाषण आदि के संदर्भ में सही पर्याय होगा- सुंदर–It was a fine speech - कपड़े के लिए प्रयुक्त होने पर 'बारीक' पर्याय ही ग्राह्य हो सकता है। ये तीनों पर्याय अर्थ की दृष्टि प्राय: संबद्ध हैं, किन्तु Fine का एक अर्थ होता है- जुर्माना। भाषा वैज्ञानिक जानता है कि इस अर्थ में Fine शब्द एक धातु से उत्पन्न हुआ है, किंतु सामान्य प्रयोक्ता न इस तथ्य को जानता है और न उसे इसकी आवश्यकता है। अत: पर्याय निर्धारण का प्रमुख और मौलिक आधार है- संदर्भ। संदर्भ के द्वारा ही शुद्ध और उपयुक्त पर्याय का निर्णय संभव होता है। पर्याय निर्धारण का दूसरा आधार है - अनुवाद की भाषा की प्रकृति और प्रायोगिक स्तर। हिन्दी की अपनी प्रकृति है। यद्यपि आधुनिक हिन्दी

की गद्य शैली पर अंग्रेजी का स्पष्ट प्रभाव रहा है, फिर भी, उसके वाक्यविन्यास, शब्दयोजना, वर्ण मैत्री आदि का पृथक वैशिष्ट्य है। संस्कृत और अंग्रेजी से भिन्न इसका अपना मुहावरा है, जो उसके स्वरूप को रेखांकित करता है। इसलिए अंग्रेजी के वाक्यांशों, मुहावरों और पर्यायों को भी उसकी इसी प्रकृति के अनुरूप ढालना आवश्यक होता है। प्रायोगिक स्तर से अभिप्राय है – भाषिक संरचना या शैली स्तर।

विशेषण – क्रिया विशेषण शब्दों, क्रियापदों, कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य, प्रत्यक्ष और परोक्ष कथन, मिश्रवाक्यों, मुहावरों और कहावतों के अनुवाद में अत्यंत सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है। कहावत का शाब्दिक अनुवाद नहीं चल सकता। डॉ.नगेंद्र के अनुसार मुहावरों और कहावतों का अनुवाद करने के सामान्यत: तीन नियम हैं–

1. सही अर्थ का संप्रेषण करने वाले समानांतर मुहावरे या कहावत का प्रयोग किया जा सकता है, किंतु यदि समानांतर मुहावरा या कहावत शिष्ट भाषा में प्रयोग करने योग्य नहीं है तो उसके स्थान पर ऐसी व्याख्यात्मक शब्दावली का प्रयोग करना चाहिए जो मूल के सर्वाधिक निकट हो।
2. समानांतर मुहावरा या कहावत न मिलने पर हिन्दी की प्रकृति के अनुसार उसकी व्याख्या प्रस्तुत करना ही उपयुक्त होता है।
3. यदि अंग्रेजी के मुहावरे का हिन्दी में शब्दानुवाद प्रचलित हो गया है तो उसका मुक्त भाव से प्रयोग किया जा सकता है।

डॉ. नगेंद्र के अनुसार सफल अनुवादक की सबसे पहली और अनिवार्य शर्त यह है कि उसमें मूल पाठ का यथार्थ बोध कराने की अर्थात उसका सही-सही अर्थ व्यक्त करने की क्षमता होनी चाहिए। यदि अनुवाद में अभिप्रेत अर्थ के विषय में किसी प्रकार की भ्रांति, विचलन या संदेह की संभावना रहती है तो उसमें अन्य सभी गुण निरर्थक हो जाते हैं। अत: शब्द-शुद्धि और अर्थ-शुद्धि सफल अनुवाद की पहली आवश्यकता है। दूसरा गुण है – स्पष्टता और तीसरा गुण है – भाषिक स्वच्छता। अनुवाद की भाषा सुवाच्य और प्रवाहमयी होनी चाहिए। सफल अनुवाद का अंतिम और विशिष्ट गुण यह है कि उसमें अनुवाद की गंध नहीं होनी चाहिए। सिद्ध अनुवादक स्रोत और लक्ष्य दोनों भाषाओं पर अधिकार और निरंतर अभ्यास के बल पर इस गुण का यथाक्रम विकास कर लेता है। उसके अनुवाद को पढ़कर पाठक को ऐसा प्रतीत नहीं होना चाहिए कि वह किसी अन्य पाठ का अनुवाद पढ़ रहा है। अत: निष्कर्षत: सफल अनुवाद

की पहचान के गुण डॉ. नगेंद्र निम्नानुसार निर्धारित करते हैं - शुद्धता अर्थात् अर्थ और भाषा की शुद्धता, भाषिक स्वच्छता, प्रवाह और सुवाच्यता तथा अनुवाद की गंध से यथासंभव मुक्त होना।

4. सर्जनात्मक साहित्य - काव्य का अनुवाद

डॉ. नगेंद्र के अनुसार ज्ञान के साहित्य के अनुवाद की अपेक्षा सर्जनात्मक साहित्य का अनुवाद अधिक जटिल तथा कठिन होता है। ज्ञान के साहित्य के आधार तत्त्व - तथ्य और विचार जहाँ मूर्त तथा निश्चित होते हैं वहाँ सर्जनात्मक साहित्य के विधायक तत्त्व भाव और कल्पना सर्वथा सूक्ष्म-तरल होते हैं। तथ्य और विचार का तो संप्रेषण हो सकता है और होता है, किंतु भाव और कल्पना का उद्‌बोध ही किया जा सकता है, संप्रेषण नहीं। वास्तव में, उद्‌बोध ही उसका संप्रेषण है क्योंकि कवि सहृदय के चित्त में अपनी अनुभूति को ही उदबुद्ध करता है। काव्य का माध्यम बिम्बात्मक भाषा होती है, जो अर्थ बोध कराके सहृदय की कल्पना में भाव चित्र जगाकर कृतकार्य होती है। अतः सर्जनात्मक या ललित साहित्य के अनुवाद की प्रक्रिया निश्चय ही अधिक जटिल होती है। कविता सर्जनात्मक साहित्य का नवनीत है। उसकी संवेद्य अनुभूति 'सांद्र' और बिम्ब योजना अत्यंत संश्लिष्ट होती है, इसलिए उसे अनन्य उक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है।

डॉ. नगेंद्र का मानना है कि किसी भी काव्यकृति के दो घटक हमारे सामने आते हैं-(1) विषयवस्तु, और (2) शैली। उनका मंतव्य है कि व्यवहार की दृष्टि से काव्य कृति की विषयवस्तु और शैली को पृथक रूप में ग्रहण कर उसका अनुवाद या अनुवाद का प्रयत्न ही किया जा सकता है।

डॉ. नगेंद्र के अनुसार काव्य की विषयवस्तु का निर्माण मूलतः अनुभूति और विचार के आधार पर होता है। विचार का संप्रेषण, उसके सूक्ष्म रूप के कारण, निश्चय ही कठिन है। प्रत्येक धारणा, चाहे वह सही हो या गलत, अपने आपमें निश्चित तथा स्थिर होती है और सुधी अनुवादक बौद्धिक अभ्यास के द्वारा उसके तत्त्व को ग्रहण कर पारिभाषिक पर्यायों तथा यथावश्यक परिभाषा कोशों की सहायता से उसे अपनी भाषा में प्रस्तुत कर सकता है। अनुभूति के अनुवाद की कठिनाई यह है कि उसका स्वरूप अमूर्त होने के साथ-साथ तरल भी होता है। सूक्ष्म तरल पदार्थ का स्थानांतरण अपने आप में अत्यंत कठिन कार्य है। काव्यशैली का अनुवाद और भी अधिक

असाध्य साधना है। काव्य भाषा का सौंदर्य प्रायः लक्षणा और व्यंजना पर आधारित रहता है। लक्षणा का रूपांतर करने के लिए अनुवादक को ऐसे पर्यायों का चयन करना आवश्यक होता है जिनमें मूर्त विधान की क्षमता हो। इसी प्रकार, व्यंजना के अनुवाद के लिए वे ही पर्याय सार्थक हो सकते हैं, जो पाठक के चित्त में समान कल्पना जगा सकें।

काव्य भाषा का दूसरा प्रमुख घटक या आधार तत्त्व है – बिम्ब। ऐंद्रिय बोध के अनुसार सामान्यतः पाँच प्रकार के बिम्ब होते हैं–चाक्षुष या दृश्य बिंब, श्रौत या नाद बिम्ब, रस्य या आस्वाद्य बिम्ब, स्पर्श बिंब और घ्राण या गंध बिंब। इनमें से दृश्य बिंबों का उनके मूर्त रूप के कारण अनुवाद सबसे सरल होता है यथा – Rosy Cheeks = गुलाबी गाल, Blue Sky = नीला आकाश, Dark eyes = श्यामल नेत्र, Dark night = काली रात आदि। रस्य या आस्वाद बिम्ब का अनुवाद भी उपयुक्त पर्यायों द्वारा हो जाता है, यथा – Sweet Voice = मधुर स्वर, Bitter reaction = कटु प्रतिक्रिया, Bitter Remark = कड़बी बात आदि। इसी तरह स्पर्श बिंबय यथा – Silken touch = रेशमी स्पर्श, Stone deaf = वज्रबधिर आदि। गंध बिंब यथा – Stinking atmosphere = दुर्गंधपूर्ण वातावरण आदि। अतः बिंबों के अनुवाद में अनुवादक को पर्याप्त सावधानी बरतनी होती है।

काव्य भाषा का एक अन्य आवश्यक आधार तत्त्व है – अलंकार। उपमान और बिंब अलंकार के उपजीवी हैं। अलंकार के दो भेद हैं – अर्थालंकार और शब्दालंकार। इनमें अर्थालंकारों के अनुवाद का सार्थक प्रयत्न किया जा सकता है। सादृश्यमूलक अलंकार सबसे कम कठिनाई उत्पन्न करते हैं। वैषम्यमूलक अलंकारों का अनुवाद अपेक्षाकृत जटिल होता है। अन्य अलंकारों का अनुवाद अत्यंत जटिल होता है, जो अर्थ-संदर्भों के अतिरिक्त भाषिक संस्कार पर भी निर्भर करते हैं। शब्दालंकारवर्ग के श्लेष, यमक आदि का भाषांतर प्रायः असंभव ही होता है।

छंद कविता का आवश्यक साधन-उपकरण है। अंग्रेजी तथा दूसरी यूरोपीय भाषाओं का संगीतिक आधार भिन्न होने से पाश्चात्य छंदों का अनुवाद हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में प्रायः दुःसाध्य ही होता है। अतः कविता का अनुवाद एक प्रकार की असाध्य साधना ही है। डॉ. नगेंद्र ने काव्यानुवाद को असाध्य साधना नहीं तो दुःसाध्य साधना माना है।

5. अनुवाद का संपादन

अनुवाद संपादन के संबंध में डॉ. नगेंद्र का मत है कि अनुवाद के संदर्भ में 'संपादन' शब्द को सामान्य अर्थ में ग्रहण नहीं किया जा सकता। सामान्य अर्थ में संपादक को मूल पाठ का पुनरीक्षण या संशोधन करने के अतिरिक्त उसमें काट-छाँट करने और क्रम परिवर्तन आदि का अधिकार प्राप्त है, किंतु अनुवाद के संपादन के संदर्भ में यह अर्थ ग्राह्य नहीं है। अनुवादक की तरह अनुवाद संपादक को भी मूल पाठ से विचलन का अधिकार सामान्यत: प्राप्त नहीं है। वह मूल पाठ में काट-छाँट नहीं कर सकता, क्रम परिवर्तन भी उसी स्थिति में कर सकता है जब मूल पाठ का अर्थ संप्रेषण बाधित हो रहा हो। अत: उसके अधिकार की परिधि पुनरीक्षण और संशोधन तक ही प्राय: सीमित है। पुनरीक्षण के दो अंग हैं - विषय पुनरीक्षण और भाषा पुनरीक्षण। विषय पुनरीक्षण के लिए विषय का विश्लेषण होना तो सर्वथा आवश्यक है हीय साथ ही, मूल और लक्ष्य भाषा का सम्यक ज्ञान भी आवश्यक है। अत: पुनरीक्षण का दायित्व सामान्यत: ऐसे विद्वानों को ही देना चाहिए जो विषय के अधिकारी होने के साथ-साथ अनुवाद-भाषा की प्रकृति, शब्दावली तथा प्रयोग भंगिमाओं से परिचित हों। जहाँ एक ही व्यक्ति में ये दोनों गुण न हों, वहाँ एक विषय विशेषज्ञ और एक भाषाविद् को संयुक्त रूप से यह दायित्व सौंपा जा सकता है। ऐसी स्थिति में डॉ. नगेंद्र के अनुसार आदर्श व्यवस्था तो यह होगी कि दोनों विद्वान साथ-साथ बैठकर कार्य करें, किंतु जहाँ यह संभव न हो वहाँ विषय पुनरीक्षण और भाषा पुनरीक्षण पृथक रूप से किया जा सकता है। किंतु ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि विषय पुनरीक्षण को भाषा का तथा भाषा पुनरीक्षण को विषय का कार्य साधक ज्ञान अनिवार्यत: होना चाहिए। (वही)।

भाषा पुनरीक्षण का ध्यान सबसे पहले पर्याय चयन पर जाता है। तदुपरांत, अंग्रेजी में प्रचुरता से प्रयुक्त कर्मवाच्य वाक्यों के हिन्दी अनुवाद पर ध्यान देना होता है। इसी शृंखला में प्रत्यक्ष-परोक्ष कथन का प्रसंग भी आता है। अंग्रेजी में प्रत्यक्ष-परोक्ष कथन के विषय में निश्चित व्याकरणिक नियम है जिसका निर्वाह हिन्दी में सर्वथा अव्यवहार्य और भ्रामक हो जाएगा।

भाषा पुनरीक्षक के सामने एक बड़ी समस्या मिश्र वाक्यों के अनुवाद के प्रसंग में आती है। अंग्रेजी में कर्म क्रियापद के बाद आता है। अत: कर्म से संबद्ध उपवाक्यों की शृंखला का विनियोग सामान्य रूप से हो जाता है, यद्यपि वहाँ भी

दो से अधिक उपवाक्यों का समावेश ठीक तरह नहीं हो पाता। इधर हिन्दी में कर्म पहले और क्रियापद बाद में आता है। अत: क्रियापद के बीच में पड़ जाने से कर्म और उससे संबद्ध उपवाक्यों के बीच में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है और दोनों की सहज संगति बाधित हो जाती है। उदाहरण के लिए - दिस ब्रिज, व्हिच इज द लार्जेस्ट ब्रिज इन अवर जोन, वाज बिल्ट अंडर द सुपरवजन ऑफ मिस्टर केले, हू वाज ए फेमस आर्किटेक्ट ऑफ दोज टाइम्स। इसका यथावत् अनुवाद होगा - इस पुल का, जो हमारे क्षेत्र का सबसे बड़ा पुल है, निर्माण श्री केले के निरीक्षण में हुआ था, जो उस समय के प्रसिद्ध वास्तुशिल्पी थे। व्याकरण की दृष्टि से निर्दोष होने पर भी, यह वाक्य सुपाठ्य न होने के कारण हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल नहीं है। यह वाक्य रचना इस प्रकार की जा सकती है–इस पुल का निर्माण श्री केले के निरीक्षण में हुआ था जो उस समय के प्रसिद्ध वास्तु शिल्पी थे। यह पुल हमारे क्षेत्र का सबसे पड़ा पुल है। या क्रम में परिवर्तन कर यह लिखा जा सकता है - यह हमारे क्षेत्र का सबसे बड़ा पुल है। इसका निर्माण श्री केले के निरीक्षण में हुआ था, जो उस समय के प्रसिद्ध वास्तुशिल्पी थे।

मुहावरों और लोकोक्तियों का अनुवाद भी एक जटिल प्रश्न है। अत: अनुवाद पुनरीक्षक को इस संबंध में समाधान अत्यंत सावधानी से करना चाहिए। साथ ही वर्तनी की एकरूपता का ध्यान भी पुनरीक्षक को रखना होता है। डॉ. नगेंद्र का मानना है कि इन नियमों का मूल संबंध अनुवादकार्य के साथ है, किंतु भाषा पुनरीक्षक के लिए भी उन पर ध्यान देना उतना ही, बल्कि उससे भी ज्यादा जरूरी है। भाषा-शुद्धि के बाद पुनरीक्षक के सामने एक अंतिम और महत्त्वपूर्ण प्रश्न अनुवाद के समग्र रूप की समीक्षा का आता है। इसके अंतर्गत दो विशेष गुणों का आकलन करना होता है–(1) प्रवाह और सुवाच्यता, और (2) अनुवाद की गंध का अभाव। डॉ. नगेंद्र के मतानुसार, यहाँ पुनरीक्षक मूल पाठ का ध्यान किए बिना ही अनूदित पाठ को पढ़कर यह देखता है–

(1) अनुवाद की भाषा प्रवाहमयी है या नहीं।
(2) अनूदित पाठ अपने स्वतंत्र रूप में सुपाठ्य है या नहीं, और
(3) कुल मिलाकर उसमें अनुवाद की गंध तो नहीं आती।

इन तीनों विशेषताओं के विषय में आश्वस्त हुए बिना पुनरीक्षक या व्यापक रूप में कहें संपादक का दायित्व पूरा नहीं होता।

अत: उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि डॉ. नगेंद्र ने अनुवाद के सिद्धांत और व्यवहार पक्ष पर साधिकार लेखनी चलाई है। अनुवाद का स्वरूप, प्रकृति

और प्रकार, अनुवाद के उपकरण, अनुवाद की समस्याएँ, काव्यानुवाद की समस्याएँ, अनुवाद पुनरीक्षण और संपादन आदि विषयक उनके विचार अनुवाद के क्षेत्र से जुड़े लोगों के लिए पथ प्रदर्शक रूप में हैं। अतः इस दृष्टि से डॉ. नगेंद्र का अनुवाद सिद्धांत विषयक प्रदेय अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उनके द्वारा सम्पादित 'अनुवाद विज्ञान–सिद्धांत और अनुप्रयोग' विषयक ग्रंथ अनुवाद सिद्धांत और व्यवहार विषयक अत्यंत महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी ग्रंथ है।

अनुवाद के सिद्धांत

भाषा मनुष्य द्वारा स्वीकृत और संप्रेषण व्यवस्था है। अनुवाद और भाषा विज्ञान के संबंधों को रेखांकित करते समय यह ध्यान देना आवश्यक है कि भाषा विज्ञान से अनुवाद का संबंध मूलतः अनुवाद सिद्धांत से स्थापित होता है। जिस प्रकार कोई भी व्यक्ति व्याकरण के प्रत्यक्ष ज्ञान के बिना अच्छा वक्ता हो सकता है उसी प्रकार यह समझना कि भाषा विज्ञान के ज्ञान के बिना अनुवाद करना संभव नहीं, गलत होगा। अनुवाद मूलतः व्यवहार है और अभ्यास से ही साबित होता है। भाषा विज्ञान के ज्ञान से अनुवादक दोनों भाषाओं के घटकों की आंतरिक व्यवस्था या प्रणाली को ठीक-ठीक समझने में मदद करता है।

अनुवाद करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिएः–

स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा का सम्यक ज्ञान, विषय का सम्यक ज्ञान, सतत अध्ययनशीलता एवं अभ्यास।

समस्त संसार विविधता से परिपूर्ण है। दुनिया के विभिन्न देशों की अपनी-अपनी भिन्न-भिन्न भाषाई, सांस्कृतिक, सामाजिक, भौगोलिक और राजनैतिक विशेषताएं हैं। "वसुदेव कुटुंबकम" की संकल्पना इन देशों को आपस में जोड़ने का काम करती है। कोई भी व्यक्ति समाज या देश इन भाषाओं का ज्ञान एक साथ या एक ही समय में प्राप्त नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में इन विविधताओं को जानने के लिए व्यक्ति को अनुवाद की सहायता लेनी पड़ती है, ताकि वह एक भाषा में प्राप्त जानकारी/सूचना को दूसरी भाषा में व्यक्त कर सके। इसी आवश्यकता को मद्देनजर रखते हुए अनुवाद संकल्पना का उदय होता है।

2

अनुवाद के प्रकार और प्रकृति

अनुवाद की प्रकृति (अर्थात् अनुवाद-क्रिया कला के अन्तर्गत आता है या विज्ञान के या शिल्प के) के साथ-साथ अनुवाद के विविध प्रकार एवं प्रभेद की भी चर्चा की जा रही है।

अनुवाद के प्रकार

गद्य-पद्य पर आधारित प्रभेद

गद्यानुवाद—गद्यानुवाद सामान्यत: गद्य में किए जाने वाले अनुवाद को कहते हैं। किसी भी गद्य रचना का गद्य में ही किया जाने वाला अनुवाद गद्यानुवाद कहलाता है। किन्तु कुछ विशेष कृतियों का पद्य से गद्य में भी अनुवाद किया जाता है। जैसे–'मेघदूतम्' का हिन्दी कवि नागार्जुन द्वारा किया गद्यानुवाद।

पद्यानुवाद—पद्य का पद्य में ही किया गया अनुवाद पद्यानुवाद की श्रेणी में आता है। दुनिया भर में विभिन्न भाषाओं में लिखे गए काव्यों एवं महाकाव्यों के अनुवादों की संख्या अत्यन्त विशाल है। इलियट के 'वेस्टलैण्ड', कालिदास के 'मेघदूतम्' एवं 'कुमारसंभवम्' तथा टैगोर की 'गीतांजलि' का विभिन्न भाषाओं में पद्यानुवाद किया गया है। साधारणत: पद्यानुवाद करते समय स्रोत-भाषा में व्यवहृत छन्दों का ही लक्ष्य-भाषा में व्यवहार किया जाता है।

छन्दमुक्तानुवाद—इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक को स्रोत-भाषा में व्यवहार किए गए छन्दों को अपनाने की बाध्यता नहीं होती। अनुवादक विषय

के अनुरूप लक्ष्य-भाषा का कोई भी छन्द चुन सकता है। साहित्य में ऐसे अनुवाद विपुल संख्या में उपलब्ध हैं।

साहित्य विधा पर आधारित प्रभेद

काव्यानुवाद—स्रोत-भाषा में लिखे गए काव्य का लक्ष्य-भाषा में रूपान्तरण काव्यानुवाद कहलाता है। यह आवश्यकतानुसार गद्य, पद्य एवं मुक्त छन्द में किया जा सकता है। होमर के महाकाव्य 'इलियड' एवं कालिदास के 'मेघदूतम्' एवं 'ऋतुसंहार' इसके उदाहरण हैं।

नाट्यानुवाद—किसी भी नाट्य कृति का नाटक के रूप में ही अनुवाद करना नाट्यानुवाद कहलाता है। नाटक रंगमंचीय आवश्यकताओं एवं दर्शकों को ध्यान में रखकर लिखा जाता है। अत: इसके अनुवाद के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है। संस्कृत के नाटकों के हिन्दी अनुवाद तथा शेक्सपियर के नाटकों के अन्य भाषाओं में किए गए अनुवाद इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

कथा अनुवाद—कथा अनुवाद के अन्तर्गत कहानियों एवं उपन्यासों का कहानियों एवं उपन्यासों के रूप में ही अनुवाद किया जाता है। विश्वप्रसिद्ध उपन्यासों एवं कहानियों के अनुवाद काफी प्रचलित एवं लोकप्रिय हैं। मोपासाँ एवं प्रेमचन्द की कहानियों का दुनिया की विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हुआ है। रूसी उपन्यास 'माँ', अंग्रेजी उपन्यास 'लैडी चौटर्ली का प्रेमी' तथा हिन्दी के 'गोदान', 'त्यागपत्रा' तथा 'नदी के द्वीप' के विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हुए हैं।

अन्य साहित्यिक विधाओं के अनुवाद—अन्य साहित्यिक विधाओं के अन्तर्गत रेखाचित्र, निबन्ध, संस्मरण, रिपोर्ताज, डायरी एवं आत्मकथा आदि के अनुवाद आते हैं। पं. जवाहर लाल नेहरू की कृति 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' तथा महात्मा गांधी एवं हरिवंशराय बच्चन की आत्मकथाओं के विभिन्न भाषाओं में किए गए अनुवाद इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

विषय आधारित प्रभेद

ललित साहित्यानुवाद—ललित साहित्यानुवाद के अन्तर्गत साहित्यिक विधाओं को रखा जाता है। कविता, ललित निबन्ध, कहानी, डायरी, आत्मकथा, उपन्यास आदि। इसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है।

धार्मिक-पौराणिक साहित्यानुवाद— जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है में विभिन्न धर्मों के मानक धर्मग्रंथों, गीता, भागवत, कुरान, बाइबिल आदि का अनुवाद किया जाता है। वेद, उपनिषद् आदि भी इसके साथ शामिल हैं।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी सामग्री के अनुवाद—वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद में विषय मुख्य है और शैली गौण। साहित्यिक अनुवाद में प्रायः 'क्यों' से ज्यादा 'कैसे' का महत्त्व होता है जबकि वैज्ञानिक अनुवाद में 'कैसे' सेज्यादा 'क्या' का महत्त्व होता है। इसमें भावानुवाद त्याज्य है और प्रायः शब्दानुवाद अपेक्षित है। इसमें पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग अपेक्षित है, ध्वन्यात्मक या व्यंग्यात्मक शब्दावली का नहीं। कुल मिलाकर इस प्रकार के अनुवाद में सूचना, संकल्पना तथा तथ्य महत्त्वपूर्ण होते हैं। सबसे जरूरी बात यह कि वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद में अनुवादक विषय का सम्यक जानकार हो और साथ ही प्रशिक्षित भी। तभी वह अनुवाद के साथ न्याय कर पाएगा।

विधि का अनुवाद—इसमें एक भाषा की विधि सम्बन्धी अर्थात् कानून की सामग्री को दूसरी भाषा में अनुवाद किया जाता है। कानून की किताबें, अदालत के मुकद्दमें, तत्सम्बन्धी विभिन्न आवेदन-पत्र, कानूनी संहिताएँ, नियम-अधिनियम, संशोधित अधिनियम आदि कानूनी अनुवाद के प्रमुख हिस्से हैं। इस प्रकार के अनुवाद में प्रत्येक शब्द का अपना विशेष महत्त्व होता है। इसमें भावार्थ नहीं शब्दार्थ महत्त्वपूर्ण होता है। इसके प्रत्येक शब्द का अर्थ स्पष्ट होता है। एक शब्द का एक ही अर्थ अपेक्षित होता है। इस प्रकार के अनुवाद की भाषा पूरी तरह तकनीकी प्रकृति की होती है।

प्रशासनिक अनुवाद—प्रशासनिक अनुवाद से तात्पर्य है वह अनुवाद जिसमें एक भाषा की प्रशासन सम्बन्धी सामग्री को दूसरी भाषा में परिवर्तित किया जाता है। प्रशासनिक अनुवाद का सम्बन्ध सरकारी कार्यालयों से होने के कारण इसे कार्यालयी अनुवाद भी कहा जाता है। इस अनुवाद के अन्तर्गत प्रशासन के सभी कागजात, सरकारी पत्र, परिपत्र, सूचनाएँ-अधिसूचनाएँ, नियम-अधिनियम, प्रेस विज्ञप्तियाँ आदि आते हैं। केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, संसद, विभिन्न मंत्रालय आदि में द्विभाषी तथा बहुभाषी स्थिति के कारण प्रशासनिक अनुवाद के बिना काम नहीं चलता। यहाँ भी पारिभाषिक शब्दावली का सहारा लिया जाता है। प्रशासनिक अनुवाद में 'कथ्य' अर्थात् 'कही गई बात' महत्त्वपूर्ण होती है।

मानविकी एवं समाजशास्त्र का अनुवाद—मानविकी एवं समाजशास्त्र से सम्बन्धित सामग्रियों के अनुवाद के लिए अनुवादक का विषय ज्ञान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। इस तरह का अनुवाद अनुसंधान, सर्वेक्षण, परियोजना एवं शैक्षिक आवश्यकता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होता है। इस तरह के अनुवाद में सरलता एवं स्पष्टता अपेक्षित होती है।

संचार माध्यमों की सामग्री का अनुवाद—वर्तमान युग के संचार माध्यमों ने मानव-विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। संचार माध्यमों के जरिए ही वह देश-विदेश और समग्र दुनिया की जानकारी हासिल करता है। किन्तु विविध देशों में विविध भाषाएँ होने के कारण संचार माध्यम की सामग्री का अनुवाद महत्त्वपूर्ण बना हुआ है। इस अनुवाद के अन्तर्गत मुख्यत: दैनिक समाचार, सभी प्रकार की पत्रा-पत्रिकाओं, दूरदर्शन तथा आकाशवाणी आदि क्षेत्रों की सामग्री के अनुवाद आते हैं। इन सम्पर्क माध्यमों में दुनिया के सारे ज्ञान-विज्ञान की सामग्री समाहित होती है। इसमें राजनीति, व्यापार, खेल, विज्ञान, साहित्य आदि की अर्थात् जीवन से सम्बन्धित सभी विषय-क्षेत्रों की सामग्री होती है।

उपर्युक्त प्रकारों के अलावा विषयाधारित अनुवाद में संगीत, ज्योतिष, पर्यावरण, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अभिलेखों, गजेटियरों आदि की सामग्री, वाणिज्यानुवाद, काव्यशास्त्र, भाषाविज्ञान सम्बन्धी अनेकानेक विषयों को शामिल किया जा सकता है।

अनुवाद की अन्य प्रकृति पर आधारित प्रभेद

मूलनिष्ठ—मूलनिष्ठ अनुवाद कथ्य और शैली दोनों की दृष्टि से मूल का अनुगमन करता है। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक का प्रयास रहता है कि अनूदित विचार या कृति स्रोत-भाषा के विचारों एवं अभिव्यक्ति के निकट रहे।

मूलमुक्त—मूलमुक्त अनुवाद को भोलानाथ तिवारी ने मूलाधारित अथवा मूलाधृत अनुवाद भी कहा है। वैसे तो मूलमुक्त का अर्थ ही होता है मूल से हटकर, किन्तु किसी भी अनुवाद में विचारों के स्तर पर परिवर्तन की गुँजाइश नहीं होती। अत: यहाँ मूल से भिन्न का अर्थ है शैलीगत भिन्नता तथा कहावतों एवं उपमानों का देशीकरण करने की अनुवादक की स्वतंत्रता।

अनुवाद के कुछ अन्य प्रभेद

शब्दानुवाद—स्रोत-भाषा के शब्द एवं शब्द क्रम को उसी प्रकार लक्ष्य-भाषा में रूपान्तरित करना शब्दानुवाद कहलाता है। यहाँ अनुवादक का लक्ष्य मूल-भाषा के विचारों को रूपान्तरित करने से अधिक शब्दों का यथावत वत्अनुवाद करने से होता है। शब्द एवं शब्द क्रम की प्रकृति हर भाषा में भिन्न होती है। अत: यांत्रिक ढंग से उनका यथावत अनुवाद करते जाना काफी कृत्रिम,

दुर्बोध्य एवं निष्प्राण हो सकता है। शब्दानुवाद उच्च कोटि के अनुवाद की श्रेणी में नहीं आता।

भावानुवाद—साहित्यिक कृतियों के सन्दर्भ में भावानुवाद का विशेष महत्त्व होता है। इस प्रकार के अनुवाद में मूल-भाषा के भावों, विचारों एवं सन्देशों को लक्ष्य-भाषा में रूपान्तरित किया जाता है। इस सन्दर्भ में भोलानाथ तिवारी का कहना है—'मूल सामग्री यदि सूक्ष्म भावों वाली है तो उसका भावानुवाद करते हैं।' भावानुवाद में सम्प्रेषणीयता सबसे महत्त्वपूर्ण होती है। इसमें अनुवादक का लक्ष्य स्रोत-भाषा में अभिव्यक्त भावों, विचारों एवं अर्थों का लक्ष्य-भाषा में अन्तरण करना होता है। संस्कृत साहित्य में लिखे गए कुछललित निबन्धों के हिन्दी अनुवाद बहुत ही सफल सिद्ध हुए हैं।

छायानुवाद—अनुवाद सिद्धान्त में छाया शब्द का प्रयोग अति प्राचीन है। इसमें मूल-पाठ की अर्थ छाया को ग्रहण कर अनुवाद किया जाता है। छायानुवाद में शब्दों, भावों तथा संकल्पनाओं के संकलित प्रभाव को लक्ष्य-भाषा में रूपान्तरित किया जाता है। संस्कृत में लिखे गए भास के नाटक 'स्वप्नवासवदत्तम्' एवं कालिदास के नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के हिन्दी अनुवाद इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

सारानुवाद—सारानुवाद का अर्थ होता है किसी भी विस्तृत विचार अथवा सामग्री का संक्षेप में अनुवाद प्रस्तुत करना। लम्बी रचनाओं, राजनैतिक भाषणों, प्रतिवेदनों आदि व्यावहारिक कार्य के अनुवाद के लिए सारानुवाद काफी उपयोगी सिद्ध होता है। इस प्रकार के अनुवाद में मूल-भाषा के कथ्यको सुरक्षित रखते हुए लक्ष्य-भाषा में उसका रूपान्तरण कर दिया जाता है। सारानुवाद का प्रयोग मुख्यतः दुभाषिये, समाचार पत्रों एवं दूरदर्शन के संवाददाता तथा संसद एवं विधान मण्डलों के रिकार्डकर्त्ता करते हैं।

व्याख्यानुवाद—व्याख्यानुवाद को भाष्यानुवाद भी कहते हैं। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक मूल सामग्री के साथ-साथ उसकी व्याख्या भी प्रस्तुत करता है। व्याख्यानुवाद में अनुवादक का व्यक्तित्त्व महत्त्वपूर्ण होता है। और कई जगहों में तो अनुवादक का व्यक्तित्त्व एवं विचार मूल रचना पर हावी हो जाता है। बाल गंगाधर तिलक द्वारा किया गया 'गीता' का अनुवाद इसका उत्कृष्ट उदाहरण है।

आशु अनुवाद—आशु अनुवाद को वार्तानुवाद भी कहते हैं। दो भिन्न भाषाओं, भावों एवं विचारों का तात्कालिक अनुवाद आशु अनुवाद कहलाता है।

आज जैसे–विभिन्न देश एक दूसरे के परस्पर समीप आ रहे हैं इस प्रकार के तात्कालिक अनुवाद का महत्त्व बढ़ रहा है। विभिन्न भाषा–भाषी प्रदेशों एवं देशों के बीच राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व के क्षेत्रों में आशु अनुवाद का सहारा लिया जाता है।

आदर्श अनुवाद–आदर्श अनुवाद को सटीक अनुवाद भी कहा जाता है। इसमें अनुवादक आचार्य की भूमिका निभाता है तथा स्रोत–भाषा की मूल सामग्री का अनुवाद अर्थ एवं अभिव्यक्ति सहित लक्ष्य–भाषा में निकटतम एवं स्वाभाविक समानार्थों द्वारा करता है। आदर्श अनुवाद में अनुवादक तटस्थर हता है तथा उसके भावों एवं विचारों की छाया अनूदित सामग्री पर नहीं पड़ती। रामचरितमानस, भगवद्गीता, कुरआन आदि धार्मिक ग्रन्थों के सटीक अनुवाद इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

रूपान्तरण–आधुनिक युग में रूपान्तरण का महत्त्व बढ़ रहा है। रूपान्तरण में स्रोत–भाषा की किसी रचना का अन्य विधा(साहित्य रूप) में रूपान्तरण कर दिया जाता है। संचार माध्यमों के बढ़ते हुए प्रभाव एवं उसकी लोकप्रियता को देखते हुए कविता, कहानी आदि साहित्य रूपों का नाट्यानुवाद विशेष रूप से प्रचलित हो रहा है। ऐसे अनुवादों में अनुवादक की अपनी रुचि एवं कृति की लोकप्रियता महत्त्वपूर्ण होती है। जैनेन्द्र, कमलेश्वर, अमृता प्रीतम, भीष्म साहनी आदि की कहानियों के रेडियो रूपान्तर प्रस्तुत किए जा चुके हैं। 'कामायनी' महाकाव्य का नाट्य रूपान्तर काफी चर्चित हुआ है।

अनुवाद की प्रकृति

'अनुवाद' एक कर्म के रूप में बेहद जटिल क्रिया है और एक विधा के रूप में बहुत संश्लिष्ट। यही कारण है कोई इसे 'अनुवाद कला' कहता है, कोई 'अनुवाद शिल्प', तो कोई 'अनुवाद विज्ञान'। अनुवाद कर्म के मर्म को समझने के लिए अनुवाद की प्रकृति और अनुवाद के प्रभेद को जानना–समझना बहुत जरूरी है। चर्चा की शुरुआत अनुवाद की प्रकृति से करते हैं।

अनुवाद सिद्धान्त एवं व्यवहार पर उपलब्ध पुस्तकों के शीर्षकों को देखने से मन में यह प्रश्न स्वत: उठता है कि आखिर अनुवाद की प्रकृति क्या है ? विद्वानों का एक वर्ग इसे 'कला' मानता आया है तो दूसरा वर्ग इसके विपरीत इसे 'विज्ञान' की श्रेणी में रखना पसन्द करता है। एक वर्ग ऐसा भी है, जो अनुवाद को कला या विज्ञान की श्रेणी से अलग 'शिल्प' की कोटि में रखता

है। ऐसे में अनुवाद की प्रकृति पर विचार करना जरूरी हो जाता है। पहले हम इसके विज्ञान पक्ष पर विचार करते हैं।

अनुवाद का वैज्ञानिक पक्ष

विज्ञान का साधारण अर्थ होता है 'विशिष्ट ज्ञान'। मगर आज 'विज्ञान' शब्द केवल 'विशिष्ट ज्ञान' तक सीमित न रह कर समूचे वैज्ञानिक व तकनीक चिन्तन, अनुशासनों, यथा- भौतिकी, रसायन, गणित, जीवविज्ञान, कम्प्यूटर आदि को अपने में समाहित कर चुका है जिसमें पूर्ण सार्वभौमिक सत्यता(Universal Truth) विद्यमान होती है। इसे सार्वभौमिक सत्यता इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह सामान्यत: स्थान, समय व परिवेश से प्रभावित नहीं होती। इसमें हमेशा 2+2=4 या H2+0=H20 होता है। परन्तु अनुवाद में ऐसी सार्वभौमिक सत्यता नहीं होती। हर अनुवादक से उसे एक नया रूप मिलता है। फिर अनुवाद में अनिवार्यत: अनुवादक के युग, समाज, भौगोलिक परिवेश आदि का प्रभाव भी मौजूद रहता है। अनुवाद को उस अर्थ में विज्ञान नहीं कहा जा सकता जिस अर्थ में भौतिकी, रसायन, गणित, जीवविज्ञान आदि को विज्ञान कहा जाता है। अनुवाद को विज्ञान मानने के पीछे कारण यह है कि अनुवाद की प्रकिया में विज्ञान की भाँति ही विश्लेषण, तुलना, निरीक्षण, अनुशीलन आदि सोपान होते हैं।

डार्टेस्ट ने अनुवाद को अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान (Applied Linguistics) की एक शाखा के रूप में परिभाषित करते हुए लिखा है कि अनुवाद, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की वह शाखा है जिसमें विशेषत: एक प्रतिमानित प्रतीक समूह से दूसरे प्रतिमानित प्रतीक समूह में अर्थ को अन्तरित करने की समस्या या तत्सम्बन्धी तथ्यों पर विचार-विमर्श किया जाता है –

अनुवाद को अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के अन्तर्गत शामिल करने का कारण यह है कि अनुवाद कर्म में स्रोत-भाषा से लक्ष्य-भाषा तक पहुँचने में हम जिन प्रक्रियाओं से होकर गुजरते हैं उसका वैज्ञानिक विश्लेषण (Scientific Analysis) किया जा सकता है। भाषा विज्ञानियों का मानना है कि अनुवाद क्रिया में पहले स्रोत-भाषा का विकोडीकरण (Decoding of Source Language) होता है जिसका बाद में लक्ष्य-भाषा में पुन:कोडीकरण (Encoding of Target Language) किया जाता है। अत: अनुवाद कर्म में विज्ञान का कुछ गुण अवश्य है, परन्तु इतने भर से इसको पूर्णत: वैज्ञानिक विधा नहीं माना जा सकता।

अनुवाद का कला पक्ष

कला एक प्रकार की सर्जना(Creation) है। शायद यही कारण है कि सृजनात्मक साहित्य को कला की श्रेणी में रखा जाता है। जब सृजनात्मक साहित्य का अनुवाद किया जाता है तो वह मात्र शाब्दिक प्रतिस्थापन नहीं होता बल्कि अनुवादक को मूल लेखक के उस महान् जीवन क्षण को फिर से जीना होता है जिससे अभिभूत होकर कवि या रचनाकार ने उस रचना को अंजाम दिया। इसलिए आग्निस गेर्गली ने कहा है–Translation must find and reproduce the impulse of the original work- हमेशा सहज समतुल्यता की खोज में अनुवादक को अक्सर पुनः सृजन करना पड़ता है, जिसमें अनुवादक के सौन्दर्यबोध एवं सृजनशील प्रतिभा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। शैली के शब्दों में कहें तो सृजनात्मक साहित्य का अनुवाद एक प्रकार से कलात्मक प्रक्रिया है। साहित्यिक अनुवाद का पुनर्सृजित रूप निम्नलिखित दो अनुवादों से स्पष्ट हो जाएगा –

उदाहरण-1– मूल–लूटि सकै तौ लूटियौ, राम नाम है लूटि। पीछैं ही पछिताहुगे, यह तन जैहै छूटि।। -कबीर

अनुवाद-अरे, यह विस्मृति का मरु देश एक विस्तृत है, जिसके बीच खिंची लघु जीवन-जल की रेख, मुसाफिर ले होठों को सींच। एक क्षण, जल्दी कर, ले देख बुझे नभ-दीप, किधर पर भोरकारवाँ मानव का कर कूचबढ़ चला शून्य उषा की ओर ! -खैयाम की मधुशाला हिन्दी अनुवाद–हरिवंशराय बच्चन।

उपर्युक्त दोनों अनुवाद मूल के आधार पर नई रचनाएँ बन गई हैं। ये अनुवाद नहीं बल्कि मूल का 'अनुसृजन' है। इसमें मूल लेखक की भाँति अनुवादक की सृजनशील प्रतिभा की स्पष्ट झलक देखने को मिल रही है। राजशेखर दास ने ठीक ही कहा है–'कविता का अनुवाद कितना ही सुन्दर क्यों न हो वह केवल मूल विचारों पर आधृत एक नई कविता ही हो सकती है।' यही कारण है कि साहित्यिक अनुवाद को एक कलात्मक प्रक्रिया माना गया है।

अनुवाद का शिल्प पक्ष

कई भाषाविज्ञानियों का मानना है कि अनुवाद-कार्य एक शिल्प-कर्म है। उनका तर्क है कि स्रोत-भाषा में व्यक्त सन्देश को लक्ष्य-भाषा में प्रस्तुत करने में अनुवादक के कौशल, उसके भाषा-चातुर्य की अहम् भूमिका होती है। यह शिल्प शब्द अंग्रेजी के Skill O Craft के निकट पड़ता है। न्यूमार्क ने अनुवाद

कर्म को 'शिल्प' स्वीकारा है–'अनुवाद एक शिल्प है, जिसमें एक भाषा में लिखित सन्देश को दूसरी भाषा में उसी सन्देश को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जाता है।' फिर अनुवाद में जितना अधिक अभ्यास किया जाएगा या प्रशिक्षण लिया जाएगा, अनुवाद उतना ही सुन्दर होता जाएगा। इसके अलावा कला और शिल्प का अभिन्न सम्बन्ध भी रहा है। जहाँ कला होगी वहाँ निश्चय ही शिल्प होगा और इसके विपरीत जहाँ शिल्प होगा वहाँ अनिवार्यत: कला होगी। अत: अनुवाद में अंशत: शिल्प का तत्त्व भी समाहित है।

अनुवाद में कला-विज्ञान-शिल्प के तीनों तत्त्व

नाइडा द्वारा प्रस्तावित अनुवाद प्रक्रिया में तीन सोपानों का उल्लेख है–

1. विश्लेषण,
2. अन्तरण,
3. पुनर्गठन।

दरअसल ये तीनों चरण क्रमानुसार विज्ञान, शिल्प और कला के ही तीनों सोपान हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि अनुवाद-प्रक्रिया का पहला चरण है मूल-पाठ का 'वैज्ञानिक विश्लेषण', दूसरा सोपान है मूल-पाठ के सन्देश व शिल्प का 'अन्तरण कौशल' तथा तीसरा सोपान है लक्ष्य-भाषा में उसका 'कलात्मक पुनर्ग्ाठन'। मगर अनुवाद में ये तीनों (कला, विज्ञान और कौशल) का अनुपात सदैव समान नहीं रहता। इन तीनों का अनुपात अनुद्य सामग्री की प्रकृति पर निर्भर रहता है। सृजनात्मक सामग्री में कला तत्त्व का प्राधान्य होने के कारण इसके अनुवादक में भी सृजनात्मक प्रतिभा का होना अपरिहार्य माना गया है। यही कारण है कि साहित्यिक अनुवादक अनुवाद को कलात्मक क्रिया मानते आए हैं। इसके विपरीत तकनीकी या वैज्ञानिक सामग्री के अनुवादक को अनुद्य विषय का सम्यक ज्ञान होना जरूरी है। अनुवादक का विषय ज्ञान जितना अधिक होगा अनुवाद उतना सटीक होगा। अन्यथा 'Woody Portion' का अनुवाद 'काष्ठमय अंश' हो जाने में देर नहीं लगती। इसके अलावा तकनीकी-वैज्ञानिक सामग्री के अनुवाद में हमें कुछ नियमों का अनुसरण भी करना पड़ता है। इसीलिए तकनीकी विषय के अनुवाद में अनुवादक का कौशल बखूबी काम करता है। इस सन्दर्भ में नाइडा का कथन है–'Translation is far more than a Science, it is also a Skill and in the ultimate analysis fully satisfactory translation is always an Art.' अर्थात् अनुवाद विज्ञान से बढ़कर है,

वह कौशल भी है और अन्तिम विश्लेषण में पूर्णत: सन्तोषजनक अनुवाद हमेशा एक कला रहा है। परन्तु डॉ. नगेन्द्र अनुवाद को एक स्वतंत्र विधा मानते हैं। उनका कहना है–'अनुवाद पारिभाषिक अर्थ में न विज्ञान है और न कला। इसके अतिरिक्त उसे निश्चित रूप से शिल्प भी कहना तर्कसंगत नहीं होगा। वास्तविक स्थिति यह है कि आधार विषय के अनुसार अनुवाद में इन तीनों के ही तत्त्वों का यथानुपात समावेश रहता है। साहित्यिक अनुवाद विशेष रूप से काव्यानुवाद का अन्तर्भाव जहाँ कला की परिधि में ही हो जाता है, वहाँ वैज्ञानिक तथा शास्त्रीय अनुवाद में विज्ञान के आधार तत्त्वों का प्राधान्य रहता है जबकि शिल्प का प्रयोग प्राय: सर्वत्र ही मिलता है। इस प्रकार अनुवाद एक स्वतंत्र विधा है।' निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अनुवाद में कला, विज्ञान और शिल्प तीनों विधाओं के तत्त्व अंशत: विद्यमान हैं। दूसरे शब्दों में, अनुवाद के विश्लेषण में वैज्ञानिकता है, उसकी सिद्धि में कलात्मकता जिसके लिए आवश्यकता होती है शिल्पगत कौशल की।

3

अनुवाद की महत्ता एवं आवश्यकता

उत्तर-आधुनिक युग में अनुवाद की महत्ता व उपादेयता को विश्वभर में स्वीकारा जा चुका है। वैदिक युग के 'पुनः कथन' से लेकर आज के 'ट्रांसलेशन' तक आते-आते अनुवाद अपने स्वरूप और अर्थ में बदलाव लाने के साथ-साथ अपने बहुमुखी व बहुआयामी प्रयोजन को सिद्ध कर चुका है। प्राचीन काल में 'स्वांतः सुखाय' माना जाने वाला अनुवाद कर्म आज संगठित व्यवसाय का मुख्य आधार बन गया है। दूसरे शब्दों में कहें तो अनुवाद प्राचीन काल की व्यक्ति परिधि से निकलकर आधुनिक युग की समष्टि परिधि में समा गया है। आज विश्वभर में अनुवाद की आवश्यकता जीवन के हर क्षेत्रा में किसी-न-किसी रूप में अवश्य महसूस की जा रही है। और इस तरह अनुवाद आज के जीवन की अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

बीसवीं शताब्दी के अवसान और इक्कीसवीं सदी के स्वागत के बीच आज जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहाँ पर हम चिन्तन और व्यवहार के स्तर पर अनुवाद के आग्रही न हों। भारत में अनुवाद की परम्परा पुरानी है किन्तु अनुवाद को जो महत्त्व 21वीं सदी के उत्तरार्द्ध में प्राप्त हुआ वह पहले नहीं हुआ था। सन् 1947 में भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात् देश की आर्थिक

एवं राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन आया। विश्व के अन्य देशों के साथ भारत के आर्थिक एवं राजनीतिक समीकरण बदले। राजनैतिक और आर्थिक कारणों के साथ विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी का विकास भी इस युग की प्रमुख घटना है जिसके फलस्वरूप विभिन्न भाषा-भाषी समुदायों में सम्पर्क की स्थिति उभर कर सामने आयी। आज विश्व के अधिकांश बड़े देशों में एक प्रमुख भाषा के साथ-साथ अन्य कई भाषाएँ भी गौण भाषा के रूप में समान्तर चल रही हैं। अतएव एक ही भौगोलिक सीमा की राजनैतिक, प्रशासनिक इकाई के अन्तर्गत भाषायी बहुसंख्यक भी रहते हैं और भाषायी अल्पसंख्यक भी। अत: विभिन्न भाषाभाषियों के बीच उन्हीं की अपनी भाषा में सम्पर्क स्थापित कर लोकतंत्र में सबकी हिस्सेदारी सुनिश्चित की जा सकती है। वस्तुत: अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न देशों के बीच राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बढ़ती हुई आदान-प्रदान की अनिवार्यता ने अनुवाद एवं अनुवाद कार्य के महत्त्व को बढ़ा दिया है।

हमारे देश में अनुवाद का महत्त्व प्राचीन काल से ही स्वीकृत है। प्रो. जी. गोपीनाथन ने ठीक ही लक्ष्य किया था कि अनुवाद आज व्यक्ति की सामाजिक आवश्यकता बन गया है। आज के सिमटते हुए संसार में सम्प्रेषण माध्यम के रूप में अनुवाद भी अपना निश्चित योगदान दे रहा है। भारत जैसे बहुभाषी देश में अनुवाद की उपादेयता स्वयं सिद्ध है। भारत के विभिन्न प्रदेशों के साहित्य में निहित मूलभूत एकता के स्वरूप को निखारने के लिए अनुवाद ही एक मात्र अचूक साधन है। इस तरह अनुवाद द्वारा मानव की एकता को रोकने वाली भौगोलिक और भाषायी दीवारों को ढहाकर विश्वमैत्री को और सुदृढ़ बना सकते हैं।

21वीं सदी में अनुवाद की महत्ता

21वीं शताब्दी के मौजूदा दौर में अनुवाद एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है। भारत जैसे–बहुभाषा-भाषी देश के जन-समुदायों के बीच अंत: संप्रेषण के संवाहक के रूप में अनुवाद का बहुआयामी प्रयोजन सर्वविदित है। यदि आज के इस युग को 'अनुवाद का युग' कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति न होगी, क्योंकि आज जीवन के हर क्षेत्र में अनुवाद की उपादेयता को सहज ही सिद्ध किया जा सकता है। धर्म-दर्शन, साहित्य-शिक्षा, विज्ञान-तकनीकी, वाणिज्य व्यवसाय, राजनीति-कूटनीति, आदि सभी क्षेत्रों से अनुवाद का अभिन्न संबंध

रहा है। अत: चिंतन और व्यवहार के प्रत्येक स्तर पर आज मनुष्य अनुवाद पर आश्रित है। इतना ही नहीं विश्व-संस्कृति के विकास में भी अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। विश्व के विभिन्न प्रदेशों की जनता के बीच अंत:संप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में, उनके बीच भावात्मक एकता को कायम रखने में, देश-विदेश के नवीनज्ञान-विज्ञान, शोध-चिंतन को दुनिया के हर कोने तक ही नहीं, आम जनता तक भी पहुँचाने में तथा दो भिन्न संस्कृतियों को नजदीक लाकर एक सूत्र में पिरोने में अनुवाद की महती भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। प्रो. जीगोपीनाथन के शब्दों में, 'अनुवाद मानव की मूलभूत एकता की व्यक्ति-चेतना एवं विश्व-चेतना के अद्वैत का प्रत्यक्ष प्रमाण है'। अत: मौजूदा शताब्दी में अनुवाद ने अपनी संकुचित साहित्यिक परिधि को लाँघकर प्रशासन, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, तकनीकी, चिकित्सा, कला, संस्कृति, अनुसंधान, पत्रकारिता, जनसंचार, दूरस्थ शिक्षा, प्रतिरक्षा, विधि, व्यवसाय आदि हर क्षेत्र में प्रवेश कर यह साबित कर दिया है कि अनुवाद समकालीन जीवन की अनिवार्यता है।

हिन्दी अब बाजार-तंत्र की, व्यवसाय-व्यापार की, संचार-तंत्र की तथा शासकीय व्यवस्था की भाषा बन रही है। हिन्दी भाषा में और हिन्दी भाषा से अनुवाद की परम्परा अब सुदीर्घ होने के साथ-साथ पुख्ता और उल्लेखनीय होती जा रही है। लोठार लुत्से की बात पर गोर करें तो हमें हिन्दी, मराठी, बांग्ला, तमिल, तेलुगू या कन्नड़ लेखकों को उनकी भाषा के नहीं, भारतीय लेखक के रूप में देखना चाहिए। तभी भारतीय भाषाएँ भारत में और फिर विश्व में प्रतिष्ठा प्राप्त करेंगी। ओड़िआ का लेखक सारे ओड़िशा में प्रतिष्ठा प्राप्त कर ले तो यह कोई छोटी बात नहीं होगी, लेकिन ओड़िआ का लेखक पूरे भारत में प्रतिष्ठा हासिल करे तो यह उससे भी बड़ी बात होगी और उसके लिए चुनौती भी। और जो लेखक इस चुनौती को स्वीकार कर उसमें खरे उतरते हैं, वे सचमुच बड़े, बहुत बड़े लेखक सिद्ध होते हैं। इसके लिए जरूरी है कि भारतीय भाषाओं में अनुवाद की प्रक्रिया को तेज किया जाए। अनुवाद के बिना हमारा कोई भी लेखक यूरोप-अमेरिका तो दूर अपने ही देश में भारतीय लेखक के रूप में प्रतिष्ठित नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए फकीर मोहन सेनापति, प्रतिभा राय, सीताकान्त महापात्र आदि अगर हिन्दी में अनूदित न होते तो क्या भारतीय लेखक के रूप में इतने बड़े पैमाने पर देश और दुनिया में स्वीकार्य हो सकते थे ? निश्चय ही नहीं। अनुवाद की ताकत पाकर ही कोई बड़ा लेखक और भी बड़ा सिद्ध होता और अपनी सामर्थ्य को दिग-दिगंत तक फैला पाता है। अनुवाद के

बगैर वह, वह सिद्ध नहीं हो सकता, जो दरअसल वह होता है और यह काम अनुवादक ही कर सकता है। ऐसे में अनुवाद की महत्ता को जन-जन तक पहुँचाना और अनुवादकों को सम्मानजनक स्थान दिलाना जरूरी हो गया है ताकि भारतीय साहित्य और मनीषा को दूसरों तक पहुँचा कर राष्ट्रीय सेतु का निर्माण किया जा सके।

अनुवाद आज के व्यावसायिक युग की अपेक्षा ही नहीं अनिवार्यता भी बन गया है। यह एक सेतु है, सांस्कृतिक सेतु। सांस्कृतिक एकता, परस्पर आदान-प्रदान तथा 'विश्वकुटुम्बकम्' के स्वप्न को साकार करने की दृष्टि से अनुवाद की भूमिका उल्लेखनीय रही है। इस प्रकार वर्तमान युग में अनुवाद की महत्ता और उपयोगिता केवाल भाषा और साहित्य तक ही सीमित नहीं है, वह हमारी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और राष्ट्रीय संहति और ऐक्य का माध्यम है, जो भाषायी सीमाओं को पार करके भारतीय चिन्तन और साहित्य की सर्जनात्मक चेतना की समरूपता के साथ-साथ, वर्तमान तकनीकी और वैज्ञानिक युग की अपेक्षाओं की पूर्तिकर हमारे ज्ञान-विज्ञान के आयामों को देश-विदेश में संपृक्त करती है। दूसरे शब्दों में, अनुवाद विश्व-संस्कृति, विश्व-बंधुत्व, एकता और समरसता स्थापित करने का एक ऐसा सेतु है जिसके माध्यम से विश्व ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में क्षेत्रीयतावाद के संकुचित एवं सीमित दायरे से बाहर निकल कर मानवीय एवं भावात्मक एकता के केन्द्रबिन्दु तक पहुँच सकता है और यही अनुवाद की आवश्यकता और उपयोगिता का सशस्त एवं प्रत्यक्ष प्रमाण है।

आज जब सारा विश्व सामाजिक पुनर्व्यवस्था पर एक नये सिरे से विचार कर रहा है और व्यक्ति तथा समाज को एक नव्य स्वतंत्र दृष्टि मिली है वहीं हम भी व्यक्ति और देश को विश्व के परिप्रेक्ष्य में देखने-समझने का प्रयत्न कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में अनुवाद का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। किसी समाज और देश की अभिव्यक्ति भाषा की सीमा के कारण एक क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रह जाए और दूसरों तक न पहुँच पाए तो विश्व स्तर पर एक नव्य सामाजिक पुनर्व्यवस्था की बात सार्थक कैसे हो सकती है!

अनुवाद की आवश्यकता

बीसवीं शताब्दी में देशों के बीच की दूरियाँ कम होने के परिणामस्वरूप विभिन्न वैचारिक धरातलों और आर्थिक, औद्योगिक स्तरों पर पारस्परिक भाषिक विनिमय बढ़ा है और इस विनिमय के साथ-साथ अनुवाद का प्रयोग और अधिक

किया जाने लगा है। आज के वैज्ञानिक युग में अनुवाद बहुत महत्त्वपूर्ण हो गया है। यदि हमें दूसरे देशों के साथ कंधे-से कंधा मिलाकर चलना है तो हमें उनके यहाँ विज्ञान के क्षेत्र में, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में हुई प्रगति की जानकारी होनी चाहिए और यह जानकारी हमें अनुवाद के माध्यम से मिलती है। विश्व की कुछ श्रेष्ठ कृतियों को अनुवाद के कारण ही सम्मान मिला। रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'गीतांजलि' को नोबेल पुरस्कार उनके द्वारा किए गए अनुवाद कार्य पर ही मिला। शेक्सपियर, बर्नाड शा, अरस्तू, मार्क्स, गोर्की आदि जैसे–विश्व के महान् साहित्यकारों एवं दर्शनशास्त्रियों को हम अनुवाद के माध्यम से ही जानते हैं। बहुत पहले हमारे राष्ट्रक विमैथिलीशरण गुप्त ने 'अनुवाद की आवश्यकता' पर बल देते हुए स्पष्ट कर दिया था-

''सज्जनो, भगीरथ प्रयत्न फलें आपके
ले जा सकते हैं यहाँ गंगा से प्रवाह को।
आप अनुवाद की ही योजनाएँ कर दें
तो कह सकें हम सगर्व विश्व-भर के
वांड्मय में जो है वह चुन लिया हमने
और जो हमारा अपना है, अतिरिक्त है।''

आधुनिक युग में जैसे-जैसे–स्थान और समय की दूरियाँ कम होती गई वैसे-वैसे द्विभाषिकता की स्थितियों और मात्रा में वृद्धि हुई और इसके साथ-साथ अनुवाद में भी। अन्य भाषा-शिक्षण में अनुवाद विधि का प्रयोग न केवल पश्चिमी देशों में वरन् पूर्वी देशों में भी निरन्तर किया जाता रहा है। हम यहाँ जीवन और समाज के कुछ प्रमुख क्षेत्रों में अनुवाद की आवश्यकता की चर्चा करेंगे।

राष्ट्रीय एकता में अनुवाद की आवश्यकता

भारत जैसे–विशाल राष्ट्र की एकता के प्रसंग में अनुवाद की आवश्यकता असंदिग्ध है। भारत की भौगोलिक सीमाएँ न केवल कश्मीर से कन्याकुमारी तक बिखरी हुई हैं बल्कि इस विशाल भूखण्ड में विभिन्न विश्वासों एवं सम्प्रदायों के लोग रहते हैं जिनकी भाषाएँ एंव बोलियाँ एक दूसरे से भिन्न हैं। भारत की अनेकता में एकता इन्हीं अर्थों में है कि विभिन्न भाषाओं, विभिन्न जातियों, विभिन्न सम्प्रदायों एवं विभिन्न विश्वासों के देश में भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता कहीं भी बाधित नहीं होती। एक समय में महाराष्ट्र का जो व्यक्ति सोचता है वही

हिमाचल का निवासी भी चिन्तन करता है। भारत के हजारों वर्षों के अद्यतन इतिहास चिन्तन ने इस धारणा को पुष्ट किया है कि मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन से लेकर आज के प्रगतिशील आन्दोलन तक भारतीय साहित्य की दिशा एक रही है। यह बात अनुवाद के द्वारा ही सम्भव हो सकी कि जिस समय गोस्वामी तुलसीदास राम के चरित्र पर महाकाव्य लिख रहे थे, हिन्दी के समानान्तर ओड़िआ में बलराम, बांग्ला में कृत्तिवास, तेलुगु में पोतना, तमिल में कम्बन तथा हरियाणवी में अहमदबख्श अपने-अपने साहित्य में राम के चरित्र को नया रूप दे रहे थे। स्वतंत्रता आन्दोलन में जिस साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के विरोध की चिंगारी सुलगी थी उसका उत्कर्ष छायावादी दौर की विभिन्न भारतीय भाषाओं की कविता में मिलता है।

संस्कृति के विकास में अनुवाद की आवश्यकता

दुनिया के जिन देशों में विभिन्न जातियों एवं संस्कृतियों का मिलन हुआ है वहाँ सामासिक संस्कृति के निर्माण में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। अनुवाद की परम्परा के अध्ययन से पता चलता है कि ईसा के तीन सौ वर्ष पूर्व रोमन लोगों का ग्रीक के लोगों से सम्पर्क हुआ जिसके फलस्वरूप ग्रीक से लैटिन में अनुवाद हुए। इसी प्रकार ग्यारहवीं, बारहवीं शताब्दी में स्पेन के लोग इस्लाम के सम्पर्क में आए और बड़े पैमाने पर योरपीय भाषाओं में अरबी का अनुवाद हुआ। भारत में भी विभिन्न जातियों एवं विश्वासों के लोग आए। आज की भारतीय संस्कृति जिसे हम सामासिक संस्कृति कहते हैं उसके निर्माण में हजारों वर्षों के विभिन्न धर्मों, मतों एवं विश्वासों की साधना छिपी हुई है। इन सभी मतों एवं विश्वासों को आत्मसातकर जिस भारतीय संस्कृति का निर्माण हुआ है उसके पीछे अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका असंदिग्ध है।

साहित्य के अध्ययन में अनुवाद की आवश्यकता

साहित्य के अध्ययन में अनुवाद का महत्त्व आज व्यापक हो गया है। साहित्य यदि जीवन और समाज के यथार्थ को प्रस्तुत करता है तो विभिन्न भाषाओं के साहित्य के सामूहिक अध्ययन से किसी भी समाज, देश या विश्व की चिन्तन-धारा एवं संस्कृति की जानकारी मिलती है। अनुवाद का महत्त्व निम्नलिखित साहित्यों के अध्ययन में सहायक है-

भारतीय साहित्य का अध्ययन।

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य का अध्ययन।

तुलनात्मक साहित्य का अध्ययन।

भारतीय साहित्य के अध्ययन से यह पता चलता है कि विभिन्न साहित्यक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक आन्दोलनों में हिन्दी एवं हिन्दीतर भाषा के साहित्यकारों का स्वर प्रायः एक जैसा रहा है। मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन, स्वतन्त्रता आन्दोलन तथा नक्सलबाड़ी आन्दोलनों को प्रायः सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य में अभिव्यक्ति मिली है।

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य के अनुवाद से ही यह तथ्य प्रकाश में आया कि दुनिया के विभिन्न भाषाओं में लिखे गए साहित्य में ज्ञान का विपुल भण्डार छिपा हुआ है। भारत में अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य का अनुवाद तो भारत में सूफियों के दार्शनिक सिद्धान्तों के प्रचलन के साथ ही शुरू हो गया थाय किन्तु इसे व्यवस्थित स्वरूप आधुनिक युग में ही प्राप्त हुआ। शेक्सपियर, डी.एच. लॉरेंस, मोपासाँ तथा सार्त्र जैसे–चिन्तकों की रचनाओं के अनुवाद से भारतीयजन मानस का साक्षात्कार हुआ एवं कालिदास, रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं प्रेमचन्द की रचनाओं से विश्व प्रभावित हुआ।

दुनिया के विभिन्न भाषाओं के अनुवाद द्वारा ही तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में सहायता मिलती है। तुलनात्मक साहित्य द्वारा इस बात का पता लगाया जाता है कि देश, काल और समय की भिन्नता के बावजूद विभिन्न भाषाओं के रचनाकारों के साहित्य में साम्य और वैषम्य क्यों है ? अनुवाद के द्वारा ही जो तुलनीय है वह तुलनात्मक अध्ययन का विषय बनता है। प्रेमचन्द और गोर्की, निराला और इलियट तथा राजकमल चौधरी एवं मोपासाँ के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन अनुवाद के फलस्वरूप ही सम्भव हो सका।

व्यवसाय के रूप में अनुवाद की आवश्यकता

वर्तमान युग में अनुवाद ज्ञान की ऐसी शाखा के रूप में विकसित हुअ ाहै जहाँ इज्जत, शोहरत एवं पैसा तीनों हैं। आज अनुवादक दूसरे दर्जे का साहित्यकार नहीं बल्कि उसकी अपनी मौलिक पहचान है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तेजी से हुए विकास के साथ भारतीय परिदृश्य में कृषि, उद्योग, चिकित्सा, अभियान्त्रि की और व्यापार के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। इन क्षेत्रों में प्रयुक्त तकनीकी शब्दावली का भारतीयकरण कर इन्हें लोकोन्मुख करने में

अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध रोजगार के क्षेत्र में अनुवाद को महत्त्वपूर्ण पद पर आसीन करता है। संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिए जाने के पश्चात् केन्द्र सरकार के कार्यालयों, सार्वजनिक उपक्रमों, संस्थानों और प्रतिष्ठानों में राजभाषा प्रभाग की स्थापना हुई जहाँ अनुवाद कार्य में प्रशिक्षित हिन्दी अनुवादक एवं हिन्दी अधिकारी कार्य करते हैं। आज रोजगारके क्षेत्र में अनुवाद सबसे आगे है। प्रति सप्ताह अनुवाद से सम्बन्धित जितने पद यहाँ विज्ञापित होते हैं अन्य किसी भी क्षेत्र में नहीं।

नव्यतम ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों में अनुवाद की आवश्यकता

औद्योगीकरण एवं जनसंचार के माध्यमों में हुए अत्याधुनिक विकास ने विश्व की दिशा ही बदल दी है। औद्योगिक उत्पादन, वितरण तथा आर्थिक नियन्त्राण की विभिन्न प्रणालियों पर पूरे विश्व में अनुसंधान हो रहा है। नई खोज और नई तकनीक का विकास कर पूरे विश्व में औद्योगिक क्रान्ति मची हुई है। इस क्षेत्र में होने वाले अद्यतन विकास को विभिन्न भाषा-भाषी राष्ट्रों तक पहुँचाने में भाषा एवं अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

वैज्ञानिक अनुसंधानों को तीव्र गति से पूरे विश्व में पहुँचा देने का श्रेय नव्यतम विकसित जनसंचार के माध्यमों को है। आज विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, कृषि तथा व्यवसाय आदि सभी क्षेत्रों में जो कुछ भी नया होता ह ै वह कुछ ही पलों में टेलीफोन, टेलेक्स तथा फैक्स जैसी तकनीकों के माध्यम से पूरे विश्व में प्रचारित एवं प्रसारित हो जाता है। आज जनसंचार के माध्यमों में होने वाले विकास ने हिन्दी भाषा के प्रयुक्ति-क्षेत्रों को विस्तृत कर दिया है। विज्ञान, व्यवसाय, खेलकूद एवं विज्ञापनों की अपनी अलग शब्दावली हैं। संचार माध्यमों में गतिशीलता बढ़ाने का कार्य अनुवाद द्वारा ही सम्भव हो सका है तथा गाँव से लेकर महानगरों तक जो भी अद्यतन सूचनाएँ हैं वे अनुवाद के माध्यम से एक साथ सबों तक पहुँच रही हैं। कहने कीआवश्यकता नहीं कि अनुवाद ने आज पूरे विश्व को एक सूत्र में पिरो दिया है।

4

अनुवाद की प्रक्रिया, स्वरूप एवं सीमाएँ

अनुवाद के स्वरूप, अनुवाद-प्रक्रिया एवं अनुवाद की सीमाओं के बारे में की चर्चा की जा रही है। सबसे महत्त्वपूर्ण है- 'अनुवाद की प्रक्रिया'। अनुवाद के व्यावहारिक पहलु को जानने के लिए अनुवाद-प्रक्रिया को समझना जरूरी है। इसलिए प्रस्तुत अध्याय में नाइडा, न्यूमार्क और बाथगेट- तीनों विद्वानों द्वारा प्रतिपादित अनुवाद-प्रक्रिया को सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है।

अनुवाद के स्वरूप

अनुवाद के स्वरूप के सन्दर्भ में विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वज्जन अनुवाद की प्रकृति को ही अनुवाद का स्वरूप मानते हैं, जब कि कुछ भाषा विज्ञानी अनुवाद के प्रकार को ही उसके स्वरूप के अन्तर्गत स्वीकारते हैं। इस सम्बन्ध में डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव का मत ग्रहणीय है। उन्होंने अनुवाद के स्वरूप को सीमित और व्यापक के आधार पर दो वर्गों में बाँटा है। इसी आधार पर अनुवाद के सीमित स्वरूप और व्यापक स्वरूप की चर्चा की जा रही है।

अनुवाद का सीमित स्वरूप

अनुवाद के स्वरूप को दो संदर्भों में बाँटा जा सकता है–

1. अनुवाद का सीमित स्वरूप तथा
2. अनुवाद का व्यापक स्वरूप

अनुवाद की साधारण परिभाषा के अंतर्गत पूर्व में कहा गया है कि अनुवाद में एक भाषा के निहित अर्थ को दूसरी भाषा में परिवर्तित किया जाता है और यही अनुवाद का सीमित स्वरूप है। सीमित स्वरूप (भाषांतरण संदर्भ)में अनुवाद को दो भाषाओं के मध्य होने वाला 'अर्थ' का अंतरण माना जाता है। इस सीमित स्वरूप में अनुवाद के दो आयाम होते हैं-

पाठधर्मी आयाम तथा प्रभावधर्मी आयाम

पाठधर्मी आयाम के अंतर्गत अनुवाद में स्रोत-भाषा पाठ केंद्र में रहता है, जो तकनीकी एवं सूचना प्रधान सामग्रियों पर लागू होता है। जबकि प्रभाव धर्मी अनुवाद में स्रोत-भाषा पाठ की संरचना तथा बुनावट की अपेक्षा उस प्रभाव को पकड़ने की कोशिश की जाती है, जो स्रोत-भाषा के पाठकों पर पड़ा है। इस प्रकार का अनुवाद सृजनात्मक साहित्य और विशेषकर कविता के अनुवाद में लागू होता है।

अनुवाद का व्यापक स्वरूप

अनुवाद के व्यापक स्वरूप (प्रतीकांतरण संदर्भ) में अनुवाद को दो भिन्न प्रतीक व्यवस्थाओं के मध्य होने वाला 'अर्थ' का अंतरण माना जाता है। ये प्रतीकांतरण तीन वर्गों में बाँटे गए हैं-

अंत:भाषिक अनुवाद (अन्वयांतर),

अंतर भाषिक (भाषांतर),

अंतर प्रतीकात्मक अनुवाद (प्रतीकांतर)

'अंत:भाषिक' का अर्थ है एक ही भाषा के अंतर्गत। अर्थात् अंत:भाषिक अनुवाद में हम एक भाषा के दो भिन्न प्रतीकों के मध्य अनुवाद करते हैं। उदाहरणार्थ, हिन्दी की किसी कविता का अनुवाद हिन्दी गद्य में करते हैं या हिन्दी की किसी कहानी को हिन्दी कविता में बदलते हैं तो उसे अंत:भाषिक अनुवाद कहा जाएगा। इसके विपरीत अंतर भाषिक अनुवाद में हम दो भिन्न-भिन्न भाषाओं के भिन्न-भिन्न प्रतीकों के बीच अनुवाद करते हैं।

अंतर भाषिक अनुवाद में अनुवाद को न केवल स्रोत-भाषा में लक्ष्य-भाषा की संरचनाओं, उनकी प्रकृतियों से परिचित होना होता है, वरन् उनकी

सामाजिक-सांस्कृतिक परम्पराओं, धार्मिक विश्वासों, मान्यताओं आदि की सम्यक् जानकारी भी उसके लिए बहुत जरूरी है। अन्यथा वह अनुवाद के साथ न्याय नहीं कर पाएगा। अंतर प्रतीकात्मक अनुवाद में किसी भाषा की प्रतीक व्यवस्था से किसी अन्य भाषेत्तर प्रतीक व्यवस्था में अनुवाद किया जाता है।

अंतर प्रतीकात्मक अनुवाद में प्रतीक-1 का संबंध तो भाषा से ही होता है, जबकि प्रतीक-2 का संबंध किसी दृश्य माध्यम से होता है। उदाहरण के लिए अमृता प्रीतम के 'पिंजर' उपन्यास को हिन्दी फिल्म 'पिंजर' में बदला जाना अंतर-प्रतीकात्मक अनुवाद है।

अनुवाद-प्रक्रिया

'प्रक्रिया' शब्द अंग्रेजी के 'Process' का पर्याय है, जो 'प्रक्रिया' के संयोग से बनकर 'विशिष्ट क्रिया' का बोध कराता है। किसी कार्य की प्रक्रिया या विशिष्ट क्रिया को जानने का अर्थ होता है, कार्य को कैसे सम्पादित किया जाए। इस अर्थ में अनुवाद कर्म में हम स्रोत-भाषा से लक्ष्य-भाषा तक पहुँचने के लिए जिन क्रमबद्ध सोपानों से होकर गुजरते हैं, उन सुनिश्चित व सोद्देश्य सोपानों को 'अनुवाद-प्रक्रिया' कहा जाता है। अनुवाद प्रक्रिया की चर्चा की शुरुआत ख्यात भाषाविज्ञानी नो अमचॉमस्की (Noam Chomsky) के निष्पादक व्याकरण (Generative Grammar) से करते हैं।

नोअम चॉमस्की (Noam Chomsky) की गहन संरचना एवं तल संरचना

चॉमस्की अपने निष्पादक व्याकरण द्वारा वाक्य के संरचनात्मक विवरण को निर्धारित करते हैं जिसे आरेख के द्वारा समझा जा सकता है –

अनुवाद–स्वरूप, प्रक्रिया एवं सीमाएँ

उनके अनुसार संरचना की दृष्टि से भाषा के दो तत्त्व होते हैं–

1. तल संरचना और
2. गहन संरचना।

तल संरचना से तात्पर्य है भाषा की बाहरी स्वन प्रक्रिया तथा गहन संरचना से आशय है तल संरचना में निहित अर्थ तत्त्व। चॉमस्की गहन संरचना को एक नैसर्गिक अवयव मानते हुए भाषाओं के बीच अन्तर को केवल तल संरचना का अन्तर मानते हैं। चॉमस्की ने यहाँ जो आधार से गहन संरचना और पुनः गहन

संरचना से तल संरचना की दोहरी गतिविधि की विवेचना की है, वह अनुवाद-प्रक्रिया में स्रोत-भाषा के विकोडीकरण तथा लक्ष्य-भाषा में उसके पुनः कोडीकरण को समझने में सहायक है।

नाइडा (Nida) द्वारा प्रतिस्थापित अनुवाद-प्रक्रिया

नाइडा ने चॉमस्की के 'गहन संरचना' एवं 'तल संरचना' के आधार पर अनुवाद-प्रक्रिया में निम्नलिखित तीन सोपानों का उल्लेख किया है –

विश्लेषण (Analysis)

अन्तरण (Transference)

पुनर्गठन (Restructuring)

नाइडा द्वारा प्रतिस्थापित अनुवाद-प्रक्रिया को निम्नलिखित आरेख के माध्यम से भलीभाँति समझा जा सकता है –

नाइडा द्वारा प्रतिस्थापित अनुवाद-प्रक्रिया का मूल आधार भाषा विश्लेषण के सिद्धान्त है। उनके मतानुसार पहले सोपान में अनुवादक मूल-पाठ या स्रोत-भाषा का विश्लेषण करता है। नाइडा मूल-पाठ के विश्लेषण के लिए एक सुनिश्चित भाषा सिद्धान्त की बात करते हैं। यह विश्लेषण भाषा के दोनों स्तर, बाह्य संरचना पक्ष तथा आभ्यन्तर अर्थपक्ष पर होता है, जिसमें मूल-पाठ का शाब्दिक अनुवाद तैयार हो जाता है। विश्लेषण से प्राप्त अर्थबोध का लक्ष्य-भाषा में अन्तरण अनुवाद का दूसरा सोपान होता है। यह अन्तरण सोपान में स्रोत-भाषा के सन्देश को लक्ष्य-भाषा की भाषिक अभिव्यक्ति में पुनर्विन्यस्त किया जाता है। तीसरे और अन्तिम सोपान में लक्ष्य-भाषा की अभिव्यक्ति प्रणाली और कथन रीति के अनुसार उसका निर्माण होता है। नाइडा के मतानुसार अनुवादक को 'स्रोत-भाषा पाठ में निहित अर्थ या सन्देश के विश्लेषण तथा लक्ष्य-भाषा में उसके पुनर्गठन' दो ध्रुवों के मध्य निरन्तर सम्यक् और सटीक तालमेल बिठाना होता है।

न्यूमार्क (New mark) द्वारा प्रतिस्थापित अनुवाद प्रक्रिया

न्यूमार्क द्वारा प्रतिस्थापित अनुवाद-प्रक्रिया नाइडा के सोपानों से मिलती जुलती अवश्य है, किन्क वह नाइडा के चिन्तन से अधिक व्यापक है।

पहला स्तर है–अन्तरक्रमिक अनुवाद, जिसे खंडित रेखा द्वारा जोड़ा गया है, क्योंकि अन्तरक्रमिक अनुवाद शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद होता है, जो

कि भ्रामक है।- दूसरा स्तर है–मूल पाठ का अर्थ बोधन और लक्ष्य-भाषा में उस अर्थ का अभिव्यक्तिकरण। न्यूमार्क द्वारा प्रस्तावित बोधन की प्रक्रिया, नाइडा के विश्लेषण की प्रक्रिया से इस दृष्टि से भिन्न है कि इसमें विश्लेषण से प्राप्त अर्थ के साथ-साथ अनुवादक द्वारा मूल-पाठ की व्याख्या का भाव भी सम्मिलित है।

बाथगेट (Bathgate) का चिन्तन

अनुवाद-प्रक्रिया के सम्बन्ध मे बाथगेट का चिन्तन बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। बाथगेट ने अनुवाद-प्रक्रिया में जिन सोपानों की परिकल्पना की है, वह सुचिन्तित, आधुनिक एवं वैज्ञानिक हैं। ये सोपान हैं–

1. स्रोत-भाषा,
2. समन्वयन,
3. विश्लेषण,
4. समझबोधन,
5. अभिव्यक्तिकरण,
6. स्रोत-भाषा,
7. पारिभाषिक अभिव्यक्ति,
8. पुनर्गठन,
9. पुनरीक्षण,
10. पर्यालोचन,
11. लक्ष्य-भाषा।

कहने की जरूरत नहीं कि ये सभी सोपान नाइडा और न्यूमार्क द्वारा प्रस्तावित सोपानों से अधिक संगत और वैज्ञानिक हैं। परन्तु इसमें दिया गया पहला सोपान 'समन्वयन' और अन्तिम सोपान 'पर्यालोचन', दोनों को अवान्तर परिकल्पना कहा जा सकता है। क्योंकि न तो स्रोत-भाषा पाठ के समन्वयन की जरूरत है न ही पुनरीक्षण के बाद पर्यालोचन की आवश्यकता। 'पुनरीक्षण' ही एक प्रकार का 'पर्यालोचन' है।

अनुवाद-प्रक्रिया में नाइडा, न्यूमार्क और बाथगेट

अनुवाद-प्रक्रिया एक आन्तरिक प्रक्रिया है, जो अनुवादक के मन-मस्तिष्क में घटित होती है। इसे शब्दबद्ध करने के पीछे यह बतलाना है कि अनुवाद कर्म

में सामान्यत: अनुवादक को कौन-कौन से चरण से होकर गुजरना होता है। साधारणत: अनुवाद कर्म में निम्नलिखित पाँच सोपान होते हैं–

1. स्रोत-भाषा
2. विश्लेषण
3. बोधन
4. भाषिक अन्तरण
5. पुनर्गठन
6. पुनरीक्षण
7. लक्ष्य-भाषा।

उपर्युक्त प्रक्रिया में न्यूमार्क, नाइडा एवं बाथगेट द्वारा प्रस्तावित सोपानों को शामिल किया गया है। अब अनुवाद के इन सोपानों के व्यावहारिक प्रयोग के लिए 'होरी की गाय अभी नहीं आई है' का अंग्रेजी अनुवाद करते हैं। यह पंक्ति प्रेमचन्द की महान् कृति 'गोदान' का निचोड़ है, जो भारतीय किसान की तत्कालीन व वर्तमान स्थिति को दर्शाती है। 'गोदान की विषय-वस्तु से परिचित अनुवादकों के लिए इस पंक्ति का अनुवाद करना आसान होगा जबकि इसके विपरीत 'गोदान' से अपरिचित अनुवादक के लिए अपेक्षाकृत कठिन हो सकता है। वह निहित सन्दर्भ को न समझकर, इसका शाब्दिक अनुवाद कर देगा–'Hori*s cow has not come yet-' जो कि सही अनुवाद नहीं है। मगर 'गोदान' की विषय वस्तु से परिचित अनुवादक जब इसका अनुवाद करेगा, तो वह निम्नलिखित सोपानों से होकर गुजरेगा–

स्रोत-भाषा

होरी की गाय अभी नहीं आई है।

1. विश्लेषण-Horis cow has not come yet-

2. बोधन-Hori dream has not fulfilled yet-

3. भाषिक अन्तरण-Indian farmers are still there where they were-

4. पुनर्गठन- No change occured in Indian farmers status.

5. पुनरीक्षण-Status of Indian farmers has not been changed yet.

6. लक्ष्य-भाषा–Status of Indian farmers has not been changed yet.

क्योंकि 'होरी की गाय अभी नहीं आई है' इस पंक्ति के माध्यम से किसानों की दुर्दशा, उनकी मजबूरी और त्रासदी को अभिव्यक्त किया गया है। आज भी हजारों किसान लाचारी की जिदगी जीने को विवश हैं। अनुवाद में यही विवशता व लाचारी झलकनी चाहिए।

उपर्युक्त प्रस्तावित प्रक्रिया अनुवाद कर्म में निहित भाषिक अन्तरण की प्रक्रिया को समझने में जरूर सहायक हैं मगर जरूरी नहीं कि हर अनुवादक अनुवाद के दौरान इन सब प्रक्रियाओं से होकर गुजरे। यह अनुवादक के ज्ञान, कौशल और अनुभव पर निर्भर करता है और हो सकता है कि कोई अनुभवी अनुवादक इन सोपानों को एक छलांग में पार कर ले। दुभाषिया इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। दरअसल अनुवाद का चिन्तन क्षेत्र इतना विस्तृत है कि इसे किसी यंत्रावत प्रक्रिया की सीमा में नहीं बाँधा जा सकता।

अनुवाद की सीमाएँ

अनुवाद और अनुवाद-प्रक्रिया की जिन विलक्षणताओं को अनुवाद विज्ञानियों ने बार-बार रेखांकित किया है, उन्हीं के परिपार्श्व से हिन्दी अनुवाद की अनेकानेक समस्याएँ भी उभरी हैं। बकौल प्रो. बालेन्दु शेखर तिवारी हिन्दी के उचित दाय की संप्राप्ति में जिन बहुत सारी समस्याओं को राह का पत्थर समझा जा रहा है उनमें अनुवाद की समस्याएँ अपनी विशिष्ट पहचान रखती हैं।

अनुवाद से भाषा का संस्कार होता है, उसका आधुनिकीकरण होता है। वह दो भिन्न संस्कृतियों को जोड़ने वाला संप्रेषण सेतु है। एक भाषा को दूसरी भाषा में अन्तरण की प्रक्रिया में अनुवादक दो भिन्न संस्कृति में स्थित समतुल्यता की खोज करता है। एतदर्थ उसे पर्यायवाची शब्दों के विविध रूपों से जूझना पड़ता है। इसी खोज और संतुलन बनाने की प्रक्रिया में कभी-कभी एक ऐसा भी मोड़ आता है जहाँ अनुवादक को निराश होना पड़ता है।

समतुल्यता या पर्यायवाची शब्द हाथ न लगने की निराशा। अननुवाद्यता (untranslatability) की यही स्थिति अनुवाद की सीमा है। जरूरी नहीं कि हर भाषा और संस्कृति का पर्यायवाची दूसरी भाषा और संस्कृति में उपलब्ध हो। प्रत्येक शब्द की अपनी सत्ता और सन्दर्भ होता है। कहा तो यह भी जाता है कोई शब्द किसी का पर्यायवाची नहीं होता। प्रत्येक शब्द एवं रूप का अपना-अपना

प्रयोग गत अर्थ-सन्दर्भ सुरक्षित है। इस दृष्टि से एक शब्द को दूसरे की जगह रख देना भी एक समस्या है। स्पष्ट है कि हर रूप की अपनी-अपनी समस्याएँ हैं और इन समस्याओं के कारण अनुवाद की सीमाएँ बनी हुई हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए कैटफोर्ड ने अनुवाद की सीमाएँ दो प्रकार की बतायी हैं-

भाषापरक सीमाएँ और सामाजिक-सांस्कृतिक सीमाएँ

भाषापरक सीमा से अभिप्राय यह है कि स्रोत-भाषा के शब्द, वाक्य रचना आदि का पर्यायवाची रूप लक्ष्य-भाषा में न मिलना। सामाजिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के अन्तरण में भी काफी सीमाओं का सामना करना पड़ता है क्योंकि प्रत्येक भाषा का सम्बन्ध अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था से जुड़ा हुआ है। परन्तु पोपोविच का कहना है कि भाषापरक समस्या दोनों भाषाओं की भिन्न संरचनाओं के कारण उठ सकती है, किन्तु सामाजिक-सांस्कृतिक समस्या सर्वाधिक जटिल होती है। इसके साथ ही उन्होंने यह भी कहा है कि भाषा परक और सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याएँ एक-दूसरे के साथ गुँथी हुई हैं, अतः इसका विवेचन एक दूसरे को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। बहरहाल, इस चर्चा से यह स्पष्ट हो गया कि अनुवाद की सीमाओं को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है –

1. भाषापरक सीमाएँ,
2. सामाजिक-सांस्कृतिक सीमाएँ और
3. पाठ-प्रकृतिपरक सीमाएँ।

अनुवाद की भाषापरक सीमाएँ

जैसा कि ऊपर संकेत किया जा चुका है कि प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना एवं प्रकृति होती है। इसीलिए स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा के भाषिक रूपों में समान अर्थ मिलने की स्थिति बहुत कम होती है। कई बार स्रोत-भाषा के समान वाक्यों में सूक्ष्म अर्थ की प्राप्ति होती है, लेकिन उनका अन्तरण लक्ष्य-भाषा में कर पाना सम्भव नहीं होता। उदाहरणार्थ इन दोनों वाक्यों को देखें–'लकड़ी कट रही है' और 'लकड़ी काटी जा रही है'। सूक्ष्म अर्थ भेद के कारण इन दोनों का अलग-अलग अंग्रेजी अनुवाद संभव नहीं होगा। फिर किसी कृति में अंचल-विशेष या क्षेत्र-विशेष के जन-जीवन का समग्र चित्रण अपनी क्षेत्रीय भाषा या बोली में जितना स्वाभाविक या सटीक हो पाता है उतना भाषा

के अन्य रूप में नहीं। जैसे–कि फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल'। इस उपन्यास में अंचल विशेष के लोगों की जो सहज अभिव्यक्ति मिलती है उसे दूसरी भाषा में अनुवाद करना बहुत कठिन कार्य है। इसके अतिरिक्त भाषा की विभिन्न बोलियाँ अपने क्षेत्रों की विशिष्टता को अपने भीतर समेटे होती हैं। यह प्रवृत्ति ध्वनि, शब्द, वाक्य आदि के स्तरों पर देखी जा सकती है। जैसे–चीनी, जापानी आदि भाषाएँ ध्वन्यात्मक न होने के कारण उनमें तकनीकी शब्दों को अनूदित करना श्रम साध्य होता है। अनुवाद करते समय नामों के अनुवाद की समस्या भी सामने आती है। लिप्यन्तरण करने पर उनके उच्चारण में बहुत अन्तर आ जाता है। स्थान विशेष भी भाषा को बहुत प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए एस्किमो भाषा में बर्फ के ग्यारह नाम हैं जिसे दूसरी भाषा में अनुवाद करना सम्भव नहीं है।

वास्तव में हिन्दी में अनुवाद की समस्याएँ इस भाषा के मूलभूत चरित्र की न्यूनताओं और विशिष्टताओं से जुड़ी हुई हैं। वस्तुतः हिन्दी जैसी विशालहृदय भाषा में अनुवाद की समस्याएँ अपनी अलग पहचान रखती हैं। भिन्नार्थकता, न्यूनार्थकता, आधिकारिकता, पदाग्रह, भिन्नाशयता और शब्दविकृति जैसे–दोष ही हिन्दी में अनुवाद कार्य के पथबाधक नहीं हैं, बल्कि हिन्दी के अनुवादक को अपनी रचना की संप्रेषणीयता की समस्या से भी जूझना पड़ता है।

अनुवाद की सामाजिक-सांस्कृतिक सीमाएँ

उपर्युक्त संस्कृति–चक्र से स्पष्ट है कि भाषा और संस्कृति का अटूट सम्बन्ध होता है। अनुवाद तो दो भिन्न संस्कृतियों को जोड़ने वाला संप्रेषण–सांस्कृतिक सेतु है। एक भाषा को दूसरी भाषा में अन्तरण की प्रक्रिया में अनुवादक दो भिन्न संस्कृति में स्थित समतुल्यता की खोज करता है। वास्तव में मानव अभिव्यक्ति के एक भाषा रूप में भौगोलिक, ऐतिहासिक और सामाजिक–सांस्कृतिक तत्त्वों का समावेश हो जाता है, जो एक भाषा से दूसरी भाषा में भिन्न होते हैं। अतः स्रोत–भाषा के कथ्य को लक्ष्य–भाषा में पूर्णत या संयोजित करने में अनुवादक को कई बार असमर्थता का सामाना करना पड़ता है। यह बात अवश्य है कि समसांस्कृतिक भाषाओं की अपेक्षा विषम सांस्कृतिक भाषाओं के परस्पर अनुवाद में कुछ हद तक अधिक समस्याएँ रहती हैं। 'देवर–भाभी', 'जीजा–साली' का अनुवाद यूरोपीय भाषा में नहीं हो सकता क्योंकि भाव की दृष्टि से इसमें जो सामाजिक सूचना निहित है वह शब्द के स्तर पर नहीं आँकी जा सकती। इसी

प्रकार भारतीय संस्कृति के 'कर्म' का अर्थ न तो 'Action' हो सकता है और न ही 'Performance' क्योंकि 'कर्म' से यहाँ पुनर्जन्म निर्धारित होता है जबकि 'Action' और 'Performance' में ऐसा भाव नहीं मिलता।

अनुवाद की पाठ-प्रकृतिपरक सीमाएँ

अनुवाद की आवश्यकता का अनुभव हिन्दी में इसी कारण तीव्रता से किया गया कि भाषाओं के पारस्परिक आदान-प्रदान से हिन्दी को समृद्ध होने में सहायता मिलेगी और भाषा के वैचारिक तथा अभिव्यंजनामूलक स्वरूप में परिवर्तन आएगा। हिन्दी में अनुवाद के महत्त्व को मध्यकालीन टीकाकारों ने पांडित्य के धरातल पर स्वीकार किया था, लेकिन यूरोपीय सम्पर्क के पश्चात् हिन्दी को अनुवाद की शक्ति से परिचित होने का वृहत्तर अनुभव मिला। हिन्दी में अनुवाद की परम्परा भले ही अनुकरण से प्रारम्भ हुई, लेकिन आज ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में अनुवाद की विभिन्न समस्याओं ने हिन्दी का रास्ता रोक रखा है। विभिन्न विषयों तथा कार्य क्षेत्रों की भाषा विशिष्ट प्रकार की होती है। प्रशासनिक क्षेत्र में कई बार 'Sanction' और 'Approval' का अर्थ सन्दर्भ के अनुसार एक जैसा लगता है, अत: वहाँ दोनों शब्दों में भेद कर पाना सम्भव नहीं है। इसी प्रकार जीवविज्ञान में 'poison' और 'venom' शब्दों का अर्थ एक है, किन्तु ये अपने विशिष्ट गुणों के कारण भिन्न हो जाते हैं। अत: पाठ की प्रकृति के अनुसार पाठ का विन्यास करना पड़ता है। जब तक पाठ की प्रकृति और उसके पाठक का निर्धारण नहीं हो पाता तब तक उसका अनुवाद कर पाना सम्भव नहीं हो पाता।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि हर भाषा की अपनी संरचनात्मक व्यवस्था और सामाजिक-सांस्कृतिक परम्परा होती है। इसके साथ-साथ विभिन्न प्रयोजनों में प्रयुक्त होने के कारण उसका अपना स्वरूप भी होता है। यही कारण है कि अनुवाद की प्रक्रिया में स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा की समतुल्यता के बदले उसका न्यूनानुवाद या अधि अनुवाद ही हो पाता है।

5

अनुवाद एवं भाषाविज्ञान

अनुवाद एक भाषिक कला है। सामान्य अर्थ में, एक भाषा में कही गई बात को दूसरी भाषा में कहना 'अनुवाद' है। यहाँ कथन या अभिव्यक्ति का माध्यम है 'भाषा'। स्पष्ट है कि अनुवाद क्रिया पूर्णत: भाषा पर आधारित है। कदाचित इसीलिए भोलानाथ तिवारी जी ने अनुवाद को 'भाषान्तर' कहा है। एक भाषिक क्रिया होने के नाते अनुवाद का भाषा से ही नहीं, भाषाविज्ञान से भी गहरा सम्बन्ध है, क्योंकि भाषाविज्ञान में 'भाषा' का वैज्ञानिक अध्ययन होता है। भाषा की संरचना में ध्वनि, शब्द, रूप, अर्थ, वाक्य आदि कई स्तर होते हैं। इनके आधार पर भाषाविज्ञान के अन्तर्गत ध्वनिविज्ञान, रूपविज्ञान, अर्थविज्ञान, वाक्यविज्ञान आदि का विधिवत व वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है।

अनुवाद में भी ध्वनि, शब्द, रूप आदि की दृष्टि से स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा की तुलना करनी होती है। इन विविध स्तरों पर दो भाषाओं की प्रकृति, संरचना, शैली आदि में जो अन्तर होते हैं, वे समान प्रतीत होने वाले प्रसंगों में भी अलग-अलग अर्थ भर देते हैं। अनुवाद में भाषान्तरण के बावजूद अर्थ की रक्षा अपरिहार्य होती है। अत: अनुवादक को स्रोत-भाषा तथा लक्ष्य-भाषा की प्रकृति, संरचना, विविध भाषिक तथा व्याकरणिक स्तरों, विभिन्न शैलियों तथा इन तमाम पक्षों से सम्बद्ध अर्थ व्यंजनाओं का सम्पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

भाषा का अनुवाद और अनुवाद की भाषा

भारतवर्ष विभन्न भाषाओं एवं उपभाषाओं रूपी सरिताओं का संगम है। यहाँ एक ओर संस्कृति की पावन गंगा प्रवाहित है जिसने अमृत वांडमय से समस्त क्षेत्रीय भाषाओं को भी अनुप्राणित किया है, दूसरी ओर हमारी संस्कृति की अंत:सलिला सरस्वती है, जो विविधि वेशभूषा, रीतिरिवाजों के बाह्य भेदों की विद्यमानता के बावजूद समस्त भारत को रागात्मकता के एक सूत्र में बाँधे हुए हैं। भाषा ही वह जीवन-ज्योति है, जो मानव को मानव से जोड़ती है। यह विचारों के आदान-प्रदान में सहायक होने के साथ-साथ परम्पराओं, संस्कृतियों और मान्यताओं एवं विश्वासों को समझने का सशक्त माध्यम भी है। किसी भी देश की धड़कन उसकी भाषा में ही निहित होती है। जहाँ भाषा विचारों की संवाहिका है, वहीं अनुवाद विविध भाषाओं एवं विविध संस्कृतियों से साक्षात्कार कराने वाला साधन। अनुवादक अपने भागीरथ प्रयास से दो भिन्न एवं अपरिचित संस्कृतियों, परिवेशों एवं भाषाओं की सौन्दर्य चेतना को अभिन्न और परिचित बता देता है।

अनुवाद उतना ही प्राचीन है जितनी कि भाषा। हमारा भारत भाषाओं और उनके बोलने वालों की संख्या की दृष्टि से यूरोप से बहुत बड़ा है। और सच तो यह है कि भाषाओं के मामले में हम दुनिया के सिरमौर हैं। दुनिया की पचास बड़ी भाषाओं में से एक तिहाई भारत की भाषाएँ हैं। अनादि काल से वे मनुष्य जाति के पारस्परिक आदान-प्रदान का सशक्त माध्यम रही हैं। भाषा और साहित्य हमारी संस्कृति के उद्‌गाता और संवाहक रही हैं।

भाषा और अनुवाद का भविष्य परस्पर अन्योन्याश्रित है। भाषा का भविष्य अनुवाद का भी भविष्य है। वर्तमान भाषा के रूप को पहचानते हुए भविष्य की कल्पना की जाती है। आज कई प्रकार के भाषा-रूप हैं, जैसे बोलचान की भाषा, साहित्यिक भाषा, माध्यम भाषा, सम्पर्क भाषा, जनसंचार माध्यम की भाषा इत्यादि। बोलचाल की भाषा में व्याकरण के ज्ञान की आवश्यकता नहीं, जबकि साहित्यिक भाषा में रचनाधर्मिता प्रकट होने के कारण व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है। माध्यम भाषा के द्वारा शिक्षण प्राप्त करते हैं। जनसंचार की भाषा के प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक दो अलग प्रकार के माध्यम हैं। इसका मुख्य उद्देश्य जनता को सूचना देना, प्रशिक्षण, प्रबोधन, अभिप्रेरण, प्रोत्साहन तथा मनोरंजन करना है। इसी कारण इस माध्यम में भाषा को रोचक रूप में प्रस्तुत करने का विशेष प्रयास रहता है।

यह अलग बात है कि बाजारवाद के चलते आज भाषा का व्यावसायीकरण हो गया है। इंटरनेट, कंप्यूटर आदि के कारण दैनन्दिन जीवन की आवश्यकताओं में प्रयोग होने वाली भाषा पर विस्तार देने का प्रयास होने लगा है। भाषा में दिनों दिन परिष्कार हो रहा है, जिससे शब्दों में निखार आता जा रहा है। पहले 'Public Latrine' शब्द के लिए 'संडास' शब्द का प्रयोग किया जाता था, जो सुनने और बोलने में बड़ा अरुचिकर लगता था, परन्तु धीरे-धीरे इसके स्थान पर प्रसाधन, सुलभ शौचालय, जनसुविधाएँ आदि शब्द आए, ये शब्द ज्यादा गरिमा मंडित हैं।

भाषा की सबसे बड़ी शक्ति उसकी ग्रहण क्षमता है, जिस भाषा में यह गुण नहीं, वह भाषा दम तोड़ है। किसी भी भाषा से अनुवाद करते समय अनुवाद के सरलीकरण का प्रयास रहना चाहिए। यदि अनुवाद को जटिल बनाने का प्रयास किया गया तो स्थिति बिगड़ने की संभावना रहती है। संप्रेषण ग्राह्यता जब तक भाषा में नहीं होगी, वह अनुवाद या भाषा जनसम्पर्क का माध्यम नहीं बन सकती। भाषा भावाभिव्यक्ति के साथ-साथ चिन्तन का भी माध्यम है। हर शब्द की व्यंजना, प्रकृति, प्रवृत्ति, संस्कृति, इतिहास अलग होता है। अतः अनुवाद करते समय इसे समझना होगा। भाषा और शब्द की प्रकृति से भलीभाँति परिचित होना होगा।

अनुवाद और अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान

आधुनिक युग को अनुवाद का युग कहेंगे अतिशयोक्ति न होगी। क्योंकि अनुवाद-अध्ययन और अनुसंधान आधुनिक युग की पुकार है। दूसरे शब्दों में, आधुनिक युग में जीवन के अनेक क्षेत्रों के विकास के साथ-साथ भाषायी स्तर पर, संप्रेषण-व्यापार हेतु अनुवाद एक अहम् आवश्यकता के रूप में उभरकर सामने आया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जब हम किसी एक भाषा में अभिव्यक्त भाव या विचारों के लिखित रूप को किसी अन्य भाषा-भाषी समुदाय के संप्रेषणार्थ, दूसरी भाषा में यथासाध्य मूलनिष्ठ किन्तु बोधगम्य रूप में परिवर्तित करते हैं तो यह भाव या विचारों के सोद्देश्यपूर्ण भाषान्तर-प्रक्रिया 'अनुवाद' कहलाती है।

आधुनिक भाषाविज्ञान में भाषा के अनुप्रायोगिक पक्ष पर भी चिन्तन हुआ है। 'भाषा का सैद्धान्तिक विश्लेषण और वाक्य, रूपिम, स्वनिम आदि उसके व्याकरणिक स्तरों का वैज्ञानिक अध्ययन भाषाविज्ञान का सिद्धान्त कहलाता है, जबकि सौद्धान्तिक भाषाविज्ञान के नियमों सिद्धान्तों, तथ्यों और निष्कर्षों का किसी अन्य विषय में अनुप्रयोग करने की प्रक्रिया ओर क्रियाकलाप का विज्ञान ही

अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान(Applied Linguistics) है।'बकौल कृष्णकुमार गोस्वामी अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान प्रायोगिक एवं कार्योन्मुख एक ऐसी वैज्ञानिक विधा है, जो मानव कार्य-व्यापार में उठने वाली भाषागत समस्याओं का समाधान ढूँढती है। भाषिक क्षमता एवं भाषिक व्यवहार के सन्दर्भ में अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान का सम्बन्ध प्रत्यक्षत: व्यवहार पक्ष से जुड़ा हुआ है। यदि भाषाविज्ञान प्रत्येक 'क्या' का उत्तर देता है अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान प्रत्येक 'कैसे' तथा 'क्यों' का उत्तर देता है, यह उपभोक्ता सापेक्ष होता है, जिसमें भाषा के उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं द्वारा निर्धारित लक्ष्य के सन्दर्भ में भाषा-सिद्धान्तों का अनुप्रयोग होता है। वास्तव में भाषा से हम क्या-क्या काम ले सकते हैं, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान उस दिशा में काम करता है। इसलिए जैसे-जैसे–इसकी उपयोगिता बढ़ती गई, देश एवं काल के अनुसार उसे भिन्न-भिन्न विधाओं से सम्बद्ध किया जाता रहा है, यथाभाषा-शिक्षण, अनुवाद, कोशविज्ञान, शैलीविज्ञान, कंप्यूटर भाषाविज्ञान, समाजभाषाविज्ञान।

सामान्यत: अनुवाद से अभिप्राय एक भाषाई संरचना के प्रतीकों के द्वारा सम्प्रेष्य अर्थ को दूसरी भाषा की संरचना के प्रतीकों में परिवर्तित करने से लिया जाता है। डार्टेस्ट ने अनुवाद को अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की एक शाखा के रूप में परिभाषित करते हुए लिखा है कि अनुवाद, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की वह शाखा है जिसमें विशेषत: एक प्रतिमानित प्रतीक समूह से दूसरे प्रतिमानित प्रतीक समूह में अर्थ को अन्तरित करने की समस्या या तत्सम्बन्धी तथ्यों पर विचार-विमर्श किया जाता है –

अनुवाद को अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के अन्तर्गत शामिल करने का कारण यह है कि अनुवाद कर्म में स्रोत-भाषा से लक्ष्य-भाषा तक पहुँचने में हम जिन प्रक्रियाओं से होकर गुजरते हैं उसका वैज्ञानिक विश्लेषण(Scientific Analysis) किया जा सकता है। भाषा विज्ञानियों का मानना है कि अनुवाद क्रिया में पहले स्रोत-भाषा का विकोडीकरण (Decoding of Source Language) होता है जिसका बाद में लक्ष्य-भाषा में पुन:कोडीकरण (Encoding of Target Language) किया जाता है। क्रम को देखें-

स्रोत-भाषा (Encoding of Source Language)

स्रोत-भाषा का कोडीकृत संदेश (Encoded message S-L-)

अन्तरण अर्थात् स्रोत-भाषा का विकोडीकरण (Decoding of S-L-)

लक्ष्य-भाषा का कोडीकृत संदेश (Encoded message of Target Language)

लक्ष्य-भाषा (Encoding of T-L-)

इसे आरेख से सहज ही समझा जा सकता है –

अनुवाद और अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान

अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के कार्यक्षेत्र का अध्ययन करते हुए उसके तीन सन्दर्भ बताए हैं–

ज्ञान-क्षेत्र का सन्दर्भ

विधा-क्षेत्र का सन्दर्भ

भाषा शिक्षण का सन्दर्भ

ज्ञान-क्षेत्र में भाषाविज्ञान और उसके सिद्धान्तों का अनुप्रयोग ज्ञान के अन्य क्षेत्रों को स्पष्ट करने के लिए किया जाता है। जैसे–मनोभाषाविज्ञान, समाजभाषाविज्ञान, कंप्यूटर भाषाविज्ञान आदि।

विधा-क्षेत्र में भाषावैज्ञानिक सिद्धान्तों का अनुप्रयोग विशेष विधाओं में किया जाता है। शैलीविज्ञान, अनुवादविज्ञान, कोशविज्ञान, वाक्चिकित्साविज्ञान आदि।

जहाँ तक भाषा शिक्षण का प्रश्न है, दूसरी भाषा-शिक्षण (Second Language Teaching) अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की एक महत्त्वपूर्ण शाखा है। भाषाविज्ञान के क्षेत्र में दूसरी भाषा' पद एक पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त होता है जिसकी एक निश्चित संकल्पना है। मातृभाषा हमारी प्रथम भाषा होती है। दूसरी भाषा को सीखने में माध्यम बनती है मातृभाषा। दूसरी भाषा के रूप में जब वह कोई अन्य भाषा पढ़ता है तब उसके सोचने-समझने में मातृभाषा उसकी व्यावहारिक भाषा रहती है क्योंकि वह व्यक्ति की जीवन पद्धति, आचार-विचार और व्यवहार की भाषा होती है। दूसरी भाषा शिक्षण में अनुवाद की प्रक्रिया को भाषा सीखने की प्रक्रिया के रूप में अपनाया जाता है। अनुवाद भाषा-शिक्षण की परम्परागत और सिद्ध पद्धति है। मातृभाषा अथवा प्रथम भाषा का जो संरचनागत ढाँचा व्यक्ति के मस्तिष्क में व्यावहारिक स्तर पर विद्यमान होता है, उसका उपयोग इस पद्धति से दूसरी भाषा सिखाने में कर लिया जात है और व्यक्ति धीरे-धीरे सुविधाजनक ढंग से दूसरी भाषा व्यवहार में दक्षता अर्जित कर लेता है। अनुवाद-प्रक्रिया की भाँति उसे अपनी भाषा (स्रोत-भाषा) की शब्दावली के पर्याय उसे दूसरी भाषा में खोजकर याद करने होते हैं, इन शब्दों के विभिन्न रूपों से परिचय प्राप्त करना होता है तथा भाषा के संरचनागत (व्याकरणसंबंधी) नियमों की जानकारी हासिल करनी होती है। इन शब्दों का

प्रयोग करते हुए वाक्त-रचना करते समय वह नियमों का सतर्कतापूर्वक पालन करता है। ऐसा करते समय वह अपनी भाषा में सोचता है, फिर उस बात को उस भाषा में पढ़ता है, उस पाठ के पर्याय अपनी भाषा मे तलाशता है और कथ्य को दूसरी भाषा(लक्ष्य-भाषा) में प्रस्तुत करता है। अनुवाद के माध्यम से दूसरी भाषा-शिक्षण दुनिया भर में बहुत समय से प्रचलित रहा है। सदियों से लोग इस पद्धति से भाषा सीखते रहे हैं।

भाषाविज्ञान एवं अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान

भाषा का विधिवत एवं वैज्ञानिक अध्ययन भाषाविज्ञान सिद्धान्त कहलाता है जबकि सैद्धान्तिक भाषाविज्ञान के नियमों, सिद्धान्तों, तथ्यों और निष्कर्षो काकिसी अन्य विषय में अनुप्रयोग करने की प्रक्रिया और क्रिया-कलाप काविज्ञान ही अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान है। दूसरे शब्दों में कहें तो, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान में भाषाविज्ञान से प्राप्त सैद्धान्तिक जानकारी का विभिन्न क्षेत्रों में अनुप्रयोग करते हैं। अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञानी अपने ज्ञान भंडार के विवेचनात्मक परीक्षण के पश्चात् उसका अनुप्रयोग उन क्षेत्रों में करता है जहाँ मानव-भाषा एक केन्द्रीय घटक होती है जिससे उन क्षेत्रों की कार्यक्षमता का संवर्द्धन किया जा सकता है।

अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान एक ऐसी प्रायोगिक, कार्योन्मुख वैज्ञानिक विधा है, जो मानव कार्य-व्यापार में उठने वाली भाषागत समस्याओं का समाधान ढूँढ़ती है। भाषिक क्षमता एवं भाषिक व्यवहार के सन्दर्भ में अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान का सम्बन्ध प्रत्यक्षत: व्यवहार पक्ष से जुड़ा हुआ है। यदि भाषाविज्ञान प्रत्येक 'क्या' का उत्तर देता है तो अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान प्रत्येक 'कैसे' तथा 'क्यों' का उत्तर देता है। चूँकि अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान का सम्बन्ध विशेष विधाओं से है, अत: इसमें भाषावैज्ञानिक सिद्धान्तों का जो अनुप्रयोग किया जाता है उसका लक्ष्य संक्रियात्मक होता है। संक्रियात्मक रूप में शैलीविज्ञान, अनुवादविज्ञान, कोशविज्ञान, वाक्चिकित्सा विज्ञान आदि विषयों में भाषावैज्ञानिक सिद्धान्तों का अनुप्रयोग अनिवार्यत: होता है। क्योंकि ये मुख्यत: भाषा से सम्बद्ध हैं। इन विधाओं को एक निश्चित सैद्धान्तिक सन्दर्भ देने में और उसके अध्ययन-विश्लेषण के लिए एक सुनिश्चित वैज्ञानिक तकनीक विकसित करने में भाषावैज्ञानिक सिद्धान्त एवं प्रणाली के अनुप्रयोग का सर्वाधिक योगदान है।

अनुवाद एवं व्यतिरेकी भाषाविज्ञान

'व्यतिरेक' का अर्थ है 'असमानता' या 'विरोध'। 'व्यतिरेकी भाषाविज्ञान' में दो भाषाओं की तुलना करके दोनों की असमानताओं का पता लगाया जाता है। अनुवाद के सन्दर्भ में कहें तो व्यतिरेकी विश्लेषण का मुख्य उद्देश्य रूपात्मक तुलनात्मकता और उस तुलानात्मकता के आधार पर स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा में विद्यमान असमानताओं की व्याख्या करना है। इस प्रकारव्यतिरे की तकनीक के रूप में अनुवाद में स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा के बीच व्याप्त असमानताओं के प्रति भाषायी सजगता पैदा करना है।

उदाहरण के लिए हिन्दी में तीन मध्यम पुरुष–तू, तुम, आप हैं जबकि अंग्रेजी में केवल 'लवन'। इस प्रकार निम्नलिखित वाक्यों में अंग्रेजी के 'small' शब्द के समानान्तर हिन्दी में 'छोटा', 'छोटी', 'छोटे' तीनों का प्रयोग हुआ है।

उदाहरण–SmalI boy–छोटा लड़का SmalI girl–छोटी लड़की SmalI boys–छोटे लड़के

एकाध और उदाहरणों पर विचार करें रूहिन्दी के 'गानेवाली' शब्द का अंग्रेजी में अनुवाद सन्दर्भानुसार 'Singer' और 'About to Sing' होगा। इस प्रकार 'टोपीवाला' का अनुवाद 'wearing cap' और 'Cap seller' होगा। अत: कहा जा सकता है कि अनुवादका सीधा सम्बन्ध व्यतिरेकी विश्लेषण से है।

अनुवाद एवं ध्वनिविज्ञान

'ध्वनि' भाषा की मूलभूत इकाई होती है तथा हर भाषा की अपनी अलग ध्वनि व्यवस्था होती है। दो भाषाओं के बीच कुछ समान, कुछ लगभग समान और कुछ भिन्न ध्वनियाँ होती हैं। यहाँ अंग्रेजी और हिन्दी भाषा की समान ध्वनियों की तुलना करते हैं–

हिन्दी–क ग ज ट न प फ ब म र ल व श स

अंग्रेजी–k g j t n p f b m r l v sh s

तुलना से स्पष्ट है कि अंग्रेजी में हिन्दी की 'अ' ध्वनि नहीं है तो 'अ'और 'का सूक्ष्म अन्तर हिन्दी में नहीं है। ऐसे और कई उदाहरण ढूँढे जा सकते हैं। जैसा कि ऊपर कहा गया, भाषा की मूलभूत इकाई है 'ध्वनि' औरसार्थक ध्वनियों से 'शब्द' का निर्माण होता है। यह शब्द जब वाक्य में प्रयुक्त होता है तब वह 'रूप' बन जाता है। अनुवाद कर्म में हमेशा दो भाषाओं के बीच स्थित समानार्थक शब्दों की तलाश रहती है। मगर यह जरूरी नहीं कि एक भाषा की

सम्पूर्ण अभिव्यक्ति किसी दूसरी भाषा में उपलब्ध हो। हर भाषा में कुछ ऐसे शब्द होते हैं जिसके समानार्थक शब्द दूसरी भाषा में उपलब्ध नहीं होते, जैसे–पारिभाषिक शब्द, मिथ-विशेष से जुड़े शब्द, सांस्कृतिक शब्द आदि। ऐसे में हम मूल शब्द का अनुवाद न कर उसे लक्ष्य-भाषा की लिपि में परिवर्तित कर ज्यों का त्यों ग्रहण कर लेते हैं। इसके लिए हमें लिप्यंतरण या Transliteration का सहारा लेना पड़ता है और लिप्यन्तरण में ध्वनिविज्ञान का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। कुछ शब्दों का लिप्यन्तरण द्रष्टव्य है –

Bureau- ब्यूरो, Voucher- वाउचर, Macbath- मैकबेथ आदि।

अनुवाद एवं अनुलेखन

अनुलेखन का अर्थ है स्रोत-भाषा के शब्द की वर्तनी पर ध्यान न देकर उसके उच्चारण को आधार मान कर लक्ष्य-भाषा में उस उच्चारण के अनुरूप लिखना। अनुलेखन को प्रतिलेखन भी कहा जाता है। अनुवाद प्रक्रिया के दौरान अनुद्य सामग्री में हमें दो प्रकार के शब्द मिलते हैं–1- जिनका अनुवाद किया जाना है और 2- जिनका अनुवाद न कर थोड़े-बहुत रूपान्तर के साथ प्रायः मूल रूप में ही लक्ष्य-भाषा में लिख दिया जाता है। अनुलेखन में स्रोत-भाषा के ऐसे शब्दों को लक्ष्य-भाषा में लिखने की समस्या पर विचार किया जाता है जिसका सम्बन्ध लिपिविज्ञान से है। भोलानाथ तिवारी इसे स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि अनुवाद में ऐसी समस्या दो रूपों में आती है। यदि अनुवादक किसी से कोई बात सुनकर उसका अनुवाद करके लिख रहा है तो वह स्रोत-भाषा की ध्वनि को पहले लक्ष्य-भाषा की ध्वनि में परिवर्तित करता है और फिर लक्ष्य-भाषा की उन ध्वनियों को प्रतिनिधि लिपि-चिह्नों में उन्हें लिखता है-

स्रोत-भाषा ध्वनि लक्ष्य-भाषा ध्वनि लक्ष्य-भाषा लिपिचिह्न

किन्तु यदि वह किसी लिखित सामग्री से अनुवाद कर रहा हो तो इसक्रम में वृद्धि हो जाती है-

1.स्रोत-भाषा लिपि चिह्न 2.स्रोत-भाषा ध्वनि 3. लक्ष्य-भाषा ध्वनि 4. लक्ष्य-भाषा लिपिचिह्न

अनुवाद में स्रोत-भाषा लिपि चिह्न से सीधे लक्ष्य-भाषा लिपिचिह्न तक पहुँचने की प्रक्रिया सही नहीं होती। उदाहरण के लिए यदि लिपि चिह्नों के आधार पर 'Jesperson' का अनुवाद 'जेस्पर्सन' कर दिया जाए तो गलतहोगा क्योंकि इसका सही अनुवाद तो 'येस्पर्सन' है। ऐसे ही 'Rousseau' और

'Meillet' का अनुवाद क्रमानुसार 'रूसो' और 'मेइये' होगा, न कि 'राउस्सेअउ' तथा 'मेइल्लेत'।

अनुवाद एवं रूपविज्ञान

रूपविज्ञान के अन्तर्गत भाषा की रूप-रचना का अध्ययन होता है। रूप-रचना में व्याकरणिक नियमों का आकलन एवं निर्धारण किया जाता है। इसके अध्ययन का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है। चूँकि भाषा के रूप-विन्यास पर ही मूल का आशय छिपा रहता है, इसीलिए अनुवादक को स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा, दोनों की रूप-रचना, व्याकरणिक नियमों आदि से भलीभाँति परिचित होना चाहिए। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के दो वाक्यों का गलत और सही अनुवाद द्रष्टव्य है –

उदाहरण-1 Prima has a pair of scissors-क- प्रीमा के पास एक जोड़ी कैंची हैं। (-गलत अनुवाद)ख- प्रीमा के पास एक कैंची है। (-सही अनुवाद) उदाहरण-2 Her hair is beautiful-क- उसका सुन्दर बाल है। (-गलत अनुवाद)ख- उसके बाल सुन्दर हैं। (-सही अनुवाद)

कहने की जरूरत नहीं कि अंग्रेजी में 'a pair of scissors', 'a pair of trousers' आदि का प्रयोग होता है, मगर हिन्दी में उसे 'एक जोड़ी कैंची' या 'एक जोड़ी पायजामा' न कहकर सिर्फ 'एक कैंची' या 'एक पायजामा' कहा जाता है। ऐसे ही अंग्रेजी में 'hair' शब्द एकवचन के रूप में प्रयोग होता है, जबकि हिन्दी में 'बाल' बहुवचन में।

अनुवाद एवं शब्दविज्ञान

किसी भाषा की सार्थक ध्वनियों के समुच्चय को शब्द कहते हैं। शब्दविज्ञान में शब्दों को परिभाषित करके विभिन्न आधारों पर उनका वर्गीकरण किया जाता है। अनुवाद में शब्दों के मूल अर्थ का स्रोत या प्रयोग सन्दर्भ को जानने के लिए शब्द का वैज्ञानिक विश्लेषण और वर्गीकरण करना पड़ता है। उदाहरण के लिए 'पानी' शब्द को लीजिए –

पानी

जल वारि नीर अम्बु सलिल अंभ तोय उदक घनसार तृसाह प्रजाहित सर निश्चय ही इन समानार्थी शब्दों का प्रयोग भी कुछ हद तक निश्चित ही है और

अनुवादक को सन्दर्भानुसार इन शब्दों में से एक ही प्रतिशब्द को ग्रहण करना पड़ता है। जैसे–रूक- गंगा जल (गंगा नीर या गंगा पानी नहीं) ख- पीने का पानी (पीने का नीर या जल नहीं) ग- नीर ढलना' (जल या पानी ढलना नहीं) (नीर ढलना = आँसू बहाना)

अनुवाद एवं अर्थविज्ञान

अर्थविज्ञान में भाषा के अर्थ पक्ष का अध्ययन किया जाता है। चूँकि अनुवाद में शब्द का नहीं अर्थ का प्रतिस्थापन होता है, इसीलिए अनुवाद में अर्थविज्ञान की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। साथ ही अनुवाद कर्म में अनुवादक केवल अभिधार्थ के सहारे आगे नहीं बढ़ता, बल्कि निहितार्थ (लक्षण और व्यंजना) को भी बराबर साथ लिए चलता है। उदाहरण के लिए एक पक्षी के सन्दर्भ में 'वह उल्लू है' कहना साधारण अर्थ का बोध कराता है, मगर एक व्यक्ति के सन्दर्भ में जब 'वह उल्लू है' कहा जाता है तो व्यंग्यार्थ का बोध कराता है। फिर जो 'उल्लू' हिन्दी में मूर्ख का प्रतीक है, वही 'व्रूस' अंग्रेजी में 'विद्वान' का प्रतीक है। इतना ही नहीं, कुछ शब्दों के कई अर्थ होते हैं। जैसे–'वारि' शब्द की तीन अर्थ छवियों को देखिए –

वारि

1- जल 2- सरस्वती 3- हाथी बाँधने की जंजीर

अनुवादक को सन्दर्भानुसार इन अर्थ छायाओं में से एक अर्थ को ग्रहण करना पड़ता है।

अनुवाद एवं वाक्य विज्ञान

अनुवाद में वाक्यविज्ञान की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। वाक्यविज्ञान में भाषा विशेष के सन्दर्भ में वाक्य रचना और इसके विभिन्न पक्षों का विश्लेषण किया जाता है। अनुवाद में भी लक्ष्य-भाषा की प्रकृति, व्याकरणिक नियम आदि का ध्यान रखना पड़ता है। उदाहरण के लिए 'वह भोजन कर रहा है' का अंग्रेजी अनुवाद 'He is doing meal-' न होकर 'He is Taking.' होगा। यहाँ 'भोजन करना' हिन्दी भाषा की प्रकृति के अनुकूल है और 'taking meal' अंग्रेजी भाषा की प्रकृति के। ऐसे ही 'घोंघा धीरे-धीरे चल रहा है' का अंग्रेजी अनुवाद 'Snail is slowly slowly creeping-' न होकर 'Snail is creeping slowly' होगा।

कहने की जरूरत नहीं कि हिन्दी वारिभाषा की संरचना 'कर्ता. कर्म. क्रिया विशेषण. क्रिया' नियम पर आधारित होती है, जबकि अंग्रेजी भाषा की संरचना 'कर्ता. कर्म. क्रिया. क्रिया विशेषण' नियम पर।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुवाद का भाषाविज्ञान, खासकर अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान एवं व्यतिरेकी भाषाविज्ञान से बहुत गहरा सम्बन्ध है। हर अनुवादक को भाषविज्ञान के इन नियमों की जानकारी होना जरूरी है, अन्यथा वह सही और सार्थक अनुवाद कर ही नहीं सकता।

अनुवाद और भाषाविज्ञान

अनुवाद–अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

(क) भूमिका–आधुनिक युग के जिस चरण में हम आज हैं, उसे वैश्विकरण का युग, सूचना प्रौद्दोगिकी का युग, उत्तर आधुनिक युग आदि कहा जा रहा है। इन विविध नामों की सार्थकता अनुवाद के बिना सिद्ध नहीं हो सकती। अत: इसी क्रम में युदि इस युग को अनुवाद का युग कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। विश्व भर में फैले अपार ज्ञान संपदा का प्रचार-प्रसार करने में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। भारतीय दर्शन, गणित, चिकित्सा आदि शास्त्रों का ज्ञान विश्व के अनेक देशों में विशेषकर पश्चिमी देशों में तथा वहाँ पर हुए आधुनिक आविष्कारों की जानकारी भारतीयों को होना अनुवाद के कारण ही संभव हो पाया है।

(ख) अनुवाद–अर्थ–'अनुवाद' मूलत: संस्कृत का शब्द है। यह दो शब्दों के योग से बना है - अनु , वाद। संस्कृत की 'वद' धातु में 'घ' प्रत्यय के जुड़ने से धातु के पहले अक्षर में 'आ' की मात्रा ' ज ' जुड़ जाती है और 'वाद' शब्द बन जाता है। इसका अर्थ है कहना या बोलना। 'वाद' में 'अनु' उपसर्ग के लगने से 'अनुवाद' शब्द बना। 'अनु' का अर्थ है, पुन:, बाद में, पीछे इत्यदि। अत: अनुवाद का व्युत्पति जनित अर्थ हुआ पुन: कहना, बाद में कहना, पीछे कहना आदि।

(आ) अनुवाद का स्वरूप–अनुवाद दो भिन्न भाषा-भाषियों के बीच विचारों के आदान-प्रदान का एक सशक्त माध्यम है। इसकी सहायता से दो भिन्न सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं के बीच एक संबंध स्थापित किया जा सकता है। इससे बहुभाषिक स्थिति की विडंबना से बचने में आसानी होती है। इस कार्य में अनुवादक को एक कलाकार या

रचनाकार की भांति सृजन की प्रक्रिया से गुजरना होता है। वह यह सृजन मूल पाठ के लेखक की भांति ही करता है। वह मूल के आधार पर लक्ष्य भाषा में अपनी लेखन प्रतिभा का उपयोग कर पहले से सृजित पाठ का पुन:सृजन करता है। पुन:सृजन करते समय अनुवादक अनुवाद की वैज्ञानिक प्रक्रिया तथा भाषा सिद्धांतों का अनुपालन करता है। इसलिए अनुवाद को वैज्ञानिक कला भी कहा जाता है। अत: अनुवाद को कला और विज्ञान से संबद्ध विषय के रूप में स्वीकार करने से इसका स्वरूप व्यापक हो जाता है और भाषा सिद्धांतों से संबद्ध विषय के रूप में इसका स्वरूप सीमित हो जाता है। प्रो. रवींद्रनाथ श्रीवास्तव ने अनुवाद के स्वरूप को दो संदर्भों में देखने का प्रयास किया है – सीमित संदर्भ और व्यापक संदर्भ। उन्होने अनुवाद के सीमित संदर्भ को भाषा के सिद्धांतों से जोड़ा है। हर भाषा स्थानीय परिवेश, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों से प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए हिंदी में संदर्भानुसार 'घट' और 'कलश' 'घड़ा' के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। अंग्रेजी में इनका समानार्थी शब्द है 'POT'। POT कह देने से 'घट' या 'घड़ा' का बोध हो जाता है, लेकिन 'कलश' का सही अर्थ संप्रेषित नहीं होगा। 'कलश' का अभिप्राय पानी से भरे और पूजा में उपयोग किए जाने वाले घड़े से है। अंग्रेजी भाषा समुदाय में 'पूजा' की संकल्पना नहीं है। इसीलिए 'कलश' को संप्रेषित करने वाला शब्द भी नहीं है। इसी तरह अंग्रेजी के 'स्नो' तथा 'आइस' के लिए हिंदी में 'बर्फ' शब्द का प्रयोग किया जाता है। जबकि अभिव्यक्ति के स्तर पर स्नो तथा आइस में भेद है। इसलिए अनुवाद में इस प्रकार की कठिनाई से पार पाने के प्रयास के रूप में अनुवाद के सीमित संदर्भ में अनुवाद के दो आयाम स्वीकार किए गए हैं। पहला आयाम 'पाठ' से संबंधित है तथा दूसरा उससे उत्पन्न होने वाले प्रभाव से संबंधित। कहने का अभिप्राय है कि जिस प्रकार मूल पाठ अपने पाठकों को प्रभावित करता है, उसी तरह अनूदित पाठ प्राभावित करे। वह लक्ष्य भाषा के पाठक को अनुवाद न लगे। उसे (लक्ष्य भाषी पाठक) वह अपनी भाषा की कृति लगे। उदाहरण के लिए 'सीपी और शंख' रामधारी सिंह दिनकर का विदेशी कविताओं के हिंदी अनुवाद का संग्रह है। लेकिन उनके मित्रों ने उस संग्रह की कविताएँ को पढ़ने के बाद उन्हें अनुवाद न मानकर दिनकर जी की मौलिक रचना माना। इसी काव्य संग्रह की कुछ कविताओं का रूसी में अनुवाद यह मानकर किया गया कि ये दिनकर जी की मौलिक रचनाएँ हैं। इसका कारण यह है कि उन्होंने इसमें जिन कविताओं का अनुवाद प्रस्तुत किया है, उसमें मूल के बिंब, प्रतीक, विचार या मुहावरों के

जोड़ के हिंदी की प्रकृति एवं संस्कृति के अनुरूप नए बिंब, प्रतीक, विचार तथा मुहावरे गढ़ दिए।

सीमित संदर्भ में अनुवाद को 'कथन के भाषांतरण' के रूप में देखा जाता है। अनुवाद का यह स्वरूप विशेषकर कविता के अनुवाद में देखने को मिलता है। "इस रूप में अनुवाद को पाठ मूलक माना गया है, जहाँ स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के पाठ के स्वरूप की चर्चा की जाती है।" यहाँ अनुवादक पाठ के बाहर नहीं जा सकता है। वह विभिन्न स्तरों पर मूलपाठ की भाषा का विश्लेषण करता है और उसके रूप को लक्ष्य पाठ में व्यंजित करता है। इस स्तर पर अनुवादक को वाक्य-विन्यास तथा अर्थ पर अपना ध्यान केंद्रीत करना होता है। अनुवाद के इस स्वरूप में मूल पाठ के 'कथ्य' या 'अर्थ' का अधिक महत्त्व होता है शैली पक्ष का नहीं। इसीलिए इसे अनुवाद का सीमित स्वरूप कहा जाता है।

अनुवाद का व्यापक संदर्भ प्रतीक सिद्धांत से जुड़ा हुआ है। डार्ट के अनुसार अनुवाद एक भाषा के सुसंबद्ध प्रतीकों से दूसरी भाषा के सुसंबद्ध प्रतीकों में अर्थ का अंतरण है। भाषा के सुसंबद्ध प्रतीकों से तात्पर्य किसी भाषा विशेष के शब्द है। भोलानाथ तिवारी भाषा को यादृ-ध्वनि प्रतीकों की व्यवस्था मानते हैं। ध्वनि प्रतीकों की यह यादृच्छिकता अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग दिखाई देती है। उदाहरण के लिए हिंदी का शब्द है 'बेटा'। इसके लिए मराठी में 'मुलगा', तेलुगु में 'कोडुकु' तथा अंग्रेजी में 'सन' (Son) शब्द का व्यवहार किया जाता है। वस्तुतः ये सभी शब्द मात्र प्रतीक हैं, जो उस भाषा-भाषी के लिए रुढ़ हो चुके हैं और समाज में इन्हें स्वीकार किया जा चुका है। इसी तरह किसी भी भाषा के विभिन्न शब्द किसी न किसी अर्थ के लिए रूढ़ बना दिए जाते हैं। जैसे-खाट, मेज, रोटी, तवा, लोटा आदि। इन शब्दों का स्वतंत्र रूप में कोई अस्तित्त्व नहीं होता है। ये वास्तविक वस्तुओं के स्थान पर व्यवहृत प्रतीकात्मक भाषिक अभिव्यक्तियाँ हैं। प्रतीक विज्ञान (Similogy) की संकल्पना प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक सस्यूर ने भाषाविज्ञान के एक अंग के रूप में की थी, जिसके अंतर्गत समाज द्वारा स्वीकृत प्रतीकों तथा उसके प्रकार्यात्मक संदर्भों का अध्ययन किया जाता है। उन्होंने इसे 'Similogy' (प्रतीक विज्ञान) कहा। 'Similogy' ग्रीक के 'Semion' से बना है। 'Semion' का अर्थ है, प्रतीक। "प्रतीक विज्ञान की मूल इकाई प्रतीक है। प्रसिद्ध प्रतीकशास्त्री पीयर्स के अनुसार 'प्रतीक वह वस्तु है, जो किसी के लिए किसी वस्तु के स्थान पर प्रयुक्त होती है'।" उदाहरण के लिए शब्द है 'कमल'। उच्चारित और लिखित रूप में

'कमल' वास्तव में 'कमल' नहीं है। वह 'कमल' नामक फूल का प्रतिनिधि शब्द है। यह ध्वनि प्रतीकों का यादृच्छिक क्रम मात्र है जिसका व्यवहार प्रयोगकर्ता वास्तविक 'कमल' के स्थान पर करता है। वस्तुतः यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। "प्रतीक की अवधारणा त्रिवर्गीय संकेत संबंधों पर आधारित है। ये संबंध तीन इकाइयों के आधार पर बनते हैं। इन तीन इकाइयों को क्रमशः संकेतित वस्तु (Referent), संकेतार्थ (Referenct) और संकेत प्रतीक(Sign) कहा जाता है।" इन इकाइयों को क्रमशः वास्तविक वस्तु, यादृच्छिक अर्थ तथा ध्वनि प्रतीक (शब्द) भी कहा जा सकता है।

अंतरण

रोमन याकोब्सन के अनुसार प्रतीक व्यवस्था के आधार पर किसी भाषिक पाठ के अनुवाद के तीन रूप हो सकते हैं –

(1) अन्वयांतर–अनुवाद के इस रूप में एक भाषा की प्रतीक व्यवस्था के द्वारा उद्घाटित अर्थ का उसी भाषा की अन्य प्रतीक व्यवस्था के रूप में अंतरण किया जाता है। इसे अंतःभाषिक अनुवाद भी कहा जाता है। प्रेमचंद ने अपनी हिंदी कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' (माधुरी में प्रकाशित, 1924) का उर्दू में 'शतरंज की बाजी' (जमाना में प्रकाशित, 1924) शीर्षक से अनुवाद किया था। उसमें उन्होंने केवल लिपि परिवर्तन ही नहीं किया था बल्कि शब्द के साथ-साथ वाक्य के चयन में भी परिवर्तन किया था। इससे रचना के वातारण के घनत्व और संवेदना के विवृति में अंतर हो गया। इसी तरह शेक्सपीयर के पद्य बद्ध नाटकों को चार्ल्स लैंब ने अंग्रेजी में ही गद्य में व्यक्त किया। इस प्रकार के अनुवाद को अन्वयांतर कहा जाता है।

(2) भाषांतर–अनुवाद के इस रूप में एक भाषा की प्रतीक व्यवस्था द्वारा उद्घाटित अर्थ का दूसरी भाषा की प्रतीक व्यवस्था द्वारा अंतरण किया जाता है। इसे अंतर भाषिक अनुवाद भी कहते हैं। वस्तुतः अनुवाद का वास्तविक क्षेत्र अंतर भाषिक अनुवाद ही है। इसके लिए अनुवादक को द्विभाषिक होना आवश्यक होता है। अनुवाद के रूप में अनूदित पाठ स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा के सर्जनात्मक संयोग से घटित पुनः सृजन बन जाता है। रामधारी सिंह 'दिनकर' द्वारा अंग्रेजी कविताओं का अनुवाद 'सीपी और शंख' इसका एक उदाहरण है।

(3) प्रतीकांतरण–इस रूप में मूल पाठ की प्रतीकात्मकता का अर्थ ग्रहण करके उसका अंतरण भाषेतर प्रतीक व्यवस्था द्वारा किया जाता है। अर्थात

किसी कहानी, कविता, गीत, उपन्यास का फिल्म के दृश्य बिंबों द्वारा प्रतीकांतर। इसे अंतर प्रतीकात्मक अनुवाद भी कहा जाता है। उदाहरण के लिए शरतचंद्र का देवदास, प्रेमचंद का गोदान, फणीश्वरनाथ रेणु का तीसरी कसम उपन्यास का और शेक्सपीयर के 'ओथेलो' नाटक का 'ओमकारा' नाम से फिल्मांकन अंतर प्रतीकात्मक अनुवाद है।

(घ) अनुवाद प्रक्रिया

अनुवाद को परकाया प्रवेश कहा जाता है। यह प्रवेश आसान नहीं होता है। अनुवादक को अनुवाद करते समय तीन भूमिकाएँ निभानी पड़ती हैं - (1) पाठक की भूमिका, (2) द्विभाषिक की भूमिका, (3) रचयिता की भूमिका। पाठक के रूप में अनुवादक मूल पाठ का पठन करता है और मूल लेखक क्या कहता है? उसका मंतव्य क्या है? और उसे कैसे कहता है? को समझने का प्रयास करता है। जब वह इसे समझता है तब एक द्विभाषिक की भूमिका अदा करते हुए मूल भाषा के पाठ में संप्रेषित अर्थ के लिए लक्ष्य भाषा में समानक की खोज करता है। अंततः मूल रचनाकार की तरह ही मूल का लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुरूप पुनः सृजन करता है। इस पूरे कार्य को करने के लिए किसी भी अनुवादक को पाँच चरणों से गुजरना पड़ता है। वे चरण हैं - (1) पाठ-पठन (2) पाठ-विश्लेषण (3) भाषांतरण (4) समायोजन तथा (5) पुनःरीक्षण/तुलना।

पुनःरीक्षा
पाठ-पठन
भाषांतरण
समायोजन
पाठ विश्लेषण

(1) पाठ-पठन

पाठ-पठन अनुवाद की प्रक्रिया का पहला चरण है। इसमें अनुवादक किए गए पाठ या चयनित पाठ का तटस्थ होकर पठन करता है। वह भाषिक अर्थ को देखते हुए उसके मूल भाव तथा उसमें अंतर्निहित विचार की गहराई तक जाने का प्रयास करता है। मूल पाठ के लेखक की भाव भूमि पर पहुँचना, उसकी मूल अनुभूति को अनुभव करना आसान नहीं होता है। इसीलिए पाठ-पठन की प्रक्रिया को बहुत जटिल माना जाता है।

(2) पाठ विश्लेषण

अनुवाद का दूसरा चरण है, पाठ विश्लेषण। अनुवाद करने की दृष्टि से ही मूल पाठ का विश्लेषण किया जाता है। इसमें कई उपचरण भी हो सकते हैं। जैसे–कहाँ वाक्य का, कहाँ प्रोक्ति का, या कहाँ वाक्य की छोटी इकाइयों (उपवाक्य, पदबंध, शब्द) का अनुवाद किया जाए। यह भी विचार किया जाता है कि कहाँ प्रोक्ति को तोड़कर दो-तीन वाक्य बनाएँ और कहाँ दो-तीन वाक्यों को मिलाकर प्रोक्ति बनाएँ। साथ ही मूल पाठ में प्रयुक्त अलंकार, प्रतीक, मुहावरे एवं लोकोक्तियों का भी विश्लेषण किया जाता है।

(3) भाषांतरण

भाषांतरण अनुवाद का तीसरा और महत्त्वपूर्ण चरण है। यहीं पर मूल की भाषा बदली जाती है। पाठ विश्लेषण में विश्लेषित इकाइयों का भाषांतरण किया जाता है। इसमें ध्यान रखा जाता है कि मूल की तरह सहज लगने वाले लक्ष्य भाषा के अलंकार, प्रतीक, मुहावरे तथा लोकोक्तियों का प्रयोग किया जाए। वाक्य का भाषांतरण लक्ष्य भाषा की भाषिक इकाइयों के अनुरूप करने का प्रयास किया जाता है।

(4) समायोजन

यह अनुवाद प्रक्रिया का चौथा चरण है। इसे पुनःगठन भी कहा जाता है। भाषांतरण के बाद अनूदित सामग्री को तटस्थता के साथ देखा जाता है। लक्ष्य भाषा के प्रवाह की दृष्टि से वाक्य, पदबंध, शब्द आदि को बदलने की जरूरत होने पर बदल दिया जाता है। कभी किसी शब्द को अतिरिक्त मानकर छोड़ दिया जाता है तो कभी आवश्यकतानुसार जोड़ा भी जाता है। उदा:–'Mohan was a good boy-' का हिंदी में अनुवाद करते समय '' का 'एक' के रूप में अनुवाद की आवश्यकता नहीं होती है। समायोजन में 'एक' निकाल दिया जाएगा क्योंकि हिंदी में 'मोहन अच्छा लड़का था' होगा। इसके विपरीत हिंदी से अंग्रेजी men अनुवाद करते समय '' जोड़ना पड़ेगा। यह अंग्रेजी भाषा की प्रकृति के अनुरूप होगा।

(5) तुलना

अनुवाद प्रक्रिया का अंतिम चरण है तुलना। इसे पुनःरीक्षण भी कहा जाता है। इसमें मूल और अनूदित पठ को साथ-साथ रखकर मिलान किया जाता है।

देखा जाता है कि मूल के अर्थ, विचार, भाव आदि अनुवाद में आ पाए हैं या नहीं। मूल में प्रयुक्त छंद, वक्य संरचना आदि से जो प्रभाव उत्पन्न होता है वैसा अनूदित पाठ के पठन से होता है या नहीं। अभिव्यक्ति पक्ष और प्रभाव पक्ष की तुलना करके अनुवाद को मूल के जितना हो सके उतना निकट लाने का प्रयास किया जाता है।

उपर्युक्त पाँच चरणों से गुजरकर अनुवाद को सभी प्रकार से अच्छा अनुवाद बनाने का प्रयास किया जाता है। जब अनुवाद अनुवाद न लगकर मौलिक रचना लगता है तो उसे अच्छा, उत्तम अनुवाद कहा जाता है। एक अच्छा अनुवादक अपनी अनूदित कृति को सभी प्रकार से मौलिक रूप प्रदान करने का प्रयास करता है।

अनुवाद की उपादेयता

'अनुवाद' को प्रायः कुछ विद्वान कला, शिल्प या विज्ञान मानते रहे हैं। भोलानाथ तिवारी के अनुसार यह अंशतः कला, अंशतः शिल्प और अंशतः विज्ञान है। आज अनुवाद को कला, शिल्प या विज्ञान मानने की बहस निरर्थक हो गई है। आधुनिक अनुवाद शास्त्र अनुवाद प्रक्रिया को एक वैज्ञानिक प्रक्रिया मानता है। अतः अनुवाद एक प्रकार का विज्ञान है। अनुवाद को केवल विज्ञान मान लें या फिर कला और शिल्प तब भी अनुवाद की उपदेयता अपने-आप सिद्ध हो जाती है। अनुवाद कला और शिल्प के रूप में एक ओर जहाँ लक्ष्य भाषा के पाठक के मनोरंजन का साधन बनता है वहीं दूसरी ओर मूल पाठ के लेखक के मन की अभिव्यक्ति को लक्ष्यभाषा के पाठक के समक्ष प्रस्तुत करने का उपयुक्त माध्यम भी है। इससे लक्ष्यभाषा के पाठक का मनोरंजन और ज्ञानवर्धन, दोनों हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त अनुवाद को विज्ञान मान लेने से वह मानव जीवन की प्रगति का एक संवाहक के रूप में स्वीकार्य हो जाता है। अतः अनुवाद कला, शिल्प और विज्ञान के रूप में मानव जाति की मानवीय संवेदना के विकास और ज्ञानवर्द्धन का महत्त्वपूर्ण आधार भी है।

अनुवादकों के अथक परिश्रम और दूरदृष्टि का ही परिणाम है कि अन्य भाषाओं में रचित ज्ञान-विज्ञान तथा चिंतन-मनन को जानने-समझने में आसानी हुई है। यदि मानवीय मनीषा ने अनुवादों का यह सिलसिला शुरु न किया होता तो आज संस्कृत, हिंदी तथा भारत की अन्य भाषाओं के महान साहित्यकारों की उत्कृष्ट कृतियाँ और विश्व की अन्य भाषाओं में प्रकाशित महान रचनाएँ

अपनी-अपनी भाषाओं के पाठकों तक संकुचित होकर रह जातीं. अत: वैश्विकरण के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि "अनुवाद आधुनिकीकरण, पश्चिमिकरण, औद्योगिकीकरण, जातीय विविधता और बहुसांस्कृतिक्ता के पाठ का निर्माण करनेवाला मुख्य घटक बन गया है क्योंकि अंतरराष्ट्रीय संचार में उसकी महती भूमिका है।"

सामान्यत: हिंदी को प्रयोग अथवा व्यवहार के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है -बोलचाल की हिंदी, साहित्य की हिंदी और प्रयोजनमूलक हिंदी, अनुवाद विशेषत: प्रयोजनमूलक हिंदी से संबंध रखता है। प्रयोजनमूलक हिंदी के संदर्भ में ही अनुवाद की आवश्यकता अत्यधिक है। भारत में आद्यौगिक क्रांति के साथ ही प्रयोजनमूलक हिंदी का भी विकास हुआ। इसके विकास में अनुवाद का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। "विदेशी भाषाओं अंग्रेजी, रूसी, जापानी आदि में प्राप्त ज्ञान-विज्ञान और सूचनाओं को हिंदी तथा भारत की अन्य भाषाओं मे लाने के क्रम में अनुवाद हमारे व्यापक व्यवसाय तंत्र का अभिन्न अंग बन गया है।" वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान को जब अनूदित किया जाता है तब लक्ष्य भाषा में मूल भाषा की तकनीकी शब्दावली का पर्याय प्रस्तुत किया जाता है। वह पर्याय सामान्यत: मूल संकल्पना को द्योतित करने वाला अनूदित रूप ही होता है। विविध ज्ञान-विज्ञान से संबंधित तकनीकी शब्दों का हिंदी में निर्माण अनुवाद के शाब्दिक अनुवाद और भावानुवाद दो प्रकारों के द्वारा भी किया जाता है। जैसे–शाब्दिक अनुवाद (हरित क्राँति, वामपंथी), भावानुवाद (obstetries प्रसूति, amorous bite विषकन्या).

ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों के साथ-साथ आज व्यापार या व्यावसायिक क्षेत्रों में भी अनुवाद की आवश्यकता दिन प्रति-दिन बढ़ती जा रही है। "व्यावसायिक जगत में भाषा के संदर्भ में जो कहावत प्रचलित है वह यह है कि उपभोक्ता अपनी भाषा में खरीदता है, किन्तु व्यापारी ग्राहक की भाषा में ही बेचता है।" आज जितनी भी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ हैं वे भले ही अपना कामकाज अपनी भाषाओं में अर्थात अंग्रेजी में करती हैं, लेकिन अपने ग्राहकों के साथ संप्रेषण के लिए ग्राहकों की भाषा का उपयोग करती हैं। भाषाविद अनुवाद को भिन्न भाषाओं के बीच का 'सेतु' मानते हैं। ये व्यावसायिक कंपनियाँ उपभोक्ताओं से संवाद स्थापित करके अपने उत्पाद की ओर आकर्षित करने और अपने उत्पाद को खरीदवाने के लिए इसी सेतु का सहारा लेती हैं। इन कंपनियों का काम विज्ञापनों के बिना संभव नहीं है। विज्ञापन मूलत: अंग्रेजी में बनाए जाते हैं और हिंदी सहित

भारत की अन्य भाषाओं में उनका अनुवाद किया जाता है। इस अनुवाद को एकदम सटीक की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। ताकि उपभोक्ता अपनी भाषा में विज्ञापन देख उत्पाद की ओर आकर्षित हो और उसका क्रय करे। सूचना प्रौद्योगिकी के विकास से पिचले कुछ वर्षों में संचार व्यवस्था के विशेष उपादानों की आश्चर्यजनक प्रगति हुई है। जैसे–रेडियो, दूरदर्शन, समाचार–पत्र, पत्रिकाएँ, इंटरनेट आदि। इन उपादानों के द्वारा सूचनाओं का प्रभाशाली संप्रेषण होने लगा है। जो कार्य कुछ वर्षों पहले असंभव जान पडता था वह आज संभव हो रहा है। इस महत्तर कार्य में अनुवाद और अनुवादकों की भूमिका प्रशंसनीय है। इसे देखते हुए कहा जा सकता है कि 'वसुदैव कुटुंबकम्' की भारतीय संकल्पना को मूर्त रूप मिलने लगा है। "आज संसार के किसी भी कोने में घटने वाली घटना की सूचना हमें अपनी भाषा में तुरंत मिल जाती है। इन सूचनाओं के संप्रेषण की प्रक्रिया पर ध्यान देने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसके मूल में अनुवाद कला है।" संचार व्यवस्था का कार्य पत्रकारिता पर निर्भर करता है और पत्रकारिता अपने जन्म से ही अनुवाद से जुड़ी हुई है। अनुवाद पत्रकारिता का एक विशिष्ट उपादान है। सूचनाएँ एवं समाचार विभिन्न विदेशी एजेंसियों से भी प्राप्त किए जाते हैं। बाद में अपेक्षित भाषा में उनका अनुवाद करके प्रकाशन–प्रसारण किया जाता है। प्रौद्योगिकी के इस युग में संप्रेषण व्यवस्था के क्षेत्र में अनुवाद का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। इसी कारण से अनुवाद की उपादेयता बहुमुखी और बहुआयामी बनाती दिखाई दे रही है।

विश्वव्यापारीकरण और आर्थिक उदारीकरण की नीति के कारण भारत में देशी–विदेशी चेनलो की एक बाढ़ सी आ गई है। सिनेमा बाजार से निकालकर अब घर में आ गया है। भारतीय दर्शक अपनी भाषा के आलावा विश्वभर की अन्य भाषाओं की फिल्में, समाचार, सीरियल, एनिमेशन कार्टून आदि बड़ी आसानी से घर बैठे देख पा रहा है। अनजाने, अनदेखे और अलग से लगानेवाले लोगों से रू–ब–रू होने का उसे सुअवसर मिल गया है। वह भी अपनी भाषा में. इस कार्य के लिए पहले से डब किए हुए संवादों की भाषा का अनुवाद अपेक्षित भाषा में। करके पुनः डबिंग की जाती है। केवल डबिंग के माध्यम से ही नहीं आजकल अन्य भाषा की फिल्मों के संवादों का अनुवाद अपेक्षित भाषा में साथ–साथ दिया जाता है। इसे सबटाइटल कहा जाता है। इन दोनों प्रयोजनों के लिए अनुवाद की आवश्यकता पड़ती है। मनोरंजन के इन आधुनिक लोकप्रिय माध्यमों में अनुवादकों की माँग बढ़ने के कारण भी अनुवाद की उपादेयता कों

विस्तार मिला है। अनुवाद की सहायता से भाषाई दीवार ढहाने में सफलता हासिल है।

अनुवाद का कार्य अनेक व्यावसायिक क्षेत्रों से जुड़ा हुआ है। अत: वह अपने आपमें एक व्यवसाय भी है। जहाँ अनुवाद निजी व्यवसायों के प्रचार-प्रसार के लिए उपयोगी है वहीं सरकारी तंत्र में भी इसकी उपादेयता कुछ कम नहीं है। राज्य और केंद्रीय सरकारी कार्यालयों तथा बैंकिंग क्षेत्र में अनुवादक अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। भारत सरकार की राजभाषा नीति के अंतर्गत आज कई युवा हिंदी अनुवादक, हिंदी अधिकारी आदि के रूप में व्यवसाय प्राप्त कर रहे हैं। इससे यह कहा जा सकता है कि "भारत जैसे–बहुभाषी देश में और आधुनिक युग की विस्तृत होती औद्योगिक और तकनीकी दिशाओं में अनुवाद सदैव केंद्र में रहेगा।"

अनुवाद और भाषाविज्ञान का अंत:संबंध

भूमिका

अनुवाद के लिए दो भाषाओं की आवश्यकता होती है जिसे स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा कहा जाता है। यह कार्य दो भिन्न भाषा-भाषियों के बीच विचार विनिमय के लिए एक सेतू या एक माध्यम के रूप में कार्य करता है। प्रसिद्ध भाषाविद डार्ट के अनुसार 'अनुवाद अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान की एक शाखा है जिसका संबंध विशेष रूप से अर्थांतरण की समस्या से है। यह अर्थांतरण एक भाषा के सुसंबद्ध प्रतीकों से दूसरी भाषा के सुसंबद्ध प्रतीकों में होता है।' अत: स्पष्ट है कि अनुवाद करते समय अनुवादक को भिन्न प्रकृति की दो भाषाओं की ध्वनि, रूप या पद, वाक्य, प्रयुक्ति, प्रोक्ति तथा अर्थ के संप्रेषण की विधि समझने के पहले, स्रोत भाषा के इन तत्त्वों को ग्रहण करना होता है। इसके बाद लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुरूप भाषांतरण करना होता है। अनुवाद की प्रक्रिया से गुजरते समय अनुवादक का कभी दोनों भाषाओं की समानताओं से तो कभी विषमताओं से साबका पड़ता है। ऐसी स्थिति में अनुवादक को भाषाविज्ञान की शाखाओं जैसे–तुलनात्मक भाषाविज्ञान, व्येतिरेकी भाषाविज्ञान, ध्वनि विज्ञान, रूप या पद विज्ञान, वाक्य विज्ञान तथा अर्थ विज्ञान के सिद्धांतों का अनुप्रयोग करता होता है।

(ख) अनुवाद प्रक्रिया में भाषाविज्ञान की भूमिका

सामान्यत: 'एक भाषा' (स्रोत भाषा) की किसी भी सामग्री को 'दूसरी भाषा' (लक्ष्य भाषा) में बोधगम्य बनाना अनुवाद कहलाता है। अनुवाद में लक्ष्य भाषा कभी एक से अधिक भी हो सकती है तो कभी यह आवश्यक नहीं कि स्रोत भाषा से ही अनुवाद किया जाए। इसे हम उदाहरण के द्वारा समझ सकते हैं - हरिवंश राय 'बच्चन' आल इंडिया रेडियो के लिए 10 और 'भाषा अपनी भाव पराए' नामक काव्य संग्रह के लिए भिन्न भाषाओं की 25 कविताओं का अनुवाद किया था। जबकि वे केवल हिंदी और अंग्रेजी भाषा ही जानते थे। इस संबध में वे बताते हैं कि "आप पूछ सकते हैं कि मैंने इन भाषाओं की कविताओं का अनुवाद प्रस्तुत करने का दु:साहस कैसे किया जब मैं उन्हें नहीं जानता।... जाहिर है कि ये कविताएँ अपनी-अपनी भाषा-लिपि में मेरे सामने रख दी जाती तो मैं उन्हें अनूदित नहीं कर सकता था।.... मूल कविता का अंग्रेजी अथवा हिंदी शब्दानुवाद दिया जाता था जिससे मुझे कविता के भाव-विचार को समझने में आसानी होती थी।" यहाँ अलग-अलग भाषाएँ मूल हैं तो अंग्रेजी और हिंदी लक्ष्य भाषाएँ हैं तथा हरिवंश राय 'बच्चन' ने जो अनुवाद किए वे सीधे मूल से नहीं थे। ऐसी स्थिति में अंग्रेजी और हिंदी स्रोत भाषाएँ कहलाएँगी जो कि असल में लक्ष्य भाषाएँ है। अनुवादक को अनुवाद की प्रक्रिया से गुजरते समय दो या दो से अधिक भाषाओं की प्रकृति से रू-ब-रू होना पड़ता है।

अनुवाद प्रक्रिया की मूल समस्या दो भिन्न भाषाओं के परस्पर संप्रेषण की होती है। यह परस्पर संप्रेषण दोनों भषाओं की संरचना के परिप्रेक्ष्य में ही संभव हो सकता है। इसे निम्नांकित आरेख द्वारा समझा जा सकता है :-

अनुवाद

भाषा-1

भाषा-2

लेखक-1 भाषा-1

पाठ-1

पाठक-1 भाषा-1

लेखक-2 भाषा-1

पाठ-2

पाठक-2 भाषा-1

अनुवाद

इस आरेख से अनुवाद प्रक्रिया के निम्नांकित तीन बिंदु प्रकट होते हैं--

1. अनुवाद भाषा-1 के पाठ-1 का भाषा-2 के पाठ-2 के रूप में किया जाता है।
2. अनुवाद का उद्देश्य भाषा-1 में लिखित पाठ-1 के लेखक-1 के मनोभावों, विचारों को भाषा-2 के पाठक-2 तक पहुँचाना है।
3. अनुवादक पाठ-1 का पाठक-1 बनकर पठन करता है और पाठक-2 के लिए पाठ-2 तैयार करने उद्देश्य से लेखक-2 बनता है।

अत: कहा जा सकता है कि अनुवादक सृष्टा भी है। उसे एक ओर जहाँ अनुवाद करते समय मूल लेखक की भांति रचना प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है, वहीं दूसरी ओर अन्य भाषा की प्रकृति को समझने के लिए उसके भाषावैज्ञानिक पक्षों की सहायता लेनी पड़ती है।

अनुवादक भाषा-1 और भाषा-2 का बोधन भाषिक संरचना, विषय तथा व्याकरण को ध्यान में रखकर करता है। वह पाठ-1 के रूप में प्रस्तुत सामग्री का विश्लेषण व्याकरण, शब्दार्थ तथा शब्दशक्ति के आधार पर करता है और पाठ-1 में व्यंजित अर्थ के समान अर्थाता अधिक से अधिक समान, निकटतम, सहज समतुल्य अर्थ को ही भाषा-2 के पाठ-2 में अंतरित करता है। यह अंतरण भाषा-2 की भाषिक संरचना को ध्यान में रखकर किया जाता है। ऐसा करते समय अनुवादक को अन्य भाषा की सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है। एक भाषा में व्यक्त विचारों, भावों, बिंबों और अर्थच्छवियों को दूसरी भाषा में अभिव्यक्त करना आसान नहीं होता है। "अनुवाद प्रक्रिया में जितनी समस्याएँ दो भाषाओं की विभिन्न सांस्कृतिक, राजनैतिक भौगोलिक और ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि के कारण उत्पन्न होती है उससे कई अधिक समस्याएँ दो भाषाओं के गठन की विशेषताओं के कारण उत्पन्न होती है।" अत: दोनों भाषाओं (स्रोत और लक्ष्य भाषा) के भाषिक गठन का सम्ययक ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक होता है। सभी भाषाएँ यादृच्छिक और वाचिक ध्वनि प्रतीकों की सुनिश्चित व्यवस्था होती है। किसी भी भाषा का प्रारंभिक रूप यादृच्छिक ही होता है। समुदाय की सर्व स्वीकृति मिल जाने पर वह एक व्यवस्था का रूप धारण कर लेती है। अनुभूति के स्तर पर सभी भाषाएँ समान होती हैं। उदाहरण के लिए 'तेलुगू' में छोटे बच्चों को लाड़ प्यार के कारण 'दोर बाबू' कहते हैं। 'दोर बाबू' का शाब्दिक अर्थ 'साहब का लड़का' होता है। यहाँ

साहब शब्द का प्रयोग 'गोरे' याने कि अंग्रेज के लिए किया गया है। हिंदी में उसका पर्यायवाची शब्द 'राजा बेटा' है। यहाँ स्पष्ट रूप से तेलुगू 'दोर बाबू' के समान ही 'राजा बेटा' अनुभूति प्रदान करता है, लेकिन 'दोर' और 'राजा' की अर्थ अभिव्यक्ति अलग है। ऐसी समस्याओं का समाधान भाषाविज्ञान की शाखाओं (प्रकारों तथा अंगों) के सिद्धांतों के अनुप्रयोग से किया जा सकता है।

(ग) अनुवाद प्रक्रिया में भाषाविज्ञान की शाखाओं का अनुप्रयोग

अनुवादक अनुवाद में भाषाविज्ञान की शाखाएँ – ध्वनि विज्ञान, रूप विज्ञान, वाक्य विज्ञान तथा अर्थ विज्ञान के अलावा तुलनात्मक भाषाविज्ञान, व्येतिरेकी भाषाविज्ञान तथा समाज भाषाविज्ञान के सिद्धांतों का अनुप्रयोग करता है। इसीलिए अनुवाद को अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान की एक शाखा माना गया है।

अनुवाद और ध्वनि विज्ञान

वस्तुत: भाषा ध्वनियों के समूह का नाम है। ध्वनियाँ ही भाषा के संप्रेषण को रूपायित करती हैं। किसी भी भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन ध्वनियों के अध्ययन से ही प्रारंभ होता है। भाषा में प्रयुक्त होने वाली ध्वनियों का अध्ययन करने वाले विज्ञान को ध्वनि विज्ञान कहते हैं। इसे भाषाविज्ञान की आधरभूत शाखा कहा जाता है। यह विज्ञान ध्वनि के उच्चारण, उसके भाषा विशेष में स्थान का विस्तृत अध्ययन करता है।

अनुवाद करते समय अनुवादक को कई बार व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का लिप्यंतरण करना होता है। इस स्थिति में अनुवादक को दोनों भाषाओं की ध्वनि संबंधी विशेषताओं की समानता की समस्या का सामना करना पड़ सकता है। दो भिन्न भाषाओं में कभी भी समान ध्वनियाँ उपलब्ध नहीं होती हैं। इसलिए अनुवादक को मूल ध्वनियों के स्थान पर अपनी भाषा की उनसे मिलती जुलती या निकटतम ध्वनियों का प्रयोग करना पड़ सकता है। इस प्रकार से मूल के व्यक्तिवाचक संज्ञा का लक्ष्य भाषा में ध्वनि परिवर्तन हो जाता है।

भारत की प्राय: सभी भाषाओं में यूनानी, जापानी, चीनी, तुर्की, अरबी, फारसी, अंग्रेजी, पुर्तगाली इत्यादि विदेशी भाषाओं के बहुत से शब्द ग्रहण किए गए हैं। हिंदी की शब्द संपदा में भी बहुत से विदेशी शब्द संग्रहित हो गए हैं। "अंग्रेजी में 'ट' और 'ड' ध्वनि हिंदी के 'ट', 'ड' के समान न तो मूर्धन्य या तालव्य है और न 'त', 'द' के समान दंत्य। अंग्रेजी और हिंदी वर्णों के उच्चारण में अंतर स्पष्ट रूप से दिखाई-सुनाई देता है। अत: उन अंग्रेजी शब्दों की ध्वनियाँ

जो हिंदी में आई हैं वे मूर्धन्य, तालव्य अथवा दंत्य में परिवर्तित हो गई हैं।" जैसे–'डेस्क' से 'डेक्स', 'आगस्ट' से 'अगस्त', 'सेप्टेम्बर' से 'सितंबर'। इसी तरह से 'लंडन' का उच्चारण हिंदी में 'लंदन', फ्रेंच क्मचवज का 'डिपो' हो गया है। इस प्रकार का उच्चारण हिंदी भाषा की ध्वनि प्रकृति के अनुकूल तथा ग्राह्य है।

विदेशी शब्दों का रूपांतरण करने के दो विधियाँ या माध्यम हैं दृ(1) अनुलेखन (Transcription), (2) लिप्यंतरण (Transliteration)। अनुलेखन में किसी भाषा के अक्षरों को दूसरी भाषा के अक्षरों में परिवर्तित किया जाता है। यह परिवर्तन लक्ष्य भाषा के उच्चारण के अनुकूल होता है। जैसे–

Aristotle – अरस्तू
Socrates – सुकरात
Academy – अकादमी
Glass – गिलास
Interim – अंतरिम इत्यादि।

लिप्यंतरण में विदेशी भाषा के शब्द की ध्वनि को अपनी भाषा की ध्वनि के अनुरूप परिवर्तित किया जता है। इसमें वर्णों को नहीं पूर्ण शब्द के ध्वनि को आधार बनाया जाता है। जैसे–' आर ए आई एल' की जगह 'रेल' कहा जाता है। कुच्छ अन्य उदाहरण दृष्टव्य हैं –

School (एस सी एच ओ ओ एल) – स्कूल
Bus (बी यू एस) – बस
Road (आर ओ ए डी) – रोड
Shirt (एस एच आई आर टी) – शर्ट
Pen (पी ई एन) – पेन इत्यादि।

अनुवादक को अपनी भाषा की ध्वनि के अनुरूप ही शब्दों का लिप्यंतरण करना चाहिए, अन्यथा भाषा की प्रकृति के प्रतिकूल होने पर ऐसे शब्द संबंधित भाषा में स्वीकार्य नहीं होंगे, बल्कि हास्यास्पद भी मालूम पड़ेंगे। कुछ विशिष्ट दशा में सभी शब्दों का लिप्यंतरण करके भाषा में प्रचलित शब्दों को अपनाया जाता है। उदाहरण के लिए ग्रीक 'Alexander' के लिए संस्कृत में 'अलक्षेंद' और हिंदी में 'सिकंदर' शब्द प्रचलित है। इसी के अनुसरण में अंग्रेजी के 'Alexander the Great' को हिंदी में 'सिकंदर महान' का प्रयोग किया जाता है। लिप्यंतरण में अनुवाद की भाषा में शब्द को पूरी तरह ध्वनि के अनुसार ग्रहण

किया जाता है। इसके अलावा यदि किसी शब्द के एक से अधिक उच्चारण लक्ष्य भाषा में प्रचलित हों तो सर्वाधिक प्रचलित शब्द का प्रयोग करना चाहिए या फिर लक्ष्य भाषा की ध्वनि के जो सर्वाधिक अनुकूल हो उसे अपनाना चाहिए। अत: स्पष्ट है कि अनुवाद में ध्वनि विज्ञान का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है और अनुवादक के लिए ध्वनि विज्ञान का ज्ञान रखना अत्यंत आवश्यक है।

अनुवाद और रूप या पद विज्ञान

भाषा की आधारभूत इकाई वाक्य है और जिस तरह 'प्रोक्ति' के भीतर 'वाक्य' होता है उसी तरह 'वाक्य' के भीतर रूप मिले होते हैं। रूपों के संयोजन से ही वाक्य बनते हैं। जैसे–'राम ने रावण को बाणों से मारा' वाक्य में चार रूप हैं – 'राम ने' कर्ता कारक रूप, 'रावण को' कर्म कारक रूप, 'बाणों से' करण कारक रूप तथा 'मारा' 'मर' धातु का भूतकालिक रूप। सामान्यत: 'रूप' शब्द ही होते हैं। शब्द जब वाक्य में कारक चिह्नों के साथ प्रयुक्त होते हैं तो पद कहलाते हैं। किसी भाषा के वाक्य में प्रयुक्त ऐसे रूपों या पदों का अध्ययन भाषाविज्ञान की जिस शाखा के अंतर्गत किया जाता है उसे रूप या पद विज्ञान कहा जाता है। रूप विज्ञान में शब्दों की संरचना, अक्षरों से रूप निर्माण, शब्दों से पद बनने आदि की विधि का अध्ययन किया जाता है। अनुवाद में स्रोत भाषा शब्दों के स्थान पर लक्ष्य भाषा के समान अर्थवाले शब्दों को रखा जाता है। अतएव स्रोत भाषा एवं लक्ष्य भाषा दोनों ही भाषाओं की रूप रचना की जानकारी अनुवादक के लिए अपरिहार्य है। लक्ष्य भाषा के भाषायी ढाँचे के अनुरूप होने वाला अनुवाद अच्छा माना जाता है।

अनुवाद के समय स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की व्याकरण संबंधी विशेषताओं से अवगत होना आवश्यक होता है। किन्हीं दो भिन्न भाषा परिवारों की भाषाओं का व्याकरण एक समान नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए अंग्रेजी का वाक्य है – 'I employed a worker' का हिंदी में अनुवाद करते हैं तो 'मैंने मजदूर/मजदूरनी/श्रमिक को काम पर लगाया/लगाया है' जैसे–वाक्य बनते हैं। अनवाद के लिए कुछ अन्य अनुपूरक सूचनाओं की आवश्यकता होती है। जैसे–WORKER स्त्री है या पुरुष, यह कार्य पूर्ण हो गया था या अपूर्ण था। इससे ज्ञात होता है कि भिन्न भाषाओं के व्याकरण की विशेषताएं भी भिन्न होती हैं और किसी भी भाषा के दो पक्ष होते हैं – 1) उसकी बनावट और संरचना तथा 2) उसका प्रयोजन और प्रकार्य। 'भाषा की बनावट की दृष्टि से हम उसकी

संरचनात्मक व्यवस्था की बात करते हैं जबकि प्रयोजन के संदर्भ में हम यह बताते हैं कि इसके द्वारा किसी भाषाई समुदाय के व्यक्ति आपस में विचार-विनिमय करते हैं। बनावट और संरचना के संदर्भ का केंद्र उस भाषा का व्याकरण होता है और उसके प्रयोजन के संदर्भ का संप्रेषण।' स्पष्ट है कि अनुवाद में संप्रेषण के लिए दोनों भाषाओं के व्याकरण का ध्यान रखना आवश्यक है। इसे छोड़कर किया गया अनुवाद हास्यास्पद हो जाता है। उदा - 'राम ने मरा को रावण' इस वाक्य में विभक्ति चिह्नों सहित पदों के क्रम बिगड़े हुए हैं। इससे कोई अर्थ संप्रेषित नहीं हो रहा है। इस वाक्य में पदों का सही क्रम होगा -' राम ने रावण को मरा'। कहने का अभिप्राय है कि भाषा में संप्रेषण के लिए उसकी व्याकरणिक प्रकृति के मूल तत्त्व अर्थात शब्द या पद की व्यवस्था का ज्ञान अपरिहार्य है।

प्राय: सभी भाषाओं में संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, लिंग, वचन, वाच्य, काल आदि व्याकरणिक तत्त्व होते हैं। भिन्न भाषा के शब्द रूप भी भिन्न होते हैं और उनका प्रयोग भी भिन्न होता है। इसी कारण अनुवाद में व्याकरण संबंधी समस्या उत्पन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए यहाँ कुछ व्याकरणिक तत्त्वों पर चर्चा की जा रही है :-

लिंग - हिंदी में दो लिंग हैं - स्त्रीलिंग और पुल्लिंग तथा अंग्रेजी में चार - Feminine, Masculine, Common और Neutral । अत: अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद में अंग्रजी के Common और Neutral को हिंदी के किस लिंग की कोटी में रखा जाएगा। इसे समझना जरूरी है। लिंग का भाव व्यक्त करने के लिए भाषा में दो पद्धतियाँ अपनाई जाती हैं - 1) हिंदी में प्रत्यय जोड़कर जैसे-घोड़ा - घोड़ी, बकरा - बकरी। अंगरी में भी prince & princess, lion & lioness आदि 2) स्वतन्त्र शब्द जोड़कर जैसे मादा मोर - नर मोर, मादा कोयल - नर कोयल। अंग्रेजी में he-goat & she goat। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी और हिंदी में अलग-अलग शब्दों से भी लिंग का बोध किया जाता है और कभी अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करते समय सामान शब्द में प्रत्यय जोड़कर या कभी अलग-अलग शब्द से लिंग भेद को यक्त किया जाता है। जैसे-boy & girl, horse & hare, mother & father, brother & sister शब्दों के लिए हिंदी में लड़का -लड़की, घोड़ा - घोडी, माता - पिता, भाई - बहन आदि। यह भी देखा गया है कि अंग्रेजी में एक ही शब्द से दोनों लिंगों का बोधन होता है। लेकिन हिंदी में उनके अनुवाद करते समय भिन्न शब्दों का प्रयोग करना अनिवार्य

हो जाता है। जैसे–Chairman, Member, Teacher आदि शब्दों के लिए हिंदी में पुल्लिंग में अध्यक्ष, सदस्य, अध्यापक होता है तो स्त्री लिंग में अध्यक्षा, सदस्या, और अध्यापिका होगा।

वचन – सामान्यत: सभी भाषाओं में दो ही वचन रहते हैं, लेकिन कुछ भाषाओं में द्विवचन, त्रिवचन भी होते हैं। हिंदी में बहुवचन के भावों को व्यक्त करने के लिए प्राय: एक वचन में ओं, यों, एँ, गण, वाले प्रत्यय लगाया जाता है जबकि अंग्रेजी में 's' या 'es'। उदा – सदस्य – member, सदस्यों या सदस्यगण – members, दुकानवाला – shopkeeper, दुकानवाले – shop-keepers, कविता–poem, कविताएँ – poems आदि। इसी तरह वाक्य में क्रिया रूपों के परिवर्तन से भी काल और वचन का बोध हो जाता है। उदा – अंग्रेजी के 'पे' और बहुवचन में 'तम' और 'were' हो जाते हैं। उसी तरह हिंदी में भी 'है' तथा 'था' बहुवचन में 'हैं' तथा 'थे' हो जाते हैं। कभी–कभी हिंदी में आदर व्यक्त करने के लिए भी एकवचन के साथ बहुवचन रूप का प्रयोग किया जाता है। जैसे–'Your Father has come' के लिए हिंदी में 'तुम्हारे/आपके पिताजी आए हैं'।

काल – हिंदी में काल के तीन भेद हैं – वर्तमान, भूत और भविष्य। क्रिया रूपों को जोड़कर काल के भेद और उपभेद को प्रकट किया जाता है। हिंदी के काल के साथ कार्य के स्वरूप को भी व्यक्त किया जाता है। जैसे–'वह भागा' और 'वह भगा रहा था'। पहले पद में कार्य होने के समय का बोध नहीं होता है। दूसरे पद में यह संकेत मिलता है कि कार्य कुछ समय से हो रहा था। कार्य के स्वरूप (Aspect) संबंधी समस्याओं के कारण उत्पन्न हुई अनुवाद की जटिलताओं को सुलझाना कभी–कभी बहुत कठिन हो जाता है। यह कठिनाई इसलिए होती है कि विश्व की किन्हीं दो भाषाओं में सामान स्थितियों में काल समान रूप में प्रस्तुत नहीं किए जा सकते हैं। उदा – 'I will hit him, when I see him' इसमें 'when' शब्द भले ही भविष्य में होने वाले कार्य को इंगित करता है, किन्तु उसका यह रूप वर्तनाम काल का है। ऐसे रूप तर्कसंगत नहीं होते लेकिन ये भाषाई विशेषताओं को प्रकट करते हैं।

आज का युग **वैज्ञानिक युग** है और इस युग में नित नए आविष्कार, नई घटनाएं, नए विचार, नई परंओअराएँ, नई वस्तुएं, समाज में आते रहती हैं। जिसके के लिए प्राय: नए शब्दों को बनाया जाता है। इसलिए कभी–कभी अनुवादक को शब्दोकोशों या अन्य स्रोतों से जब कोई सहायता नहीं मिलती

है तब उसे नए शब्द गढ़ने पड़ते हैं। ऐसी स्थिति में रूप विज्ञान अनुवादक की सहायता करता है।

अत: कहा जा सकता है कि रूप विज्ञान के सिद्धांतों का अनुप्रयोग करके अनुवाद के लिए दो भिन्न भाषाओं की व्याकरणिक असमानताओं की समस्या का समाधान किया जा सकता है।

(इ) अनुवाद और वाक्य विज्ञान

वाक्य सार्थक शब्द का सुव्यवस्थित समूह होता है। यह भाव को व्यक्त करने की दृष्टि से अपने-आप में पूर्ण होता है। भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने वाक्य को अलग-अलग ढंग से परिभाषित किया है। अत: उनके अनुसार पूर्ण अर्थ की प्रतीती कराने वाले एक शब्द या एकाधिक शब्दों का समूह वाक्य है। वाक्यार्थ की प्रतीती के लिए उसमें प्रयुक्त शब्दों के सबंधों को जानना भी बेहद जरूरी होता है। शब्दों के वाक्यगत संबंधों को संरचनात्मक अर्थ भी कहा जाता है। वाक्य संरचना से अभिप्राय है शब्दों को वाक्य में इस तरह राखना कि उनके संबंध स्पष्ट रूप से सूचित हों। प्राय: दो भिन्न भाषाओं की वाक्य रचना अथवा वाक्य में शब्दों का क्रम एक सा नहीं होता। उदाहरण के लिए सामान्यत: हिंदी की वाक्य संरचना का क्रम - कर्ता, कर्म और क्रिया है जबकि अंग्रेजी की वाक्य संरचना का क्रम - कर्ता, क्रिया और कर्म। जैसे–'राम ने (कर्ता) रावण को (कर्म) मारा (क्रिया)' यही वाक्य जब अंग्रेजी में लिखा जाता है तो 'Ram (कर्ता) killed(क्रिया) Ravana (कर्म)'।

वाक्य विज्ञान के अंतर्गत वाक्य के इसी प्रकार के गठन या पदों की सुनिश्चित व्यवस्था से वाक्य निर्माण की प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है और अनुवाद में इस विज्ञान की सहायता से दो भिन्न भाषाओं की संरचना, उसके व्यावहारिक, सांस्कृतिक पक्षों को समझने में आसानी होती है। अनुवाद करते समय स्रोत भाषा की वाक्य संरचना को लक्ष्य भाषा की वाक्य संरचना में ढाला जाता है। अत: किसी भाषा से अनुवाद करते समय शब्द के स्थान पर शब्द रखा जाएगा तो वह अनुवाद न होकर अव्यवस्थावाद मात्र हो जाएगा। उदा - अंग्रेजी वाक्य - 'I drink water' का अनुवाद हिंदी में 'मैं पीता पानी' नहीं बल्कि 'मैं पानी पीता हूँ' होगा। इसी तरह हिंदी और तेलुगू की वाक्य रचना का क्रम मुख्य रूप से परोक्ष कथन में एक दम उल्टा होता है। उदा - 'मैं आता हूँ, कहकर उसने कहा' हिंदी में इसी वाक्य का रूप 'उसने कहा कि मैं आऊँगा' होगा। हिंदी

में अप्रत्यक्ष कथन का चलन नहीं है। इसकी जानकारी के आभाव में अनुवादक स्रोत भाषा की छाया को लक्ष्य भाषा की वाक्य संरचना में ले आता है। ऐसा प्रायः कभी जल्द बाजी में भी हो सकता है। परिणामतः ऐसे वाक्य लक्ष्य भाषा की वाक्य रचना के प्रतिकूल होने के कारण दुरूह और अटपटे लगते हैं। अनुवाद करते समय इस बात का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है। उदा- 'Ram said that he was going to Agra' अंग्रेजी के इस परोक्ष कथन का हिंदी में (1) 'राम ने कहा कि मैं आगरा जा रहा हूँ', (2) 'राम ने कहा था कि वह आगरा जा रहा था।' दो अनुवाद हो सकते हैं। इनमें से वाक्य (1) हिंदी की प्रकृति के अनुसार ठीक है मगर वाक्य (2) अंग्रेजी की छाया से प्रभावित है।

भाषा में सर्वनामों का बहुत महत्त्व होता है। इनका अन्य शब्दों के स्थान पर प्रयोग किया जाता है। सर्वनामों के बारे में दो बातें प्रमुख होती हैं - (1) वे शब्द जिनका स्थान वे लेते हैं तथा (2) वे वाक्य रचनाएँ जिनमें उनको बैठाया जाता है। जिस शब्द के स्थान पर सर्वनाम रखा जा सकता है उसे सर्वनाम का वर्ग-अर्थ (Class Meaning) कहा जा सकता है। जिन वाक्य रचनाओं में इन शब्दों के स्थान पर किसी सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है उन्हें स्थानापन (Substitute Type) कह सकते हैं। अन्य प्रकार के शब्दों के समान सर्वनामों का भी एक अर्थ होता है। उदा - अंग्रेजी में 'she' शब्द केवल 'स्त्री' वाचक के लिए ही प्रयुक्त नहीं होता है अपितु वह किसी देश, मोटर, जलयान के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है। अतः अनुवादक को यह जानकारी रखना बेहद जरूरी होता है कि विभिन्न भाषाओं में सर्वनामों का प्रयोग विभिन्न अर्थों के संप्रेषण के लिए भी होता है। अंग्रेजी और ग्रीक भाषाओं में एक बार संज्ञा के प्रयोग के बाद सामान्यतः सर्वनामों का प्रयोग किया जाता है। ऐसी स्थिति में अंग्रेजी भाषा का अनुसरण कर अनुवाद करना गलत होगा। बल्कि सही प्रयोग के अनुसार वाक्य रचना के लिए सर्वनामों को संज्ञा में निश्चय ही बदला जा सकता है।

अनुवाद में वाक्य का विशिष्ट आशय ग्रहण कर सामाजिक संदर्भों को ध्यान में रखते हुए भाषिक संरचना के अनुसार अंतरण करना चाहिए। उदा-

(i) A boy has come - लड़का आया है।

(ii) Father has come - पिताजी आए हैं।

इन दोनों वाक्यों में संज्ञा पद अलग हैं और उस अनुसार हिंदी क्रिया पद में भी परिवर्तन हो गया है जबकि अंग्रेजी क्रिया पद में कोई परिवर्तन नहीं है।

अंग्रेजी वाक्य (भाषा) में हो सकता है आदर का भाव व्यक्त करना आवश्यक न हो लेकिन हिंदी में आवश्यक है।

वाक्य विज्ञान के अंतर्गत पदबंध और उपवाक्यों का विशेष महत्त्व होता है। हर भाषा की अपनी वाक्य संरचना होती है, जो उस भाषा की प्रकृति के अनुकूल होती है। अनुवाद करते समय कर्ता कर्म के साथ विभक्तियों कारकों के प्रयोग पर भी ध्यान देना अनिवार्य है। उदा - अंग्रेजी में 'In' से प्रारंभ होने वाली अनेक फ्रेज (पदबंध) हैं जिनका अनुवाद करने पर यह आवश्यक नहीं कि हमेशा 'में' रहे। अनुवाद में 'में' के स्थान पर कहीं 'से', कहीं 'पर' और कहीं 'को' हो सकता है और कहीं पर 'In' छोड़ दिया जता है। जैसे–

(i) 'में' - In a city - नगर में

(ii) 'पर' - I met him in his house - मैं उससे घर पर मिला

(iii) 'से' -I reached office in time - समय से दफ्तर पहुँचा

(iv) 'को' - In the evening - शाम को

In order to - के लिए, In presence of & समक्ष, In addition to - के अतिरिक्त। यहाँ वाक्य (अ) में 'In' को छोड़ दिया गया है। इसी तरह के परिवर्तन 'to', 'at' आदि से युक्त अंग्रेजी वाक्यों के हिंदी अनुवादों में भी हो सकते हैं। विशेषण उपवाक्य का अनुवाद हिंदी की प्रकृति के अनुकूल होना चाहिए। जैसे–The horse that I selected won the race

जो घोड़ा मैंने चुना, वह दौड़ में जीत गया।

There is a person whose age you could never guess

वहाँ एक ऐसा व्यक्ति रहता है जिसकी उम्र का तुम अंदाज नहीं लगा सकते। अनुवाद में अंग्रेजी के लंबे और अटपटे वाक्यों को दो वाक्यों/उपवाक्यों में तोड़ा जा सकता है। जैसे–एक वाक्य - Please note that you have been allotted code no3.. Which should be quoted by you in all future correspondence with us also on all proposal papers- दो वाक्य कृपया ध्यान रखें कि आपको कोड सं..... नियत की गई है। भविष्य में हमारे साथ होने वाले पत्र व्यवहार में तथा समस्त प्रस्ताव पत्रों में हमेशा इसका उल्लेख करें। अंग्रेजी वाक्यों में कभी–कभी कुछ सुपर फ्लुअस (फालतू) वाक्यांशों का प्रयोग किया जाता है। हिंदी में अनुवाद करते समय उन्हें छोड़ा भी जा सकता है। ऐसे वक्यों का प्रयोग किसी विशेष भावों की अभिव्यक्ति के लिए किया जाता है। भाषाविज्ञान में ऐसे वाक्यों को 'अनावश्यक' कहा जाता है। जैसे–

I am afraid – संकोच तथा हिचकिचाहट के लिए

I wonder – आश्चर्ययुक्त संदेह के लिए

For favour of necessary action – आवश्यक कार्रवाई के लिए इत्यादि। अतः अनुवाद में मूल भाषा की अर्थ छवियों को लक्ष्य भाषा में अंतरित करते समय लक्ष्य भाषा की वाक्य संरचना के अनुरूप लिखना ही अभिप्रेत है अन्यथा अर्थ का अनर्थ होने की अधिक संभावना बन जाती है।

इस तरह हम देखते हैं कि अनुवाद के लिए अनुवादक को वाक्य विज्ञान की सहायता लेनी पड़ती है। इससे उसे मूल भाषा के साथ-साथ लक्ष्य भाषा की वाक्य संरचना समझने में आसानी हो जाती है।

(ई) अनुवाद और अर्थ विज्ञान

अर्थ विज्ञान के अंतर्गत भाषा के अर्थ पक्ष का अध्ययन – विश्लेषण किया जाता है। आमुख शब्द का अर्थ क्या है, अर्थ का निर्धारण कैसे होता है, वह कितने प्रकार का होता है, अर्थ में परिवर्तन के कारण और उनकी दिशाएँ, समानार्थता, विलोमार्थता तथा बहुअर्थता आदि का अध्ययन किया जाता है। अनुवाद का मुख्य उद्देश्य अर्थ संप्रेषण का ही होता है। अनुवाद में शब्द और उनके रूप बदले जाते हैं। इस बदलाव के दौरान अर्थ को सुरक्षित रखने का आग्रह प्रायः सभी भाषाविदों तथा अनुवादकों ने किया है। यहाँ तक कहा गया है कि अनुवाद पर काया प्रवेश है। अर्थात यह एक भाषा के अर्थ (आत्मा) का दूसरी भाषा (पर काया) में प्रवेश। अनुवाद में अर्थ का आशय होता है – अभिव्यक्ति, भावना और विचार। इनकी ओर ध्यान दिया जाएगा लेकिन इन सब में व्यावहारिक रूप में 'अर्थ' ही प्रधान शब्द है। इसलिए यह कहना अधिक उपयुक्त है कि अनुवाद में ध्यान अर्थ पर केंद्रित रहता है। अनुवाद में अर्थ को बदला नहीं जा सकता।

अनुवाद करते समय अनुवादक शब्दार्थ के लिए शब्दकोश का उपयोग करता है और मूल के शब्दार्थ के स्थान पर लक्ष्य भाषा में समानार्थक शब्द को रख देता है। लेकिन उसके समक्ष समस्या तब आती है जब उसे भाषा में विशिष्ट प्रयोग के शब्दों का सामना करना पड़ता है। हर भाषा के अपने-अपने विशिष्ट प्रयोग होते हैं जिनके लिए शब्दकोशों में पर्याय प्रायः नहीं मिलते हैं। अर्थता प्रत्येक भाषा में अनेक ऐसे शब्द होते हैं जिनको प्रायः पर्याय समझा जाता है। व्यवहार में इन सभी पर्यायों में निकटता तो होती है, पर अर्थ की समानता कम

दिखाई देती है। जैसे–कोमल, मृदुल, मुलायम, नाजुक, नर्म, सुकुमार सभी का भाव एक समान होते हुए भी प्रयोग से अर्थ में भिन्नता आ जाती है। अनुवाद में स्रोत भाषा के शब्दों आदि के लिए लक्ष्य भाषा में समानार्थ को व्यक्त करने वाले शब्दों, वाक्यों आदि का उपयुक्त चयन बहुत महत्त्वपूर्ण है। सर्जनात्मक अनुवाद के लिए तो यह अत्यंत आवश्यक है। "सर्जनात्मक भाषा में प्रायः एक प्रसंग में एक ही शब्द या वाक्यादि उपयुक्त होता है। ऐसा न होने पर सर्जनात्मक सौंदर्य को क्षति पहुँचती है।" साथ ही अर्थ की सहजता और सटीकता भी बाधित हो सकती है। अतः अनुवादक लक्ष्य भाषा में अर्थ के अनुसार उपयुक्त शब्द–वाक्य का चयन करके इस समस्या से बच सकता है। उदाहरण के लिए शब्द के स्तर पर अर्थ की दृष्टि से उपयुक्त शब्द का चयन –

रेखांकित अंग्रेजी शब्द के लिए
हिंदी पर्याय
उपयुक्त शब्द
(i) That is a very serious conclusion
गंभीर, महत्त्वपूर्ण
महत्त्वपूर्ण
(ii) Under the protection of stars
सुरक्षा, शरण, बचाव
छाँव
(iii) you are cold hearted
सर्ददिल, ठंडादिल, हृदयहीन, पत्थर दिल
हृदयहीन

इसी तरह वाक्य के स्तर पर भी अर्थ की दृष्टि से उपयुक्त वाक्य के चयन की समस्या होती है। जैसे–

अंग्रेजी वाक्य के लिए
अनूदित वाक्य
उपयुक्त वाक्य
(i) You are rather transparent
(अ) तुम तो बल्कि पारदर्शी हो
(आ) तुम्हारे दिल की बातें तो सहज ही सामने आ जाती हैं
(इ) तुम साफ पकड़े जाते हो

तुम साफ पकड़े जाते हो

(ii) I am feeling chilly

((अ) मुझे बड़ी ठंड लग रही है

(आ) मुझे बहुत सर्दी लग रही है

(इ) मैं ठंड से जमा जा रहा/रही हूँ

(ई) मेरी तो कुल्फी जमी जा रही है

मेरी तो कुल्फी जमी जा रही है

भाषाओं में कुछ शब्द सामजिक परिवेश, सांसकृतिक संदर्भ तथा सांस्कारिक अनुष्ठानों से संबंधित होते हैं। इनके अर्थ भिन्न भाषा-भाषियों के लिए समझपाना कठिन होता है। भाषाओं में मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया जाता है। ये भी किसी भाषा के लोक सांस्कृतिक पहलुओं को उजाकर करते हैं। इसीलिए अनुवाद में संबंधित भाषा से संबंद्ध सामजिक परिवेश, सांसकृतिक संदर्भ तथा सांस्कारिक अनुष्ठानों से संबंधित शब्दों का तथा मुहावरों या लोकोक्तियों का ही प्रयोग किया जाना चाहिए। जैसे–अंग्रेजी का एक शब्द है - 'Gospel जतनजी' इस के लिए हिंदी में अनुवाद 'गोस्पेल में वर्णित सत्य' कहने से वह भाव या अर्थ व्यक्त नहीं होता जो मूल में हो रहा है। इसके लिए तो 'वेद वाक्य' का प्रयोग उपयुक्त होगा। 'वेद' भारत के हर व्यक्ति का परिचित शब्द है। इससे 'गोस्पेल' के अर्थ को आसानी से समझा जा सकता है। मुहावरे - आँख का तारा होना, नौ दो ग्यारह होना, दिन पहाड़ होना आदि के लिए अंग्रेजी में क्रमशः To be an apple of one's eye, To show clean pair of heels, To be hang heavy upon का प्रयोग किया जाता है। इसी तरह लोकोक्तियों के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं - जो गरजते हैं वे बरसते नहीं - Barking dogs seldom biteए नाच न जाने आँगन टेड़ा -A bad workman quarrels with his tools इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि दोनों भाषाओं के मुहावरों और लोकोक्तियों के शाब्दिक अर्थ में अंतर है, लेकिन भावार्थ की निकटता है।

भाषाओं में कलात्मक और असरदार अभिव्यक्ति के लिए मुहावरों और लोकोक्तियों के साथ-साथ 'सादृश्य' का भी प्रयोग किया जाता है। इससे अभिव्यक्ति में अधिक कलात्मकता और बिंबात्मकता उत्पन्न हो जाती है। उदा - अंग्रेजी में कहते हैं - 'as black as jet' इस के लिए हिंदी में 'जेट जैसा काला' 'जेट काला' 'बहुत काला' कहने से वह प्रभाव उत्पन्न नहीं होता जो मूल

से होता है। इसके समान हिंदी में 'कोयले जैसा काला' या 'कौए जैसा काला' का प्रयोग अधिक उपयुक्त होगा।

रिश्ते-नातों की शब्दावली में भिन्नता - जैसे–हिंदी के मामा, ससुर, फूफा आदि शब्दों के लिए अंग्रेजी में father & in & law का, uncle का प्रयोग किया जाता है। विभिन्न विषयों तथा कार्य क्षेत्रों की प्रयुक्ति में भी भिन्नता - जैसे–'प्लेन' शब्द का संदर्भानुसार अर्थ बदलता रहता है। जैसे–पत्राकारिता के क्षेत्र में 'अंक' चिकित्सा के क्षेत्र में 'बच्चे' प्रशानिक क्षेत्र में 'जारी करना'। हिंदी में अनुवाद करते समय ऐसे बदलाव को ध्यान में रखना आवश्यक है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अर्थ विज्ञान की सहायता से अनुवादक दो भिन्न भाषाओं में प्रयुक्त होने वाले समान अर्थ को उद्घाटित करने वाले शब्दों का चयन करके अर्थ को एक भाषा से दूसरी भाषा में ले जाने में सक्षम बन सकता है।

(घ) निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि अनुवाद का कार्य एक भाषा की आत्मा (अर्थ) को दूसरी भाषा की काया में प्रवेश करने के समान है। अनुवाद दो भाषाओं या दो से अधिक भाषाओं में किया जाता है। इसलिए भाषा भिन्नता के साथ ही भाषा विशेष की सामाजिक, सांस्कृति और शैलीगत विशेषताओं को समझना अनिवार्य होता है। एक अच्छा अनुवादक इन सभी पहलुओं पर ध्यान देता है और अपनी कार्ययित्री एवं भावयित्री प्रतिभा का उपयोग करके सफल अनुवाद करने का प्रयास करता है। इसी कारण विद्वानों ने अनुवाक कार्य को पुन: सृजन और अनुवादक को सृजनकर्ता माना है। अनुवाद की प्रक्रिया से गुजरते समय अनुवादक भाषाविज्ञान की शाखाओं की सहायता लेता है। इन शाखाओं के अंतर्गत भाषा के अध्ययन-विश्लेषण के लिए एक कालिक भाषाविज्ञान, ऐतिहासिक भाषाविज्ञान, समाज भाषाविज्ञान, तुलनात्मक और व्येतिरेकी भाषाविज्ञान आदि के सिद्धांतों का अनुप्रयोग किया जाता है। अत: स्पष्ट है कि अनुवाद में भी इन शाखाओं के सिद्धांतों का अनुप्रयोग करते समय भाषाविज्ञान की अन्य शाखाओं का उसमें समावेश हो जाता है। अनुवादक इन शाखाओं के सिद्धांतो से कभी नए शब्द गढ़ता है, कभी उपयुक्त शब्दार्थ-वाक्य का चयन करके लक्ष्य भाषा में मूल भावार्थ को प्रतिष्ठित करता है।

6

साहित्य तथा साहित्येतर अनुवाद की समस्याएँ

भिन्न-भिन्न आधारों पर अनुवाद में भिन्न-भिन्न भेद किए जा सकते हैं, लेकिन मूलत: अनुवाद के दो प्रकार होते हैं - साहित्यिक अनुवाद व साहित्येतर अनुवाद। इन दोनो प्रकार के अनुवादों में कुछ भूलभूत अंतर हैं - यदि भाव और शब्दपरक अनुवाद के अनुपात को देखा जाए तो साहित्य में भावपरक अनुवाद की मात्रा बहुत अधिक व शब्दपरक अनुवाद की मात्रा बहुत कम या शून्य होती है, साहित्येतर अनुवाद में ठीक इसका विपरीत होता है। साहित्यिक अनुवाद में मूल शब्दों की हानि होने की संभावना प्रबल होती है जबकि साहित्येतर विषयों में आमतौर पर ऐसा नहीं होता है।

दोनों ही तरह के अनुवाद भिन्न-भिन्न स्तरों पर अनुवादकों के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की चुनौतियां और समस्याएं उत्पन्न करते हैं। इनमें से कुछ समस्याओं का विश्लेषण हम आगे करेंगे। सबसे पहले साहित्य अनुवाद की समस्याएं।

साहित्य अनुवाद व उससे जुड़ी समस्याएं

स्रोत भाषा में लिखित साहित्य को लक्ष्य भाषा में अनुवाद करने को साहित्यिक अनुवाद कहते हैं। साहित्य की विधाओं में कविता, लघुकथा, कहानी,

उपन्यास, अकांकी, नाटक, प्रहसन(हास्य), निबंध, आलोचना, रिपोर्ताज, डायरी लेखन, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, गल्प (फिक्शन), विज्ञान कथा (साइंस फिक्शन), व्यंग्य, रेखाचित्रा, पुस्तक समीक्षा या पर्यालोचन, साक्षात्कार शामिल हैं। साहित्यिक कृतियों का अनुवाद, सामान्य अनुवाद से उच्चतर माना जाता है। साहित्यिक अनुवादक कार्य के सभी रूपों जैसे–भावनाओं, सांस्कृतिक बारीकियों, स्वभाव और अन्य सूक्ष्म तत्त्वों का अनुवाद करने में भी सक्षम होना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि साहित्यिक अनुवाद वास्तव में संभव नहीं हैं।

दो संस्कृतियों के बीच अनुवाद रूपी पुल के निर्माण में साहित्यिक अनुवाद की भूमिका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होती है। इसका सीधा सा कारण यह है कि किसी भौगोलिक क्षेत्र का साहित्य उस क्षेत्र की संस्कृति, कला और रीतियों का प्रतिनिधित्व करता है। कहा भी गया है कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। बस यही वह चीज है, जो साहित्य अनुवाद को बेहद उत्तरदायी और कठिन कर्म बना देती है। किसी भी एक साहित्यिक कृति का उसकी मूल भाषा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद करते समय कितनी ही सावधानियां बरतनी पड़ती हैं। ये सभी सावधानियां सांस्कृतिक भिन्नताओं के चलते समस्याओं का रूप ले लेती हैं। क्योंकि सांस्कृतिक भिन्नता को समाप्त करने के लिए भाषा को मूल रचना की भाषा में व्यक्त प्रतीकों, भावों और उन अनेक विशेषताओं को सटीक तरीके से लक्ष्य भाषा में उतारना होता है और साथ ही यह ध्यान रखना होता है कि लक्ष्य भाषा में उतरी कृति पढ़ने वाले को सहज और आत्मीय लगे।

हम सभी समझ सकते हैं कि यह आसान नहीं है, कारण बहुत सारे हैं, आइये उनकी विवेचना करते है–

काव्यानुवाद की समस्याएं –

काव्यानुवाद एक प्रकार का भावानुवाद है जिसे अधिकांशतः कवि ही करते हैं, क्योंकि इसके लिए कवि की संवेदनशीलता की आवश्यकता होती है। इसी कारण से तटस्थता बनाए रखना एक बड़ी समस्या हो जाती है। काव्य में शब्द के स्थान पर प्रतीकों का उपयोग बहुतायत में होता है। इस संकृति के प्रतीक को दूसरी संस्कृति के प्रतीक के रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता है कारण सांस्कृतिक भिन्नता है।

उदाहरण के लिए गंगा नदी पर लिखी किसी कविता का अंग्रेजी अनुवाद करते समय हमको इंग्लैंड की संस्कृति में गंगा जैसी पवित्र और मान्य नदी का

प्रतीक खोजना होगा। अन्यथा गंगा के प्रतीक को अगर वैसे ही उपयोग किया गया तो लक्ष्य पाठक को भारत में गंगा की महत्ता को अलग से समझाना होगा।

इसी प्रकार से यह कतई आवश्यक नहीं है हिन्दी में "चरण कमल बंदौ हरिराई" में जिस तरह से चरण को कमल की कोमलता का प्रतीक माना गया है वैसा किसी अन्य यूरोपीय या भारतीय भाषाओं में भी हो।

इस सब के अलावा छंदबद्धता, बिम्ब विधान, कल्पना, मधुरता, लय, संरचना, अलंकारादि भी काव्यानुवाद को जटिल कर समस्याएं पैदा करते हैं। अनुवाद करते समय मूल पाठ के इन गुणों को लक्ष्य पाठ में उतारना भी समस्याओं का जनक होता है।

नाट्यानुवाद की समस्याएं -

मंचनीयता की पूर्व-शर्त से जुड़ी यह विधा कभी-कभी काव्यानुवाद जितनी ही जटिल हो जाती है क्योंकि नाट्य विधा का मंचन पक्ष इसे बहुआयामी बना देता है। नाटक का लक्ष्य पूरा हो इसके लिए लेखन से बाहर के कई वाह्य तत्त्व जैसे–अभिनेता और निर्देशक भी इसमें शामिल होते हैं। मंचनीयता को पूरा करने के लिए नाटककार को रंगमंच की आवश्यकताओं को दिमाग में रखना पड़ता है। यह इसकी रचना प्रक्रिया को जटिल बना देता है।

नाटक का अनुवाद करने में उसकी सावादात्मक प्रकृति को बनाए रखना एक समस्या है क्योंकि उसके पात्रों के समस्त गुणों को लक्ष्य भाषा के पात्रों में ठीक उसी तरह से दिखना चाहिए। समस्या यह है कि वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्र संस्कृति की भिन्नता के प्रतीक होते हैं और उनको मूल रचना से लक्ष्य रचना में पुर्नजन्म लेना होता है। यह अनुवादक के लिए समस्याजनक हो जाता है क्योंकि उदाहरण के लिए भारतीय परिवेश में राजा हरिश्चन्द्र के डोम वाले चरित्र को दर्शाने के लिए अंग्रेजी में उसी प्रकार का कोई कार्य प्रतीक खोजना होगा।

नौकर व स्वामी के बीच के संवाद में यूरोपीय भाषाओं में नौकर द्वारा स्वामी के नाम-उपनाम के साथ 'मिस्टर' पूर्वसर्ग लगाकर संवादों को प्रस्तुत किया जा सकता है, लेकिन हिन्दी में ऐसा संभव नहीं है। बल्कि हिन्दी में ऐसा करना नाटक के प्रवाह को बाधित करेगा व पढ़ने वालों को यह अजीब-सी अनूभूति देगा।

मुहावरों तथा लोकोक्तियों का भी नाटकों में भरपूर उपयोग होता है और अनुवाद की समस्याओं पर चर्चा करते समय हम देख चुके हैं कि इनको लक्ष्य भाषा में पुन:निर्मित करना चेढ़ी खीर साबित होता है। नाटक में संवादों के माध्यम से अभिनेता भावों को प्रकट करता है, अर्थात इसमें (संवादों में) शब्दों का चयन यह सोच कर किया जाता है कि अभिनेता संवाद प्रस्तुत करते समय किस शब्द को कैसे बोलेगा(गी) और उच्चारण की ध्वनि के भाव क्या होंगे। अब मूल भाषा के संवादों के इस भाव या विशेषता को अनुवादक द्वारा लक्ष्य भाषा में उतार पाना एक विकट समस्या होती है।

कथानुवाद की समस्याएं –

कविता तथा नाटक की ही तरह कहानी, उपन्यास अथवा कथा साहित्य में सर्जना का स्तर किसी भी तरह से हल्का या कम नहीं होता है, इसीलिए इसका अनुवाद किसी भी तरह से सहज या सरल क्रिया नहीं होती है। कथा का अपना एक विशिष्ट प्रारूप होता है। इसमें साहित्य की अन्य विधाओं के गुण भी अंतर्निहित होते हैं। जिस तरह से नाटक के पात्र अपनी संस्कृति व पृष्ठभूमि का प्रतिनिधित्व करते हैं।

कथा साहित्य में पूरे पाठ को एकल इकाई के रूप में प्रस्तुत व गर्हण करने से ही उसका अर्थ स्पष्ट होता है। अर्थात संपूर्ण पाठ एक शृंखला जैसा होता है, जो आपस में गुथी होती है और प्रत्येक कड़ी अगली या पिछली कड़ी को अर्थ प्रदान करती है। इस तालमेल को अनुवाद मे कायम रख पाना एक समस्या हो सकती है।

साहित्य की अन्य विधाओं के अनुवाद की तरह ही इस विधा में भी अनुवादक को कथ्य के विभाजन तथा शिल्पगत प्रयोग पर चिंतन मनन करना पड़ता है। अनुवादक कभी कुछ जोड़ता(ती) है तो कभी कुछ हटाता(ती) है। इस सारे कार्य और गतिविधि के साथ उसे मूल पाठ के भाव को बनाए रखना पड़ता है। स्रोत व लक्ष्य भाषा में सही प्रतीकों का चयन यहां भी उतना ही कठिन और समस्याप्रद होता है। किसी हिन्दी कहानी में हिन्दू विवाह के 'सात फेरों' के साथ लिए जाने वाले सात वचनों को प्रतीक रूप में दूसरी भाषा में उतारना जहां पर इस तरह की संकल्पना भी समस्याजनक हो तो समझा जा सकता है कि प्रतीक खोजना कितनी दुष्कर समस्या हो सकती है। 'चरण स्पर्श' का समतुल्य यूरोपीय भाषा में खोजना एक समस्या है।

अलंकार, मुहावरे और लोकोक्तियां यहां भी अनुवादक को उतनी ही समस्या देते हैं जितनी कि नाटक या अन्य विधाओं में। 'वह गऊ समान है' जैसे–मुहावरे के लिए दूसरे देशों में गाय के जैसे–सीधे व सम्मानित पालतू प्रतीक को खोजना एक दुष्कर कार्य है। एक बात और, प्राचीन साहित्य का प्रतीक आज के समय में समतुल्य खोजना भी एक समस्या बन सकती है।

सभी साहित्यिक विधाओं के अनुवाद में अनुवादकों को कमोबेश समान समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अनुवाद के दौरान दो भाषाओं का आपसी संचार, अनुवादक की संवेदना तथा स्रोत साहित्य की मूल संस्कृति की समझ, प्रतीकों, मुहावरों व लोकोक्तियों का भरपूर ज्ञान आदि ऐसे गुण हैं, जो साहित्यिक अनुवादक के लिए अपरिहार्य हैं। साहित्यिक अनुवाद के लिए प्रतिभा, क्षमता और अभ्यास तीनों का अत्यधिक महत्त्व है।

साहित्येतर अनुवाद व उससे जुड़ी समस्याएं –

साहित्य में शामिल समस्त विधाओं के अतिरिक्त शेष विषयों को साहित्येतर विषय कहा जाता है इनमें मानविकी विषय, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग, कार्यालयीन, वाणिज्यिक, वित्त, कानून आदि विषय शामिल हैं। साहित्यिक और साहित्येतर अनुवादों में मूल अंतर यह है कि साहित्येतर अनुवाद करते समय मूल व स्रोत भाषा के साथ-साथ संबद्ध विषय का भी पर्याप्त ज्ञान आवश्यक होता है। तकनीकि अनुवाद में मूल भाषा में निहित बहुअर्थी तथा संदिग्ध स्थितियों को समाप्त करके लक्ष्य को परिमार्जित करने का प्रयास शामिल रहता है। इन सभी विषयों में अनुवाद की मूल समस्याएं तो वे ही होंगी जो कि किसी साहित्यिक विषय में आती हैं जैसे–कि भाषाओं की मूल संस्कृतियों, प्रतीकों, लोकोक्तियों, मुहावरों व विशिष्ट भावों का सटीक प्रस्तुतिकरण। इनमें से प्रत्येक विषय की अपनी विशिष्टताओँ के कारण हर एक विषय के अनुवाद में शामिल समस्याएं विषय विशेष से संबंधित भी हो सकती है, लेकिन मोटे तौर पर समस्याएं समान ही रहती है।

मानविकी विषयों के अनुवाद की समस्याएं–

मानविकी वे शैक्षणिक विषय हैं जिनमें प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञानों के मुख्यत: अनुभवजन्य दृष्टिकोणों के विपरीत, मुख्य रूप से विश्लेषणात्मक, आलोचनात्मक या काल्पनिक विधियों का इस्तेमाल कर मानवीय स्थिति का

अध्ययन किया जाता है। इन विषयों के अनुवाद में भाषाओं (लक्ष्य व स्रोत) की महारत के अतिरिक्त निम्नलिखित समस्याएं हमेशा सामने आती रहती हैं–

(i) लक्ष्य भाषा में अनुदित सामग्री का उपयोग क्या होगा? यह जानना इसलिए जरूरी है क्योंकि यह संदर्भित विषय के उस स्तर को निर्धारित करता है जिसका आधार मूल रूप से लक्ष्य पाठक की मानसिक अवस्था तथा विषय विशेष के ज्ञान का स्तर है जिसके लिए अनुवाद किया जा रहा है।

(ii) लक्ष्य भाषा का अपना स्तर क्या होगा? मान लीजिए कि किसी प्रशिक्षण सामग्री का अनुवाद किया जा है, जो कि शिक्षक प्रशिक्षण से जुड़ी है। ऐसी स्थिति में विषय विशेष के ज्ञान के स्तर के साथ अनुवाद में उपयोग की जाने वाली भाषा का स्तर भी मायने रखता है क्योंकि – शिक्षक प्रशिक्षण शिशुशाला के शिक्षकों से लेकर विश्वविद्यालय के शिक्षकों तक, और तो और तकनीकि विषयों के शिक्षकों के भाषा ज्ञान का स्तर भिन्न-भिन्न होगा।

(iii) मानविकी विषयों में यह जरूरी हो जाता है कि यदि मूल भाषा में किसी तरह के भ्रम की संभावना हो तो लक्ष्य भाषा में उसे समाप्त किया जाए। इस कारण से मानविकी विषयों में अनुवाद करना समस्याप्रद हो जाता है। क्योंकि मूल भाषा में उपयोग किए गए कई शब्द या वाक्यांश यदि लक्ष्य भाषा में ठीक उसी प्रकार रख दिए जाएं तो पाठक के लिए भ्रम पैदा हो सकता है इसलिए उस भ्रम की स्थिति का न होना अच्छे मानविकी अनुवाद की विशेषता है।

(iv) मानविकी अनुवाद में एक और समस्या शब्दावली से जुड़ी हुई है क्योंकि हर एक विषय की अपनी एक मानक शब्दावली होती है। यदि अनुवादक मानक और प्रचिलित शब्दावली के सही उपयोग से परिचित नहीं होगा(गी) तो उसका अनुवाद, पाठक की समझ से परे होगा।

(v) क्रमानविकी विषयों का ज्ञान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है और कई विषय जैसे–दर्शन शास्त्र में प्रतीकों आदि की उपस्थिति हो सकती है, ऐसे में मानविकी विषय भी साहित्य के विषयों जैसा व्यवहार कर सकते हैं। इन परिस्थितियों में ऐसे मानविकी विषय से संबंधित

अनुवाद में वे सारी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं, जो कि साहित्यिक अनुवाद में होती हैं।

तकनीकि, प्रौद्योगिकी एवं इंजीनियरिंग विषयों के अनुवाद की समस्याएं–

तकनीकि, प्रौद्योगिकी एवं इंजीनियरिंग विषयों के अनुवाद में इन सभी विषयों का पर्याप्त ज्ञान और समझ सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इन सभी विषयों से संबंधित शब्दावली काफी जटिल हो जाती है। इन विषयों के अनुवाद में अनुवादकों की कुछ आम समस्याएं निम्नलिखित हैं–

(i) मानक तकनीकि शब्दावली का सीमित होना। हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के उपरोक्त विषयों के अनुवादकों की सबसे बड़ी समस्या मानक शब्दावली का सीमित या अनुपलब्ध होना है। ऐसी स्थिति में बेहद जटिल तकनीकि शब्दों के मामले में लिप्यांतरण (Transliteration) से काम चलाया जाता है। ऐसी स्थिति में यदि पाठक का तकनीकि ज्ञान विशेषज्ञ स्तर का न हो तो अनुवाद अपना मूल्य खो देता है।

(ii) तकनीकी अनुवाद के क्षेत्र में हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के अधिकांश अनुवादक कई-कई विषयों पर काम करते हैं, लेकिन उस सभी विषयों पर उनकी विशेषज्ञता संभव नहीं होती है, ऐसी स्थिति में औसत गुणवत्ता वाले अनुवाद का जोखिम बना रहता है।

(iii) यदि अनुवादक को उस लक्ष्य की सटीक जानकारी न हो तो अनुवाद का मूल अभिप्राय पूरा नहीं होता है- जो कि संप्रेषण है। मान लीजिए कि चिकित्सा के क्षेत्र में किसी आम बीमारी जैसे–टीबी से संबंधित कोई ऐसा पाठ अनुवाद किया जाए जो कि आम जनता के बीच बीमारी की जानकारी व संदनशीलता बढ़ाने के लिए हो और अनुवादक 'Tuberculosis' शीर्षक का अनुवाद 'राजयक्ष्मा' कर दे तो ऐसे में इस सूचना या जानकारी वाले पर्चे को आमजन द्वारा समझ पाना असंभव हो जाएगा और अनुवाद अपनी उपादेयता खो बैठेगा।

कार्यालयीन विषयों के अनुवाद की समस्याएं–

भारत जैसे–बहुभाषी देश के लिए यह आवश्यक हो जाता कि सरकारी कामकाज की एक देशव्यापी भाषा हो, जो सभी को स्वीकार्य हो। 14 सितंबर

1949 को हिन्दी को भारत की राजभाषा स्वीकार किया गया। इसके पश्चात यह आवश्यक हो गया कि हिन्दी भाषा का प्रचार व प्रसाद अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में सुनिश्चित किया जाए। इसमे आने वाली समस्याओं के क्रम में द्विभाषा फार्मूला अपनाया गया। केन्द्र सरकार ने यह प्रयास किया कि उसके संचार व कार्य संबंधी व्यवहारों में राजभाषा के रूप में हिन्दी का उपयोग किया जाए तथा हिन्दी भाषी क्षेत्रों के अलावा जो प्रदेश है वहां पर यथासंभव वहां की भाषा में संवाद भी जारी रखे जाएं। रेलवे तथा राष्ट्रीयकृत बैंक व्यवस्था इसका एक सटीक उदाहरण है। इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए अनुवाद एक मुख्य हथियार साबित हुआ है।

इस क्षेत्र में भी समस्या कमोबेश वैसी हैं जैसी कि तकनीकि विषयों के क्षेत्र अनुवाद से संबंधित है। कार्यालय विशेष की शब्दावली की अनुपलब्धता, उसकी दुरूहता, व्यावहारिकता तथा अनुवाद की गुणवत्ता।

वाणिज्यिक विषयों के अनुवाद की समस्याएं–

आज भूमंडलीकरण के दौर में व्यापार भौगोलिक सीमाओं को लांघ गया है। बहुराष्ट्रीय आकार की कंपनियों के लिए यह आवश्यक हो गया है कि उनके उत्पाद और उनकी जानकारियां सभी उपभोक्ताओं को उनकी अपनी भाषाओं में उपलब्ध हों। इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि अनुवाद की सहायता ली जाए। बहुराष्ट्रीय प्रकृति के व्यापार में नियंत्रण के लिए कंपनियों को भिन्न-भिन्न देशों में स्थित अपने परिचालनों उस देश विशेष का भाषा में संवाद करना होता हैं यहां पर अनुवाद उपयोगी होता है।

वाणिज्य, वित्त एवं बैंकिंग क्षेत्रों में अनुवाद के लिए अनुवादकों को भी क्षेत्र विशेष का ज्ञान होना परम आवश्यक है। वाणिज्यिक पाठ - साहित्यिक, अर्ध-तकनीकी तथा गैर-तकनीकि तीनों तरह का हो सकता है। इनमें शाब्दिक अनुवाद की अपेक्षा अधिक रहती है तथा सब्दावली चयन एक समस्या हमेशा रहती है।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि अनुवाद चाहे साहित्यिक हो या साहित्येतर, मूल इन दोनो प्रकार के अनुवादों में कुछ भूलभूत अंतर हैं - यदि भाव और शब्दपरक अनुवाद के अनुपात को देखा जाए तो साहित्य में भावपरक अनुवाद की मात्रा बहुत अधिक व शब्दपरक अनुवाद की मात्रा बहुत कम या

शून्य होती है, साहित्येतर अनुवाद में ठीक इसका विपरीत होता है। साहित्यिक अनुवाद में मूल शब्दों की हानि होने की संभावना प्रबल होती है जबकि साहित्येतर विषयों में आमतौर पर ऐसा नहीं होता है।

शब्दावली ज्ञान, लक्ष्य पाठक के मानसिक स्तर की जानकारी तथा विषय विशेष का अच्छा ज्ञान साहित्येतर अनुवाद के लिए परम आवश्यक है।

7

अनुवाद की चुनौतियां

भाषा हमारे जीवन के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पहलुओं में से एक है। यह मनुष्यों के बीच आपसी संवाद का मूलभूत माध्यम है। भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन भाषा-विज्ञान कहलाता है। भाषा के उद्देश्य आंतरिक विचारों व भावनाओं को व्यक्त करना, जटिल व गूढ़ विषयों को समझना, दूसरों के साथ संवाद स्थापित करना, अपनी इच्छाओं व आवश्यकताओं की पूर्ति करना आदि हैं। भाषा के मौखिक, शारीरिक, सांकेतिक आदि कई रूप हैं।

एक अनुमान के अनुसार विश्व में लगभग 5 से 7 हजार भाषाएं हैं। स्वाभाविक है कि ये सभी भाषाएं सीखना और समझना किसी भी व्यक्ति के लिए असंभव है। लेकिन एक-दूसरे से संपर्क व संवाद करना तो सभी मनुष्यों की बुनियादी आवश्यकता है। अतः कोई ऐसा तरीका होना चाहिए, जिसके द्वारा एक-दूसरे की भाषाएं न समझने वाले लोग भी आपस में संवाद कर सकें और अन्य भाषाओं में लिखे पत्रों, साहित्य आदि को भी पढ़ सकें। यही अनुवाद की भूमिका है।

अनुवाद दो भाषाओं को जोड़ने वाले पुल जैसा है और इसकी सहायता से लोग अन्य भाषाओं की सामग्री को अपनी भाषा में प्राप्त कर पाते हैं। अनुवाद किसी एक भाषा में लिखी या बोली गई बातों को दूसरी भाषा में बदलने की प्रक्रिया है। अनुवाद का मानव-जीवन के लगभग प्रत्येक कार्यक्षेत्र में अत्यधिक महत्त्व है और भाषा-विज्ञान, व्यापार, शिक्षा, कानून, धर्म, साहित्य, शासन-प्रशासन

आदि अनेक क्षेत्रों में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। लेकिन अनुवाद केवल एक भाषा के शब्दों को दूसरी भाषा में बदलने का सीमित कार्य नहीं है। वास्तव में, यह तो अनुवाद का केवल एक अंग है। अनुवाद में उपयुक्त शब्दों का चयन करना, व्याकरण के नियमों का पालन करना और सांस्कृतिक संदर्भों का ध्यान रखना भी आवश्यक होता है। अनुवाद अचूक और स्पष्ट होना चाहिए, ताकि पाठक को इसे समझने में कठिनाई न हो और वांछित संदेश स्पष्ट रूप से व्यक्त हो सके।

अनुवाद के बारे में कई भ्रामक धारणाएं प्रचलित हैं। कई लोग सोचते हैं कि एक से दूसरी भाषा में किसी भी सामग्री का अनुवाद करने के लिए इतना पर्याप्त है कि व्यक्ति वे दोनों भाषाएं जानता हो। दूसरी भ्रामक धारणा यह है कि अनुवाद में केवल एक भाषा में लिखे शब्दों को दूसरी भाषा के उसी अर्थ वाले शब्दों से बदलने भर की आवश्यकता होती है, अतः कोई भी व्यक्ति केवल एक शब्दकोश (डिक्शनरी) की मदद से किसी भी भाषा में अनुवाद कर सकता है। ऐसी ही एक अन्य भ्रामक धारणा पिछले कुछ समय से प्रचलित है कि इंटरनेट पर उपलब्ध किसी भी मशीन टूल की सहायता से तुरंत एक से दूसरी भाषा में अनुवाद किया जा सकता है, इसलिए अब अनुवाद करने के लिए मनुष्यों की आवश्यकता नहीं रही। वास्तव में जो लोग ऐसी भ्रामक धारणाओं को मानते हैं, उन्हें अनुवाद के महत्त्व और अनुवाद-प्रक्रिया की जटिलताओं और चुनौतियों का अहसास नहीं है। आइये इन चुनौतियों के बारे में विस्तार से चर्चा करें। अपनी सुविधा के लिए हम इन चुनौतियों को मोटे तौर पर दो श्रेणियों में बांट सकते हैं—भाषाई चुनौतियां व तकनीकी चुनौतियां।

भाषाई चुनौतियां

भाषा का उद्देश्य संवाद स्थापित करना है। यदि वही विफल हो जाए, तो भाषा अनुपयोगी हो जाएगी। एक अच्छे अनुवादक के लिए यह आवश्यक है कि वह जिन दो भाषाओं में अनुवाद करता है, उन दोनों भाषाओं को बोलने वाले लोगों की संस्कृति, इतिहास और मान्यताओं आदि से भी वह परिचित हो। यदि अनुवादक उन दोनों भाषाओं में निपुण नहीं है, तो इस बात की अत्यधिक संभावना है कि वह अभीष्ट संदेश को अपने अनुवाद के माध्यम से व्यक्त कर पाने में सफल नहीं हो सकेगा। प्रत्येक भाषा की अपनी अनूठी संरचना होती है। भाषा की संरचना का अनुवाद की अचूकता और सरलता पर

भी प्रभाव पड़ता है। भाषा जितनी सरल होगी, अनुवाद कर पाना भी उतना ही सरल हो जाएगा।

उदाहरण के लिए अंग्रेजी का एक सरल वाक्य देखें- "They eat fruit"। यदि हिन्दी में इसका अनुवाद करना हो, तो शब्दों का क्रम बदल जाएगा और हमें इस प्रकार लिखना पड़ेगा- "वे फल खाते हैं"। लेकिन यदि कोई व्यक्ति केवल शब्दकोश अथवा मशीन टूल की सहायता से अंग्रेजी शब्दों को हिन्दी शब्दों से बदल दे, तो इसका अनुवाद "वे खाना फल" हो जाएगा, जो व्याकरण की दृष्टि से भी गलत है और पढ़ने में अस्पष्ट भी है। कल्पना कीजिए कि यदि आप कोई उपन्यास खरीदते हैं और उसमें इसी प्रकार अनुवाद किए गए वाक्य भरे पड़े हों, तो आपको कैसा लगेगा? ऐसे अनुवाद में न तो भाषा का सौंदर्य रहेगा और न आप उसका अर्थ समझ पाएंगे।

इसी प्रकार संयुक्त शब्दों का सही अर्थ समझना भी अनुवाद का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है और यह अनुवाद में एक चुनौती भी है। ये दो या अधिक शब्दों से मिलकर बने शब्द होते हैं, किन्तु उनका अर्थ सामान्यत: उनमें से किसी भी शब्द के अर्थ से भिन्न होता है। उदा. अंग्रेजी में एक शब्द है - "Bookworm" या हिंदी में "किताबी कीड़ा"। लेकिन इसका आशय किसी पुस्तक या कीड़े से नहीं है, बल्कि यह ऐसे व्यक्ति के लिए उपयोग किया जाता है, जिसे पुस्तकें पढ़ने का शौक हो। इसी प्रकार अंग्रेजी शब्द "Deadline" मृत व्यक्तियों की पंक्ति या रेखा नहीं, बल्कि किसी कार्य के लिए अंतिम स्वीकार्य तिथि होती है। एक अन्य उदाहरण "Butterfly" है, जो तितली के लिए उपयोग किया जाता है, न कि मक्खन (butter) या मक्खी (fly) के लिए। इसी तरह जब हम "गुलाब जामुन" कहते हैं, तो यह एक मिठाई के संदर्भ में है, न कि इसमें गुलाब के फूल या जामुन के फल की बात हो रही है।

मुहावरों और कहावतों का अनुवाद करना संभवत: सबसे कठिन कार्य है। इनका अनुवाद करने के लिए उस भाषा से संबंधित संस्कृति से परिचित होना सहायक होता है। यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि इनका शब्दश: अनुवाद नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि अनुवादक को दूसरी भाषा में उसी अर्थ वाला कोई मुहावरा या कहावत ढूंढने का प्रयास करना चाहिए। उदा. अंग्रेजी कहावत 'A bad workman blames his tools' का यदि शब्दश: अनुवाद करके इसे 'एक बुरा कारीगर अपने औजारों को दोष देता है' लिख दिया जाए, तो इसमें

मूल भावना ही व्यक्त नहीं हो सकेगी और अनुवाद विफल हो जाएगा। अत: हिन्दी में इसका अनुवाद करते समय 'नाच न जाने आँगन टेढ़ा' मुहावरे का उपयोग किया जाना चाहिए। इसी प्रकार व्यंग्य का अनुवाद करना भी ऐसी ही एक चुनौती है। व्यंग्य ऐसी टिप्पणी या भावना व्यक्त करने का तीक्ष्ण तरीका है, जिसमें सामान्यत: जो कहा जा रहा हो, अभीष्ट अर्थ उसके विपरीत होता है। यदि व्यंग्य का भी शब्दश: अनुवाद कर दिया जाए, तो इसका अर्थ खो जाता है क्योंकि अनुवाद से वह संदेश अभिव्यक्त होगा, जो वास्तव में वांछित संदेश का विपरीत है। ऐसी ही चुनौती पद्य के अनुवाद में भी होती है क्योंकि काव्य में अकसर शब्दों का क्रम गद्य से भिन्न होता है और कई बार सांकेतिक अर्थ भी छिपे होते हैं। स्वाभाविक है कि कोई भी मशीन टूल वास्तविक अनुवादक की सहायता के बिना अचूक अनुवाद नहीं कर सकेगा। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि अनुवाद में केवल शब्दार्थ पर नहीं, बल्कि भावार्थ पर भी ध्यान दिया जाना आवश्यक होता है।

अनुवाद करते समय इस बात का ध्यान रखना भी आवश्यक है कि विभिन्न संदर्भों में एक ही शब्द के एक से अधिक अर्थ हो सकते हैं। अत: संदर्भ को समझना और उसके अनुसार सबसे उपयुक्त अर्थ का चयन करना महत्त्वपूर्ण है, अन्यथा अर्थ का अनर्थ हो सकता है। उद,. अंग्रेजी शब्द 'समंअम' का अर्थ 'छोड़ना' या 'छुड़ी' दोनों हो सकता है, 'समजि' शब्द के लिए 'बायां', 'बचा हुआ', 'वामपंथ' आदि विभिन्न अर्थ हैं और quarter' शब्द भी 'चौथाई', 'आवास', 'तिमाही' आदि अनेक अर्थों में उपयोग किया जा सकता है। यदि अनुवादक संदर्भ का ध्यान रखे बिना इन शब्दों के किसी भी अर्थ का उपयोग कर ले, तो अनूदित वाक्य पूरी तरह गलत संदेश दे सकता है या निरर्थक भी बन सकता है।

अनुवाद करते समय इस बात का ध्यान रखना भी आवश्यक है कि अनुवाद किस आयु-वर्ग, व्यावसायिक-श्रेणी आदि के पाठकों के लिए किया जा रहा है। इसके आधार पर उपयुक्त शब्दों का चयन और शैली का चयन करना महत्त्वपूर्ण होता है। उदा. बच्चों की किसी पुस्तक का अनुवाद करते समय उपयोग की जाने वाली शैली किसी कानूनी दस्तावेज के अनुवाद की शैली से भिन्न होगी, और किसी उपन्यास या कविता के अनुवाद के समय उपयोग की जाने वाली शैली व किसी उत्पाद के उपयोग-संबंधी निर्देशों का अनुवाद करने की शैली भिन्न रहेगी।

इन बातों पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि ऊपर हमने अनुवाद के संबंध में प्रचलित जिन धारणाओं की चर्चा की थी, वे कितनी भ्रामक हैं और उन पर विश्वास करना वास्तव में कितना हानिकारक हो सकता है। आइये अब तकनीकी चुनौतियों पर चर्चा करें।

तकनीकी चुनौतियां

अनुवाद के क्षेत्र की चुनौतियों में एक महत्त्वपूर्ण पहलू तकनीकी चुनौतियों से संबंधित है। कंप्यूटर, सॉफ्टवेयर, इंटरनेट और इससे संबंधित प्रौद्योगिकी के विकास और विस्तार के कारण अब अनुवाद की पारंपरिक पद्धति में कई बड़े परिवर्तन हुए हैं। अब अनुवाद का कार्य मुख्यतः कागज और कलम से नहीं, बल्कि कंप्यूटर की सहायता से किया जाने लगा है। पारंपरिक शब्दकोशों का स्थान अब ऑनलाइन शब्दकोश ले रहे हैं, कंप्यूटर एसिस्टेड ट्रांसलेशन (CAT) साधनों या सॉफ्टवेयरों का उपयोग भी होने लगा है। निश्चित रूप से, पारंपरिक साधनों व पद्धतियों की तुलना में इनके अपने लाभ हैं, किन्तु साथ ही इनसे जुडी कुछ तकनीकी चुनौतियां भी हैं, जो पारंपरिक अनुवाद पद्धति में नहीं थीं।

कंप्यूटर एसिस्टेड ट्रांसलेशन (CAT) टूल्स की बात आती है, तो कई लोग इसे 'मशीन ट्रांसलेशन' भी समझ लेते हैं। उनकी धारणा होती है कि CAT टूल्स अर्थात ऐसे साधन हैं, जिनसे कंप्यूटर या किसी वेबसाइट पर अपनी पाठ्य-सामग्री डालते ही दूसरी भाषा में तुरंत अनुवाद उपलब्ध हो जाएगा और इसमें मानवीय बुद्धि या वास्तविक अनुवाद की आवश्यकता ही नहीं है। जबकि सच्चाई यह है कि CAT टूल्स और मशीन ट्रांसलेशन दो अलग बातें हैं।

कंप्यूटर एसिस्टेड ट्रांसलेशन (CAT) अनुवाद का वह तरीका है, जिसमें वास्तविक अनुवादक (मनुष्य) एक कंप्यूटर सॉफ्टवेयर की सहायता से अनुवाद करता है, अर्थात मशीन स्वयं अनुवाद नहीं करती, बल्कि वह अनुवाद-कार्य में मनुष्य की सहायता करती है। कंप्यूटर एसिस्टेड ट्रांसलेशन (CAT) में मानक शब्दकोश और व्याकरण-संबंधी सॉफ्टवेयर हो सकते हैं। साथ ही, इनमें ट्रांसलेशन मेमोरी भी होती है, जहां स्रोत भाषा का प्रत्येक वाक्य और अनुवादक द्वारा किया जाने वाला उसका अनुवाद संग्रहित कर लिया जाता है, ताकि आगे जब भी कभी वही स्रोत वाक्य सामने आए, तो अनुवादक को पुनः उसका अनुवाद न करना पड़े, बल्कि ट्रांसलेशन मेमोरी स्वयं ही वह अनुवाद कर दे। इससे अनुवाद की गति बढ़ती है, किन्तु इसके कारण तब समस्या आ सकती है, जब एक ही शब्द या वाक्य

विभिन्न अर्थों में आ रहा हो। अत: अनुवादकों को इससे सहायता तो लेनी चाहिए, किन्तु इस पर पूरी तरह निर्भर नहीं हो जाना चाहिए।

स्पष्ट है कि कंप्यूटर एसिस्टेड ट्रांसलेशन (CAT) टूल तेजी से और अच्छी गुणवत्ता वाला अनुवाद करने में मनुष्य की सहायता करते हैं, किन्तु वास्तव में ये उपकरण स्वयं अनुवाद नहीं करते। किसी सॉफ्टवेयर द्वारा किया जाने वाला अनुवाद मशीन ट्रांसलेशन कहलाता है। इस प्रक्रिया में एक कंप्यूटर प्रोग्राम स्रोत भाषा की सामग्री का विश्लेषण करता है और, सैद्धांतिक रूप से, मानवीय हस्तक्षेप की आवश्यकता के बिना लक्ष्य भाषा में सामग्री का अनुवाद कर देता है। हालांकि, ऊपर हमने जिन भाषाई चुनौतियों (वाक्य संरचना, मुहावरे, संयुक्त शब्द, अनेकार्थी शब्द आदि) की चर्चा की है, उनके कारण कोई भी सॉफ्टवेयर या मशीन अभी अचूक अनुवाद कर पाने में सक्षम नहीं है। अत: ऐसे सभी मशीनी अनुवादों को मनुष्यों द्वारा जांचने और संपादित करने की आवश्यकता पड़ती है।

इसके अलावा CAT टूल्स से संबंधित कुछ अन्य तकनीकी चुनौतियां भी हैं। विभिन्न कंपनियों द्वारा ऐसे अनेक सॉफ्टवेयर विकसित किए गए हैं। अक्सर ये एक-दूसरे के साथ संगत नहीं होते हैं। अर्थात एक CAT टूल में उपयोग की जा रही ट्रांसलेशन मेमोरी, टर्मबेस (शब्दकोश) और अनुवाद के लिए तैयार की गई स्रोत फाइल सामान्यत: केवल उसी CAT टूल के साथ खोली जा सकती है, किसी अन्य CAT टूल में नहीं। इसी प्रकार इनकी संगतता ऑपरेटिंग सिस्टम (विंडोज, मैक, लिनक्स आदि) के अनुसार भी अलग-अलग हो सकती है। विभिन्न कंपनियां व अनुवाद एजेंसियां अपनी प्राथमिकता व आवश्यकता के अनुसार CAT टूल्स का चयन करती हैं। इन सभी टूल्स को खरीदना और उनका उपयोग सीखना भी अनुवादकों के लिए एक चुनौती होती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के फॉण्ट (यूनिकोड व गैर-यूनिकोड), कीबोर्ड लेआउट आदि सीखना भी आवश्यक होता है। आशा है कि तकनीकी क्षेत्र में लगातार हो रही प्रगति के कारण निकट भविष्य में शायद ये चुनौतियां पूरी तरह समाप्त हो जाएं, किन्तु शायद अभी तो सर्वाधिक उपयुक्त समाधान यही है कि अनुवादक इस क्षेत्र में सर्वाधिक लोकप्रिय व प्रचलित ऑपरेटिंग सिस्टम, CAT टूल, फॉण्ट, कीबोर्ड लेआउट आदि के बारे में जानकारी प्राप्त करें और इनका उपयोग सीख लें। भले ही यह एक आदर्श समाधान न हो, किन्तु फिलहाल यही इन तकनीकी चुनौतियों से निपटने का सबसे व्यावहारिक समाधान है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि अनुवाद की चुनौतियों से निपटने के लिए अनुवादक में कम-से-कम निम्नलिखित गुण होना आवश्यक है–

जिस भाषा से अनुवाद किया जा रहा है (स्रोत भाषा) और जिस भाषा में अनुवाद किया जा रहा है (लक्ष्य भाषा), उन दोनों भाषाओं में निपुणता।

दोनों भाषाओं की संरचना, व्याकरण, सामाजिक-सांस्कृतिक-ऐतिहासिक संदर्भों की जानकारी व समझ।

इस बात को समझ पाने की क्षमता कि कब शब्दशः अनुवाद किया जाए और कब शब्दार्थ से ज्यादा ध्यान भावार्थ पर दिया जाए।

विभिन्न CAT टूल्स और इनसे संबंधित तकनीकी पहलुओं, जैसे–फॉण्ट व कीबोर्ड लेआउट आदि की जानकारी व इनमें कार्य करने का अनुभव।

इन आवश्यकताओं की पूर्ति यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि अनूदित सामग्री न केवल वांछित संदेश को पूरी तरह अभिव्यक्त कर सकेगी, बल्कि भाषा के सौंदर्य को भी बनाए रखेगी। ये चुनौतियां भले ही कठिन प्रतीत होती हों, किन्तु इनसे निपटना असंभव नहीं है। सकारात्मक एवं व्यावहारिक दृष्टिकोण व सतत प्रयास के द्वारा हर चुनौती का निवारण संभव है।

8

अनुवाद का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

अनुवाद भूमंडलीकरण के युग में एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक और भौगोलिक सेतु का कार्य कर रहा है जिसके माध्यम से भाषाई संप्रेषण एवं ज्ञान के विस्तार को प्रमुखता मिल रही है। वर्तमान तकनीकी युग में अनुवाद का योगदान बहुत ही बुनियादी रूप में हैं। अनुवाद चूँकि एक भाषाई विनिमय की प्रक्रिया है इसलिए इसके सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य का महत्त्व भी उतना ही है। अनुवाद की सैद्धांतिकी के संदर्भ में आज के समय में कई पुस्तकें अध्ययन जगत में उपलब्ध हैं, लेकिन अनुवाद की सैद्धांतिकी को जानने हेतु समीक्षा के लिए डॉ. जी. गोपीनाथन द्वारा लिखित पुस्तक 'अनुवाद: सिद्धान्त एवं प्रयोग' का महत्त्व विषम भाषा-भाषी समाज के संबंध में है। लेखक मूलत: दक्षिण भारतीय (मलयालमभाषी) हैं, इन्होंने अलीगढ विश्वविद्यालय में पढ़ाई के उपरांत कोचिन विश्वविद्यालय में अनुवाद पाठ्यक्रम (1969-71) में अध्यापन कार्य किया तथा विषम भाषा-भाषी समाज के संबंध में अनुवाद की भाषावैज्ञानिक समस्याओं से परिचित हुए। उसके बाद लेखक ने देश-विदेश में अध्ययन तथा अध्यापन के जरिए अनुवाद से जुड़ी समस्याओं पर विश्लेषण एवं शोध को जारी रखा।

लेखक ने इस पुस्तक में मूल रूप से अनुवाद के सिद्धान्त एवं उसके व्यावहारिक स्वरूप को स्पष्ट किया है। पुस्तक में यह दिखाया गया है कि अनुवाद किस तरह यूरोपीय देशों से उभरकर भारत में आया और वह किस तरह

सांस्कृतिक सेतु का माध्यम बना साथ ही अनुवाद को भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखते हुए उदाहरणों के साथ स्पष्टीकरण भी दिया गया है।

समीक्ष्य पुस्तक के प्रथम अध्याय 'अनुवादरू एक सांस्कृतिक सेतु' में लेखक ने स्पष्ट किया है कि, 'अनुवाद मानव सभ्यता के साथ विकसित ऐसी तकनीक है, जिसका अविष्कार मनुष्य ने बहुभाषिक स्थिति की विडम्बनाओं से निपटने के लिए किया है।' इसी संदर्भ में 'बेबल' कथा का उल्लेख किया है जिसमें कहा गया है कि 'मानव ने जब शिनार देश में एक अपूर्व नगर एवं मीनार बनाकर यहोवा से टक्कर लेना चाहा तो उसने उनकी भाषा में भेद उत्पन्न किए जो आपसी फूट का कारण बना'। इसी के फलस्वरूप अनुवाद को एक नई दिशा एवं गति मिली। उन्होंने स्पष्ट किया है कि अनुवाद के सहारे ही विश्वसाहित्य का निर्माण हुआ और यूरोप के नवजागरण में ग्रीक एवं लैटिन ग्रंथों के अनुवाद की महत्त्वपुर्ण भूमिका रही है। भारतीय में भी दार्शनिक एवं आध्यात्मिक ग्रंथो के अनुवादों ने विश्व की भौतिक एवं आध्यात्मिक संस्कृति के विभिन्न आयाम को विकसित किया है। अनुवाद ने विश्व में वसुधैवकुटुम्बकम की भावना विकसित कर संपूर्ण एकता एवं समझदारी की भावना विकसित की है।

'अनुवाद का स्वरूप एवं प्रक्रिया' अध्याय में लेखक ने बताया कि अनुवाद दो भाषाओं के बीच संप्रेषण की प्रक्रिया है जिसके लिए अंग्रेजी में 'ट्रांसलेशन', फ्रेंच में 'ट्रडूक्शन', अरबी में 'तर्जुमा' आदि शब्द का प्रयोग किया जाता है। फिर लेखक ने अनुवाद की परिभाषा को और भी सरल और स्पष्ट किया है। 'पहले किसी भाषा में लिखी गयी या कही गयी बात को बाद में किसी अन्य भाषा मे लिखना या कहना' अर्थात भाषा के बदलाव के साथ स्रोत भाषा में कही गई बात की आत्मा में कोई बदलाव ना आते हुए उसे लक्ष्य भाषा में मूल भाषा की तरह अनूदित करना ही इसकी सार्थकता है।

जिस प्रकार नाइडा ने अनुवाद प्रक्रिया में अर्थ की महत्ता और प्रतीकों पर ध्यान केन्द्रित करने की बात कही है उसी प्रकार डॉ. गोपीनाथन ने भी अनुवाद में अर्थ संप्रेषण की प्रक्रिया एवं उसके अन्य पहलुओं पर महत्त्व दिया। अनुवादक, अनुवाद में अर्थ को बनाए रखते हुए अन्य भाषा में अन्तरण करता है, लेकिन इस अनुवाद में मूल प्रभाव का कुछ अंश नष्ट होने की संभावना रहती है। इसलिए अनुवादक को ऐसे उपयुक्त शब्दों को चुनना चाहिए जिनके माध्यम से मूल के अर्थ को संप्रेषित किया जा सके।

'अनुवाद–एक वैज्ञानिक कला' अध्याय में लेखक ने अनुवाद का विश्लेषण, वैज्ञानिक दृष्टि से करते हुए बताया कि अनुवाद को प्राचीन काल से कुछ विद्वान कला मानते आए हैं, तो आधुनिक युग में कुछ विद्वान उसे विज्ञान मानते हैं, वहीँ कुछ लोग अनुवाद को कला या विज्ञान न मानकर उसे शिल्प (Craft) मानते हैं। अनुवाद को कला मानने के पक्ष में थियोडर सेवरी ने अपने 'अनुवाद की कला' नामक ग्रंथ में अनुवाद के संदर्भ में 'निकटतम समतुल्यता' का महत्त्व बताया है। उनके अनुसार अनुवादक, अनुवाद में सहज समतुल्यता के आधार पर उपयुक्त शब्दों और पर्यायों का चुनाव करता है, जिससे अनुवादक का ज्ञान आधारित व्यक्तित्त्व भी अनुवाद में प्रकट होता है और उसकी एक शैली भी होती है। अनुवाद को कला मानने का मुख्य आधार मूल कृति की आत्मा को अनुवाद में उतारने के काम को एक कला बताया है।

अनुवाद को विज्ञान मानने वाले विद्वान इस पुस्तक में अस्पष्ट है, लेकिन कहते है कि अनुवाद एक ऐसी वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसमें अद्यतन कुछ निश्चित नियमों को मानकर चलना पड़ता है और अनुवादक को तटस्थ होकर, सत्यनिष्ठा के साथ, ईर्ष्या, द्वैष अथवा अंधभक्ति से बचकर अनुवाद करना होता है। अनुवाद को शिल्प (Craft) मानने के पक्ष में पीटर न्यूमार्क हैं। उनके अनुसार आज अनुवाद की सामग्री तथ्यात्मक, सूचनात्मक और तर्कपूर्ण है। विशेषकर पत्रकारिता, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र तथा विज्ञान के क्षेत्र में आज तत्काल अनुवाद की माँग बढ़ गयी है और अनुवाद को यांत्रिक तत्परता से करना पड़ रहा है। अतः अपने इसी तकनीकी चरित्र के कारण वह प्रायः एक शिल्प है। वहीं इयान फिनले के अनुसार अनुवाद शिल्प और कला दोनों ही है।

'अनुवाद के प्रकार' अध्याय में विषय वस्तु के रूप में अनुवाद के दो प्रकार 'साहित्यिक अनुवाद' और 'साहित्येतर अनुवाद' बताए हैं। साहित्यिक अनुवाद में काव्यानुवाद, नाटकानुवाद, कथा साहित्य का अनुवाद तथा गद्यरूपों में जीवनी, आत्मकथा, निबंध, आलोचना डायरी, रेखाचित्र संस्मरण आदि का अनुवाद किया जाता है। उनमें लेखक ने काव्यानुवाद पर प्रकाश डाला है, काव्यानुवाद करना एक कठिन कार्य है जिसमें मिथक, आलंकारिक भाषा, काव्यपरंपरा आदि का प्रयोग किया जाता है। जो यह काम एक अत्यंत संवेदनशील अनुवादक ही कर सकता है। भारतीय भाषाओं के काव्यों के अनुवाद के लिए रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा गीतांजली के अनुवाद में प्रयुक्त मुक्त छन्द का एक अच्छा नमूना कहा जाता है।

नाटकानुवाद में अभिनय एवं संवाद, सांस्कृतिक परिवेश, पात्र की भाषा शैली आदि पर भी लेखक ने विचार स्पष्ट किए है। कथासहित्य के अनुवाद में भी भाषा की समस्याएँ, पात्र नामों के उच्चारण एवं लक्ष्य भाषा में अनुलेखन से लेकर आचंलिक शब्द प्रयोगों के लिए समान शब्दों के प्रयोग पर समस्याएँ बताकर व्यावहारिक समाधान निकाला है। पात्र नामों के अनुलेखन में रूसी, फ्रेंच आदि भाषाओं से भारतीय भाषाओं में अनुवाद करते समय समस्याएँ उत्पन होती है। उदाहरण के लिए पुस्तक में रूसी में प्रत्येक नाम का लघु रूप स्पष्ट किया जो मूल से थोड़ा भिन्न होता है –

जैसे– न्यूरा– अन्ना का लघु रूप

सोन्या– सोफ्या का लघु रूप

मीषा– मिखाइल का लघु रूप

पहले नाम में कुछ अंश अतिरिक्त आत्मीयता एवं प्यार की भावना जुड़ी है जिसे भारतीय भाषाओं द्वारा सूचित करना कठिन होता है। कथा साहित्य में नदी, पहाड़, स्थान एवं व्यक्ति नामों के लिप्यंतरण और ध्वन्यानुकूलन की समस्याएँ इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

साहित्येतर अनुवाद में वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद, वाणिज्य अनुवाद, मानविकी विषयों के अनुवाद लोकप्रिय होते हैं। इनकी भाषा सरल एवं स्पष्ट होती हैं। शिक्षा के माध्यम में परिवर्तन के साथ–साथ सभी विकासशील देशों में इन विषयों के ग्रंथो के अनुवाद की आवश्यकता बढ़ गयी है। समाचार के शीर्षकों के अनुवाद में तथा वाक्यरचना में रोचकता, सरलता एवं बोधगम्यता के साथ भाषा की प्रकृति का ध्यान रखने की बात लेखक कहते हैं। साथ ही शीर्षकों के बारें में आम सुझाव भी दिया है कि अंग्रेजी शब्द से नकल न करते हुए स्वतन्त्र रूप से उचित एवं आकर्षक शीर्षक दिए जाए और वाक्यरचना में मूल के क्रम पर ध्यान न देकर लक्ष्य भाषा की स्वाभाविक वाक्यरचना को अपनाना चाहिए।

प्रशासनिक अनुवाद में प्रशासनिक शब्दावली की कठिनाई पर लेखक का मानना है कि अंग्रेजी के शब्द के लिए कभी–कभी भारतीय भाषाओं में एकाधिक शब्द मिलते हैं, जिनका प्रयोग प्रसंगानुसार किया जाना चाहिए। जैसे– Confidential –गोपनीय, अंतरंग, Interest– अभिरूचि, हित, स्वार्थ, ब्याज, वृद्धि आदि शब्द के अर्थ होते हैं जिनका प्रयोग उचित शब्दों का चयन कर प्रसंगानुरूप करना चाहिए।

'अनुवाद प्रक्रिया के तकनीकी पहलू' अध्याय में लेखक ने बताया कि स्रोत एवं लक्ष्य भाषाओं पर पर्याप्त अधिकार के लिए अनुवादक को दोनों भाषा का जानकार होना चाहिए। साथ ही अनुवादक को विषय का सम्यक ज्ञान भी होना आवश्यक है। वह विषय तकनीकी हो, वैज्ञानिक तथा साहित्यिक हो सकता है। लेकिन अनुवादक को तटस्थता के साथ मूल लेखक के प्रति पाठनिष्ठ रहते हुए अनुवाद करने की क्षमता होनी चाहिए। अनुवादक संपूर्ण स्रोत सामग्री को विषयगत और भाषागत दृष्टि से समझने के बाद उसका अनुवाद मूल जैसा करता है। जिस पर लेखक ने व्यावहारिक समाधान भी दिया है।

'यूरोप में अनुवाद सिद्धान्तो का विकास' अध्याय में लेखक ने बताया कि यूरोप में अनुवाद सिद्धान्तो का विकास किस तरह हुआ। यह प्रमुख रूप से बाइबिल तथा ग्रीक एवं लैटिन ग्रंथो के अनुवाद के संदर्भ में हुआ है। यूरोपीय देशों में विभिन्न विद्वानों ने अनुवाद के इतिहास के बारे में सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है, लेकिन उनमें प्रमुख अनुवाद विदों का परिचय इस प्रकार दिया है –

* **सेंट जेरोम**–रोम के प्रसिद्ध अनुवादक थे, जिन्होने बाइबिल का अनुवाद करने के साथ-साथ अनुवाद के सैद्धांतिक पक्ष पर भी विचार किया।

* **मार्टिन लूथर**–मार्टिन लूथर मध्य युग के प्रमुख चेतना संपन्न क्रांतिकारी थे जिन्होंने सन-1522 में लैटिन से जर्मन भाषा में बाइबिल का अनुवाद कर बहुत बड़ी क्रांति की और अनुवाद की बोधगम्यता पर बल दिया।

* **ड्राइडन**–अंग्रेजी भाषा में ड्राइडन ही पहले व्यक्ति है जिन्होंने अनुवाद को कला के रूप में मान्यता देते हुए अनुवाद में निश्चित सिद्धान्तों का पालन करने के लिए अनुवाद के तीन प्रकार–शब्दानुवाद (Metaphrase), भावानुवाद (Paraphrase) और अनुकरण (Imitation) को बताया।

* **एलेक्जेंडर पोप**–पोप के विचार ड्राइडन के विचारों से काफी साम्यता रखते हैं, उनके अनुसार कोई भी शाब्दिक अनुवाद मूल का उत्तम अनुवाद नहीं हो सकता और भावानुवाद में भी मूल के किसी तरह का परिवर्तन नहीं होना चाहिए।

थियोडर सेवेरी ने अपने ग्रंथ 'Art of Translation' में अनुवाद के बारे में लिखा –

1. अनुवाद मूल के शब्दों पर आधारित होना चाहिए।
2. अनुवाद में मूल की शैली प्रतिबिंबित होनी चाहिए।
3. अनुवाद मूल समसामायिक रचना जैसा होना चाहिए।
4. अनुवाद में मूल से कुछ भी घटाया या बढ़ाया नहीं जा सकता।

विभिन्न यूरोपीय विद्वानों के विचारों का प्रभाव अनुवाद के सिद्धान्त पर पड़ा है। इसी के रूप में अनुवाद के समकालीन सिद्धान्त, अनुवाद की समस्याओं के भाषावैज्ञानिक अध्ययन की उपज कहा गया है।

'अनुवाद की भाषावैज्ञानिक समस्याएँ–सैद्धांतिक रूपरेखा' अध्याय में लेखक ने अर्थपरक समस्याओं पर विचार किया है, जिनमें सामाजिक सांस्कृतिक समस्याएँ महत्त्वपूर्ण हैं। अनुवाद में अर्थ की सबसे बड़ी समस्यां सामाजिक-सांस्कृतिक तत्त्वो के अन्तरण में उत्पन्न होती है। मैलिनोव्स्की आधुनिक युग के प्रसिद्ध नृतत्त्वविज्ञानी है, जिन्होंने अनुवाद प्रक्रिया में शब्दों की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से जुड़ी समस्या पर गंभीरता से विचार किया है। उन्होंने 'साहचर्य का संदर्भ सिद्धान्त' को नया रूप दिया। उनके अनुसार अनुवाद की प्रमुख कठिनाई का कारण शब्दों के पीछे निहित सांस्कृतिक संदर्भ है। यह सांस्कृतिक संदर्भ उसके बोलने वालों के रीति-रिवाज, आचार-विचार आदि पर आधारित है। इस कारण मैलिनोव्स्की के अनुसार अनुवाद से मतलब "सांस्कृतिक संदर्भो का ऐक्य अथवा समतुल्यता" से है।

अनुवाद की शैलीपरक समस्या में लेखक कहते हैं कि भाषा शैली के सन्दर्भ में अनुवाद की शैलीगत कई सामान्य समस्याएँ आती है, जबकि प्रत्येक लेखक की अपनी अलग शैली होती है। जैसे- प्रेमचन्द, नेहरू या गांधी की रचनाओं के अनुवाद में भिन्न-भिन्न शैलियों को अपनाना पड़ेगा। अनुवाद में कैटफोर्ड ने भी शैली की समस्याएँ में स्वनीम स्तरीय, शब्द स्तरीय, रूप स्तरीय और वाक्य स्तरीय समस्याएँ बतायी हैं।

'अनुवाद की भाषावैज्ञानिक समस्याएँ'–एक अनुप्रयोग' अध्याय में लेखक ने अनुवाद के स्वरूप को स्पष्ट किया है जिसमें हिंदी और मलयालम भाषा के उदाहरण दिए गए है। अनुवाद में अर्थ की समस्या में आने वाले अभिधेय अर्थ से व्यंगार्थ अर्थ की समस्या को उठाया गया है। अनुवाद में कई स्थलों पर अभिधेयार्थ के साथ लक्ष्यार्थ और व्यंगार्थ को भी लक्ष्य पाठ में संप्रेषित करना पड़ता है। उसमें शब्दानुवाद की भी समस्या आती है जिनमें एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं। हिंदी 'रंग' शब्द के अनुवाद में 'रंग' शब्द के अनेक प्रयोग होते है, जिनमें से कुछ प्रयोग इस प्रकार दिए गए है–रंग पकड़ना, रंग देना, रंगीन का शब्दानुवाद अन्य भाषाओं में हो सकता है, परंतु अन्य प्रयोगों का शब्दानुवाद करने पर उनमें निहित व्यंगार्थ या ध्वनि नष्ट हो जाती हैं। जिसके लिए संदर्भ के अनुसार शब्द का चयन करने के लिए लेखक कहते है।

भारत में परिवार और उसके विविध रूप अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। 'रिश्ते-नाते' की शब्दावली के अनुवाद में लेखक बताते हैं कि इस तरह की शब्दावली में एक पूरी सामाजिक व्यवस्था होती है। केरल में मातृ-सत्तात्मक ढाँचे के कारण पहले सम्पति का अधिकारी भानजा या भानजी होती थी। वे अपने मामा के साथ रहते थे, लेकिन अब यह प्रथा बदल रही है, परन्तु विवाह अब भी मामा, फूफी आदि के पुत्रा-पुत्री से हो सकता है। इसी प्रकार हिंदी के 'दादा' 'बाबा' का संबोधन मलयालम में नहीं होते। हिंदी समाज में चाचा को अधिक आदर दिया जाता है, जिसमें 'नेहरू चाचा' का प्रयोग करते हैं, वैसे मलयालम में इसका अनुवाद करते समय 'नेहरू मामन' या 'नेहरू अम्मावन' का प्रयोग करना पड़ेगा क्योंकि मलयालम समाज 'मामा' को अधिक आदर देते हैं।

किसी भी भाषा में मुहावरें और लोकोक्तियों की भूमिका चाहे-अनचाहे रूप में अवश्य ही रहती है। उस भाषा में कहावतें-मुहावरें इत्यादि उसकी भाषिक सुन्दरता का प्रमाण होती हैं। डॉ. गोपीनाथन ने मुहावरों के अनुवाद की समस्याओं के सन्दर्भ में व्यावहारिक रूप के विश्लेषणपरक समाधान बताया है कि जहाँ लक्ष्य भाषा में स्रोतभाषा के मुहावरे के लिए समान मुहावरा मिलता हो उसे अनुवादक को प्रयोग करना चाहिए। साथ ही जहाँ पूर्ण रूप से समान मुहावरा न मिले वहाँ पर अर्थ की दृष्टि से लगभग समीप के मुहावरे से प्रतिस्थापन किया जाना चाहिए। लेखक ने लिप्यंतरण में उच्चारण से ज्यादा वर्तनी पर ध्यान दिया है। उदाहरण के लिए मलयालम में 'ट' का उच्चारण हिंदी के 'ड' जैसा होता है, परंतु लिप्यंतरण में भाषा के अनुसार भिन्नता देखने को मिलती है। कुछ शब्दों को हिंदी से मलयालम भाषा में भिन्न-भिन्न रूपों में लिखा जाता है-

1. हिंदी मलयालम,
2. थामस तोमस,
3. जान जीण,
4. कनाड़ा क्यानड़ा,
5. वाल्जाक बाल्साक।

लेखक ने ध्वन्यानुकुल की समस्या से निपटने के लिए व्यावहारिक समाधान के महत्त्व पर कुछ विश्लेषणात्मक पहलुओं को बताया है।

1. अनुवादक को आगत शब्दों का अन्तरण करते समय लक्ष्य भाषा में उस शब्द का जो स्वभाविक उचारण हो उसे अपनाने को कहा। जैसे–'High

School' शब्द को हिंदी में 'हाई स्कूल' और मलयालम में 'हैस्कूल' लिखना चाहिए।

2. यदि मूल शब्द के वास्तविक उच्चारण से भिन्न उच्चारण लक्ष्य भाषा में पहले से प्रचलित हो तो उसे उसी रूप में लेना चाहिए। यदि ऐसा कोई भी शब्द भाषा में पहले से प्रचालित हो तो उसे उसी रूप में लेना चाहिए।
3. लक्ष्य भाषा में एक से अधिक उच्चारण प्रचालित हों तो उनमें से अधिक प्रचलित उच्चारण को अनुवादक प्रयोग कर सकता है। जैसे, हिंदी में रेस्टोरेंट, रेस्तोरा, रेस्रा आदि प्रचलित है, उनमें से अनुवादक 'रेस्रा' को अपना सकता है।

संक्षेप में अनुवाद की उपर्युक्त अर्थपरक, सांस्कृतिक एवं शैलीपरक समस्याओं में आधुनिक भाषाविज्ञान इन समस्याओं के समाधान करने में अनुवादक की सहायता करता है जिसमें इस समस्या के समाधान के साथ उसके व्यावहारिक प्रयोग को भी स्पष्ट किया है।

निष्कर्ष रूप में लेखक ने इस पुस्तक में विभिन्न पाठों के माध्यम से अनुवाद सैद्धांतिकी के पक्ष को मजबूत बनाया है जिससे आधुनिक भारतीय विद्वानों को अनुवाद सिद्धान्त निर्माण में काफी प्रेरणा मिली जिससे अनुवाद को एक नई दिशा मिली है। आज इस पुस्तक का उपयोग शोध के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण रूप से किया जाता है। लेखक ने इस पुस्तक में अनुवाद में आने वाली अर्थपरक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा शैलीपरक समस्यांओं को सरल रूप में स्पष्ट करते हुए उसका व्यावहारिक समाधान भी स्पष्ट किया जिससे अनुवाद में सहायता होती है। लेखक दोनों भाषाओं हिंदी और मलयालम के जानकार होने के वजह से उन्होंने दोनों भाषा का तुलनात्मक अध्ययन कर के उदाहरण देकर 'अनुवाद के भाषा-वैज्ञानिक पक्ष' को मजबुत किया है। इस तरह पुस्तक की संपूर्ण पाठों को पढने के बाद यह कहा जा सकता है कि यह पुस्तक अनुवाद सैद्धांतिकी की प्रक्रिया और व्यावहारिकता को अधिक विस्तृत करने में सक्षम है।

❐❐❐